

ପ୍ରେମ ଯୁଗେ ଯୁଗେ

ପ୍ରେମେନ୍ଦ୍ର ମିତ୍ର

ସମ୍ପାଦିତ

ଦି ବୁକ ଏମ୍ପୋରିଅମ୍ ଲିମିଟେଡ

୨୨-୧ କନଓଭରଲିମ୍ ଷ୍ଟ୍ରୀଟ, କଲିକାତା ୬

প্রচ্ছদপট

সুধা রায়

প্রকাশক

প্রশান্তকুমার সিংহ

বুক এমপোরিয়াম লিমিটেড

২২।১ কন'ওঅলিস ক্লিট

কলিকাতা ৬

মুদ্রাকর

শক্তি দত্ত

দি প্রিণ্টিং হাউস

৭০ আপার সারকুলার রোড

কলিকাতা ৯

রক ও প্রচ্ছদপট মুদ্রণ

ভারত কটোটিং ইন্ডিয়া

৭২।১ কলেজ ক্লিট

কলিকাতা

প্রথম সংস্করণ

১৩৫২

আট টাকা

সূচীপত্র

| ভূমিকা | দ/০ | পৃষ্ঠা |
|-----------------------|-----|--------|
| কবি | | |
| প্রাকৃত পৈঙ্গল | ... | ১ |
| বিজ্ঞাপতি | ... | ৩ |
| বড়ু চণ্ডীদাস | ... | ১০ |
| চণ্ডীদাস | ... | ১৪ |
| রামী | ... | ২২ |
| কবি কঙ্কণ | ... | ২৩ |
| জ্ঞানদাস | ... | ২৪ |
| গোবিন্দ দাস | ... | ২৮ |
| নিতাই দাস | ... | ৩১ |
| প্রেমদাস | ... | ৩২ |
| বলরাম দাস | ... | ৩৩ |
| ত্রিনিবাস দাস | ... | ৩৫ |
| ঘনশ্যাম দাস | ... | ৩৭ |
| নবহরি দাস | ... | ৩৮ |
| বাসুদেব ঘোষ | ... | ৩৯ |
| মুরারি গুপ্ত | ... | ৪০ |
| রাধাবল্লভ | ... | ৪১ |
| রায়শেখর | ... | ৪২ |
| শেখর | ... | ৪৩ |
| লোচন দাস | ... | ৪৪ |
| বসন্ত রায় | ... | ৪৫ |
| নরোত্তম দাস | ... | ৪৬ |
| সৈয়দ মতুজা | ... | ৪৭ |

| কবি. | পৃষ্ঠা |
|------------------------|--------|
| আলাওল ... | ৪৮ |
| ভবানী দাস .. | ৪৯ |
| ময়নামতীর গান ... | ৫০ |
| মৈমনসিংহ গীতিকা ... | ৫১ |
| অজ্ঞাত কবি ... | ৫১ |
| নয়ানচাঁদ ঘোষ ... | ৫১ |
| দ্বিজ ঈশান ... | ৫২ |
| অজ্ঞাত কবি ... | ৫৩ |
| চন্দ্রাবতী ... | ৫৬ |
| শ্রীনাথ বানিয়া ... | ৫৬ |
| চাঁদ কাজি ... | ৫৮ |
| বংশীবদন ... | ৫৯ |
| রাধামোহন ঠাকুর ... | ৬০ |
| ভারতচন্দ্র ... | ৬১ |
| রামপ্রসাদ .. | ৬৩ |
| বাউল ... | ৬৪ |
| অজ্ঞাত গ্রাম্য কবি ... | ৬৭ |
| রত্নিরাম ... | ৭১ |
| জয়নারায়ণ সেন ... | ৭৩ |
| আনন্দময়ী ... | ৭৪ |
| নিখুবাবু ... | ৭৫ |
| কালী মির্জা .. | ৭৬ |
| রাম বসু ... | ৭৭ |
| মধুসূদন ... | ৭৯ |
| হরু ঠাকুর ... | ৮০ |
| দাশরথি রায় ... | ৮১ |
| ঈশ্বর কথক ... | ৮২ |
| ঈশ্বর গুপ্ত ... | ৮৩ |
| গোপাল উড়ে ... | ৮৫ |

| କବି | ପୃଷ୍ଠା |
|--------------------------|--------|
| ମାହିକେଳ ମଧୁସୂଦନ | |
| ବୃଥା | ୮୬ |
| ହେମଚନ୍ଦ୍ର | |
| ସ୍ମରଣ ପୂଜା | ୮୮ |
| ବଳଦେବ ପାଲିତ | |
| ପରୋଧର | ୮୯ |
| ବସନ୍ତ | ୯୦ |
| ବନ୍ଧିମଚନ୍ଦ୍ର | ୯୨ |
| ନବୀନଚନ୍ଦ୍ର ସେନ | |
| ଶ୍ରେୟର ହୁଏ | ୯୩ |
| ବିହାରୀଲାଲ ଦାସ | |
| ସ୍ମୃତି | ୯୪ |
| ସୁରେନ୍ଦ୍ରନାଥ ମଜୁମଦାର | |
| ନାରୀ-ସ୍ମୃତି | ୯୫ |
| ଗିରିଶ ଘୋଷ | ୯୬ |
| ଜ୍ୟୋତିରିନ୍ଦ୍ରନାଥ ଠାକୁର | |
| ସ୍ବର୍ଗକୁମାରୀ ଦେବୀ | |
| ମିଳନ | ୯୯ |
| ଅଗ୍ନିନୀକୁମାର ଦତ୍ତ | ୧୦୦ |
| ରାଜକୃଷ୍ଣ ରାୟ | ୧୦୧ |
| ଦେବେନ୍ଦ୍ରନାଥ ସେନ | |
| ସ୍ବଭାବ-ହୃନ୍ଦରୀ | ୧୦୨ |
| ମଧୀ | ୧୦୨ |
| ଗିରିନ୍ଦ୍ରମୋହିନୀ ଦାସୀ | |
| ସୁଧା ନା ଗରଳ ? | ୧୦୫ |
| ଗଗନ ହରକରା | |
| ମନେର ସାହସେର ସନ୍ଧାନେ .. | ୧୦୬ |
| ଅକ୍ଷୟକୁମାର ବଡ଼ାଲ | |
| ଆହ୍ଲାନ୍ | ୧୦୮ |

| কবি | পৃষ্ঠা |
|------------------------|--------|
| রবীন্দ্রনাথ | |
| বন্দী ... | ১১০ |
| বর্ষার দিনে . | ১১০ |
| স্বপ্ন | ১১২ |
| সোজাসুজি ... | ১১৪ |
| লীলাসজিনী ... | ১১৬ |
| নির্ভয় ... | ১২০ |
| হঠাৎ-দেখা . . | ১২১ |
| তর্ক ... | ১২৪ |
| বরদাচরণ মিত্র | |
| রূপ ... | ১২৮ |
| দ্বিজেন্দ্রলাল রায় | |
| প্রিয়ের প্রতীক্ষা ... | ১৩০ |
| মানিকুমারী বসু | |
| একা ... | ১৩১ |
| কামিনী রায় | |
| চক্ৰাপিণ্ডের জাগরণ ... | ১৩৩ |
| শশকমোহন সেন | |
| মধু ব্রত ... | ১৩৬ |
| গোবিন্দচন্দ্র দাস | |
| আমার ভালোবাসা ... | ১৩৭ |
| রমণীর মন ... | ১৩৯ |
| চিত্তরঞ্জন দাস | |
| তুমি ও আমি ... | ১৪০ |
| প্রিয়স্বদা দেবী | |
| খেলা . | ১৪১ |
| প্রমথ চৌধুরী | |
| প্রিয়া ... | ১৪২ |
| একদিন ... | ১৪২ |

| কবি | পৃষ্ঠা |
|---------------------------|--------|
| অতুলপ্রসাদ সেন | |
| বিনিম্ব | ১৪৪ |
| জগদীন্দ্রনাথ রায় | |
| ব্যথা .. . | ১৪৫ |
| বলেন্দ্রনাথ ঠাকুর | |
| গৃহলক্ষ্মী | ১৪৬ |
| চুলবাঁধা | ১৪৬ |
| সতীশচন্দ্র রায় . | |
| দেব-নিঃস্বসিত' | ১৪৮ |
| সত্যেন্দ্রনাথ দত্ত | |
| কাজরী | ১৪৯ |
| যক্ষের নিবেদন .. . | ১৫০ |
| কিশোরী | ১৫২ |
| সহজিয়া | ১৫৪ |
| করণানিধান বন্দ্যোপাধ্যায় | |
| মর্মর-স্বপ্ন | ১৫৬ |
| হুমকা-রাগী .. . | ১৬০ |
| যতীন্দ্রমোহন বাগচী | |
| দ্বিগ্রহরে | ১৬৫ |
| হাফিজের স্বপ্ন | ১৬৬ |
| কুমুদরঞ্জন মল্লিক* | |
| মাঘে | ১৬৮ |
| প্রথম কথা | ১৭০ |
| মোহিতলাল মজুমদার | |
| দিনশেষে | ১৭১ |
| চৈত্র-রাত্রে | ১৭৩ |
| কালিদাস রায় | |
| রেবা-রোধসি | ১৭৪ |
| রাগী | ১৭৫ |

| কবি | পৃষ্ঠা |
|-------------------------------|--------|
| যতীন্দ্রনাথ সেনগুপ্ত | ... |
| নিবাসন ... | ১৭৭ |
| চোখের জল ... | ১৭৯ |
| দ্বিজেন্দ্রনারায়ণ বাগচী | |
| কাব্য ও ভূমি ... | ১৮১ |
| ভূমি আমি ... | ১৮১ |
| হেমেন্দ্রকুমার রায় | |
| আবেদন ... | ১৮৩ |
| জীবনে ... | ১৮৪ |
| কিরণধন চট্টোপাধ্যায় | |
| সোনার কাঠি ... | ১৮৬ |
| গিরিজাকুমার বসু | |
| আত্মান ... | ১৮৭ |
| সুরেন্দ্রনাথ মৈত্র | |
| যুড়ি ... | ১৮৮ |
| প্রেম ... | ১৮৯ |
| নজরুল ইসলাম | |
| চৈতী হাওয়া ... | ১৯১ |
| অ-নামিকা ... | ১৯৫ |
| ফান্তনী ... | ১৯৯ |
| গান ... | ২০১ |
| এ মোর অহংকার ... | ২০২ |
| সুধীরকুমার চৌধুরী | |
| পথধূলি... ... | ২০৬ |
| সুরেশচন্দ্র চক্রবর্তী | |
| রমণী ... | ২০৯ |
| সাবিত্রীপ্রসন্ন চট্টোপাধ্যায় | |
| মনের মাধুরী ... | ২১২ |
| তম্বুদেহ ... | ২১৩ |

| কবি | পৃষ্ঠা |
|----------------------------|--------|
| নরেন্দ্র দেব | |
| চিরস্তনী ... | ২১৫ |
| রাধারাণী দেবী | |
| ' অহুচ্চারিত ... | ২২০ |
| স্বহৃদের প্রেম ... | ২২০ |
| অপরাজিতা দেবী | |
| মুখরা ... | ২২৩ |
| বাদল-বিলাস ... | ২২৪ |
| দিলীপকুমার রায় | |
| প্রম (উদ্ধবের প্রতি) ... | ২২৭ |
| প্রমথ বিশী | |
| বসন্তসেনা ... | ২২৯ |
| চার্বাক ... | ২৩১ |
| সজনীকান্ত দাশ | |
| বিলম্বিনী ... | ২৩৫ |
| ভ্রাস্তি ... | ২৩৭ |
| জীবনানন্দ দাশ | |
| বনলতা সেন ... | ২৪১ |
| সহজ ... | ২৪২ |
| হেমচন্দ্র বাগচী | |
| গোপন ... | ২৪৪ |
| সাঁওতালি বালা ... | ২৪৪ |
| বনফুল | |
| আসিব ফিরিয়া ... | ২৪৬ |
| নিষ্ঠাহীন ... | ২৪৭ |
| অমিয় চক্রবর্তী | |
| বিষাক্ষিচে ... | ২৪০ |
| দিনাভরণ ... | ২৪৩ |

| কবি | পৃষ্ঠা |
|--|--------|
| অচিন্ত্যকুমার সেনগুপ্ত | |
| প্রেম ... | ২৫৫ |
| অষ্টাদশী ... | ২৫৫ |
| অন্নদাশঙ্কর রায় | |
| বন্দনা ... | ২৫৭ |
| সমাপন ... | ২৫৮ |
| প্রেমেন্দ্র মিত্র | |
| কথা ... | ২৬০ |
| ছাদে ষেওনা'ক ... | ২৬১ |
| অজিত দত্ত | |
| ন খলু ন খলু বাণঃ ... | ২৬৩ |
| মালতী ঘুমায় ... | ২৬৪ |
| বুদ্ধদেব বসু | |
| এ-ই সব ... | ২৬৭ |
| সাগর-দোলা ... | ২৬৭ |
| মণীশ ঘটক | |
| দেবী ত নহ ... | ২৭০ |
| হুমায়ুন কবির | |
| সাধী ... | ২৭১ |
| তৃপ্তি ... | ২৭৩ |
| শিবরাম চক্রবর্তী | |
| বায়না ... | ২৭৪ |
| তুমি ... | ২৭৪ |
| জসীমউদ্দীন | |
| কাল সে আসিবে ... | ২৭৬ |
| যারে আঘাত হানলি রে ... | ২৭৭ |
| গোলাম মোস্তফা | |
| ‘তোমায়ে যে আমি করেছি রূপসী—কবির দৃষ্টি দিয়া !’ ... | ২৭৯ |
| প্রভাতমোহন বন্দ্যোপাধ্যায় | |
| ফাগুনে বাদল ... | ২৮৩ |

| কবি | পৃষ্ঠা |
|--------------------------|--------|
| বন্দে আলী | |
| তোমার মনের ভেঙেছে ঘুম | ২৮৬ |
| মহীউদ্দীন | |
| পৃথিবীর গান | ২৮৮ |
| সুধীন্দ্রনাথ দত্ত | |
| মহানিশা | ২৯১ |
| দুঃসময় | ২৯২ |
| বিষ্ণু দে | |
| প্রেমের কবিতা | ২৯৫ |
| নয় খেয়াল | ২৯৬ |
| সুকুমার সরকার | |
| সে শুধু চাহিয়াছিল | ২৯৮ |
| অজয়কুমার ভট্টাচার্য | |
| এই তো আমার জয় | ৩০০ |
| সঞ্জয় ভট্টাচার্য | |
| প্রতীক্ষা | ৩০১ |
| মেঘ | ৩০২ |
| বিবেকানন্দ মুখোপাধ্যায় | |
| বরষা কাটিয়া গেল | ৩০৩ |
| নন্দগোপাল সেনগুপ্ত | |
| মেয়েটি | ৩০৫ |
| বিমলাপ্রসাদ মুখোপাধ্যায় | |
| সত্য | ৩০৬ |
| অশোকবিজয় রাহা | |
| বিশ্বরণ | ৩০৮ |
| জগদীশ ভট্টাচার্য | |
| তুমি ভালোবাসো নীল | ৩০৯ |
| জ্যোতির্ময়ী রায়চৌধুরী | |
| আহত গোলাপ | ৩১০ |

| কবি | পৃষ্ঠা |
|------------------------------|--------|
| দিনেশ দাস | |
| সে | ৩১১ |
| সবুজ বীণ | ৩১২ |
| সুভো ঠাকুর | |
| নারী | ৩১৩ |
| আশু চট্টোপাধ্যায় | |
| রাজি খুব ছোট মনে হয় | ৩১৪ |
| জ্যোতিরিন্দ্র মৈত্র | |
| রথযাত্রা | ৩১৬ |
| হরপ্রসাদ মিত্র | |
| প্রেম | ৩১৮ |
| সমর সেন | |
| স্বাভি | ৩১৯ |
| মদন ভাস্কর প্রার্থনা | ৩১৯ |
| বিমলচন্দ্র ঘোষ | |
| মহাশ্বেতা | ৩২০ |
| শাস্ত্রী | ৩২২ |
| অরুণ মিত্র | |
| উত্তর মেঘ | ৩২৫ |
| বীরেন্দ্র মল্লিক | |
| পরী | ৩২৬ |
| অমল দত্ত | |
| ভূমি | ৩২৮ |
| গোবিন্দ চক্রবর্তী | |
| জ্বর | ৩৩০ |
| করুণাময় বসু | |
| সেই মুখ হ'ল না বদল | ৩৩৩ |
| কামাক্ষীপ্রসাদ চট্টোপাধ্যায় | |
| বাজার | ৩৩৫ |
| প্রথম পৃথিবীর পর | ৩৩৬ |

| কবি | পৃষ্ঠা |
|--------------------------------------|--------|
| দেবীপ্রসাদ চট্টোপাধ্যায় | |
| প্রেমিক | ৩৩৮ |
| আহুসান হাবিব | |
| প্রেমের কবিতা | ৩৪০ |
| মণীন্দ্র রায় | |
| কোনো-এক বিশেষ দিনের প্রার্থনা | ৩৪২ |
| কিরণশঙ্কর সেনগুপ্ত | |
| অনন্ত ভিজ্ঞাসা | ৩৪৩ |
| আবুল হোসেন | |
| শেহদীর অস্ত্র কবিতা | ৩৪৫ |
| গোলাম কুদ্দুস | |
| অস্থি-মাংস-সংবাদ | ৩৪৭ |
| গোপাল ভৌমিক | |
| মুহূর্ত-বিলাস | ৩৪৯ |
| উমা দেবী | |
| মুখরা | ৩৫১ |
| ফররুখ আহমদ | |
| প্রতীক্ষমানা | ৩৫৬ |
| বীরেন্দ্র চট্টোপাধ্যায় | |
| অমর আশা | ৩৫৯ |
| সানাউল হক | |
| অনাগত | ৩৬০ |
| শুদ্ধসত্ত্ব বসু | |
| একটি রোমান্টিক কবিতা | ৩৬২ |
| শান্তিরঞ্জন বন্দ্যোপাধ্যায় | |
| চোখ | ৩৬৩ |
| রামেন্দ্র দেশমুখ্য | |
| হৃদয় | ৩৬৪ |
| মৃণালকান্তি দাস | |
| প্রেমিকের প্রার্থনা | ৩৬৬ |
| কল্যাণী মুখোপাধ্যায় | |
| পরাজিতা | ৩৬৭ |

ভূমিকা

‘প্রেম যুগে যুগে’ বাংলা সাহিত্যের আদিম যুগ হইতে অতি আধুনিক যুগ পর্যন্ত রচিত শ্রেষ্ঠ প্রেম-কবিতার একখানি উপাদেয় সংকলন গ্রন্থ। ইহাতে প্রাকৃত-পৈঙ্গল ও বড়ু চণ্ডীদাস হইতে গোপাল ভৌমিক ও কিরণশংকর সেনগুপ্ত প্রমুখ তরুণ কবিদের রচনা ষথ্যযথভাবে বিস্তৃত হইয়াছে। এই সংকলনগ্রন্থে প্রেমের মৌলিক প্রেরণার অভিন্নতা ও ইহার প্রকাশভঙ্গি ও ভাবধারার অফুরন্ত বৈচিত্র্য যুগপৎ উদাহৃত হইয়াছে। প্রেমের এই শোভাযাত্রা সমারোহে মহাভাবস্বরূপিণী রাধিকা হইতে নাটোরের বনলতা সেন ও কলিকাতার মণিমালা রায় পর্যন্ত স্থান গ্রহণ করিয়াছে। ভাব-তন্ময়তা ও ঐশী সাধনা হইতে নিছক খেয়াল ও দেহলোলুপতা—প্রেমের সর্ববিধ স্তর ও প্রকারভেদ এই সংগ্রহে রূপায়িত হইয়াছে। পড়িতে পড়িতে প্রেমের অসাধারণ বৈচিত্র্য ও ব্যাপকতা, ও সমস্ত নিখিল ও মানস অভিজ্ঞতার বিরাট পরিধিকে ইহার কেন্দ্রাকর্ষণে নিয়মিত করিবার শক্তির পরিচয় লাভ করিয়া বিশ্বয় ও আনন্দরসে মন পরিপ্লুত হইয়া উঠে। মনে হয় যেন প্রেমের অগ্রগতি ভাব-নিবিড়তা হইতে পরিধিবিস্তারের পথ ধরিয়া চলিয়াছে। আধুনিক মন আর প্রেমের সহজ, সরল, মর্মভেদী অনাড়ম্বরতার আবেদনে সাড়া দিতে চাহে না : ইহার রহস্যময় অল্পভূতিকে নানা জটিল ভাবগ্রন্থির মধ্য দিয়া, নানা ছন্দবেশ বনবীথির স্বল্পালোকিত অবসর পথে, জীবনের চুহেহু প্রাঙ্গণসকলতার আবরণজালের অন্তরালে অহুসরণ করাতেই ইহা বৃত্তি অল্পভব করে। প্রেমের এই ভাবপ্রবাহ যুগ-পরিবর্তনের চিহ্ন বক্ষে ধারণ করিয়া অনন্তকাল ধরিয়া মহাসমুদ্রসঙ্গমে চলিয়াছে। ইহার বাঁকে বাঁকে কত নবীন দৃষ্টির সৌন্দর্য, কত নব-প্রফুল্লিত ফুলের সুরভিত বিকাশ, হৃদয়-চাঞ্চল্যের কত নূতন স্পন্দন, আত্মহুত্বের কত অচিন্তিতপূর্ব গভীরতা। প্রেম কবিতার ক্ষুদ্র শিশির বিন্দুতে মানব-হৃদয়ের অপরিমেয় রহস্য প্রতিবিম্বিত হইয়াছে। এই সংকলন গ্রন্থটি বাঙালীর যুগে যুগে পরিবর্তনশীল মানস পটভূমিকার পরিচয় বহন করিয়া চলিয়াছে ও আমাদিগকে একেবারে অতি আধুনিক যুগের সীমারেখায় পৌছাইয়া দিয়াছে। নিছক কাব্যসৌন্দর্য ছাড়াও প্রাণের নিগূঢ় আকৃতির পরিচয়পত্র হিসাবে ইহার অতিরিক্ত সার্থকতা।

পরিশেষে, এই সংকলন-গ্রন্থে কবিতাগুলির সৃষ্টি নির্বাচনের ক্ষমতা সম্পাদক বিশেষভাবে প্রশংসার্পিত। তিনি বাংলার কাব্যক্ষেত্রে বিচরণ করিয়া যে ফুলগুলি আহরণ করিয়াছেন ও তাহাদের দ্বারা যে মাল্য রচনা করিয়াছেন, উভয়ই অনবদ্য সৌন্দর্যের দাবি করিতে পারে। এইরূপ একটি সৃষ্টি-নির্বাচিত কবিতা-সমষ্টি প্রকাশ করিয়া তিনি বাংলা-সাহিত্যের একটি বহুকাল হইতে অহুত অভাব মোচন করিয়াছেন। গ্রন্থের ছাপা ও বাঁধাই-এর পারিপাট্য প্রশংসনীয় ও প্রকাশকের মার্জিত রুচির পরিচায়ক। আমি এই গ্রন্থের বহুল প্রচার কামনা করি।

শ্রী সত্যেন্দ্রনাথ বসু

৩০ মে ১৯, ১৯৪৮

প্রাকৃত দৈহিক

সো মহ কস্তা
দূর দিগন্তা ।
পাউস আএ
ঢেউ চলা এ ॥

সেই আমার কান্ত এখন দূর দিগন্তে ; রুষ্টি আসে, চিত্ত বিচলিত

* *

কাঅ হুউ দুব্বল তেজ্জি গরাস
থণে থণে জানিঅ অচ্ছ নিশাস ।
কুহুরব তার দুব্বল বসন্ত
নিদ্রা কাম কি নিদ্রা কস্ত ॥

শরীর দুর্বল হ'ল, আহায়ে আর রুচি নেই, ক্ষণে ক্ষণে শুধু দীর্ঘনিশ্বাস পড়ছে ।
কোকিলের ডাক বড় তীব্র, বসন্তও দুব্বল । কান্ত না কাম, কে যে নির্দয় জানি না ।

* *

ভরুণ ভরণি তবই ধরণি
পবন বহু খরা
লগ গহি জল বড় মরু-খল ।
জগ-জীবন-হরা ।
দিসই বলই হিঅঅ দুলাই
হমি একলি বহু
ঘর গহি পিঅ মুণ হি পহিঅ
মন ঈছই কহ ॥

হুঃপ্রেম যুগে যুগে

তরুণ সূর্যের তাপে পৃথিবী তপ্ত, বায়ুর বেগ প্রচণ্ড, কাছে কোথাও জল নেই, শুধু
নিস্ত্রাণ নির্জন বিশাল মরু প্রান্তর। আমি একাকিনী বধূ, দিগন্তের পানে চেয়ে আমার
বুক দুলে ওঠে। ঘরে প্রিয় নেই, হে পথিক শোন, তোমায় মনের কথা বলি।

ফুল্লিঅ কেনু

চন্দ তহ পহলিঅ

মঞ্জরি তেজ্জই চুআ।

দকখিন বাঅ সৌঅ ভই পবহই

কম্প বিওহিগী হিআ ॥

কেঅলি-ধুলি সব্ব দিস পসরিঅ

পীঅর সব্বউ ভাসে।

আই বসন্ত কাই সহি করিহই

কন্ত ন থকই পাসে ॥

কিংকুক ফুটেছে, তাতে চন্দ্রালোক পড়েছে, আমার মঞ্জরি ঝরে পড়ছে। ঠাণ্ডা
দক্ষিণ বাতাস বইছে, বিরহিণীর হৃদয় তাতে কেঁপে উঠছে। কেয়াফুলের চূর্ণ পরাগ সকল
দিকে ছড়িয়ে পড়ে সব হলুদ রঙে ছুপিয়ে দিয়েছে। বসন্ত এল, কি বে করি সখি, কান্ত
বে কাছে থাকে না!



বিদ্যাপতি

এ সখি হামারি দুখের নাহিক ওর ।
এ ভরা ভাদর মাহ ভাদর
শূন্য মন্দির মোর ॥
বাঞ্ছনা ঘন গরজন্তি সন্ততি
ভুবন ভরি বরখস্তিয়া ।
কাস্ত পাহন কাম দারুণ
সঘনে খর শর হস্তিয়া ॥
কুশি শত শত পাত মোদিত
ময়ূর নাচত মাতিয়া ।
মন্ত দাদুরী ডাকে ডাহকী
কমটি যাওত ছাতিয়া ॥
তিমির দিগ্‌ ভরি ঘোরা যামিনী
অখির বিজুরিক পাতিয়া ।
বিদ্যাপতি কহে কৈছে গোঙায়বি
হরি বিনে দিন রাতিয়া ॥

* *

আজু রজনী হাম্ ভাগে পোহায়ন
পেখনু পিয়া মুখ চন্দা ।
জীবন যৌবন সকল করি মানন
দশদিশ ভেল নিরদন্দা ॥
আজু মরু গেহ গেহ করি মানন
আজু মরু দেহ ভেল দেহা ।
আজু বিহি মোহে অন্নকুল হোয়ল
চুঠল সবছ সন্দেহা ॥

প্রেম যুগে যুগে

সোই কোকিল অব্ লাখ ডাকউ
লাখ উদয় কর চন্দা ।
পাঁচবাণ অব্ লাখবাণ হউ
মলয় পবন বহু মন্দা ॥
অব্ মঝ যবহু পিয়া সঙ্গ হোয়ত
ভবহি মানব নিজ দেহা ।
বিদ্যাপতি কহ অলপভাগী নহ
ধনি ধনি তুয়া নব লেহা ॥

* *

সখি, কি পুছসি অনুভব মোয় ।
সোই পিরিতি অনুরাগ বাখানিতে
ভিলে ভিলে নৌতুন হোয় ॥
জনম অবধি হম্ রূপ নেহারনু
নয়ন না তিরপিত ভেল ।
সোই মধুর বোল শ্রবণহি শুননু
শ্রুতি পথে পরশ না গেল ॥
কত মধু যামিনী রভসে গোড়াইনু
না বুঝনু কৈছনু কেলি ।
লাখ লাখ যুগ হিয়ে হিয়ে রাখনু
তবু হিয়া জুড়ন না গেলি ॥
কত কত রসিক জন রসে অনুমগন
অনুভাব কাছ না পেখ ।
বিদ্যাপতি কহে প্রাণ জুড়াইতে
লাখে না মিলন এক ॥

* *

প্রেম যুগে যুগে

সজনি ভাল করি পেখন না ভেল ।
 মেঘমালা সঞে তড়িতলতা জন্ম
 হৃদয়ে শেল দেই গেল ॥
 আধ আঁচর খসি আধ বদনে হাসি
 আধই নয়ান তরঙ্গ ।
 আধ উরজ হেরি আধ আঁচর ভরি
 তবু ধরি দগধে অনঙ্গ ॥
 একে তনু গোরা কনক কটোরা
 অতনু কাঁচলা উপাম ।
 হারে হরল মন জন্ম বুঝি এঁছন
 পাশ পসারল কাম ॥
 দশন মুকুতা পাঁতি অধর মিলায়ত
 মৃদু মৃদু কহতহি ভাষা ।
 বিভাপতি কহ অতয়ে সে দুখ রহ
 হেরি হেরি না পুরল আশা ॥

* *

রয়ণি কাজর বম ভীম ভুজঙ্গম
 কুলিস পর এ দূরবার ।
 গরজ তরঙ্গ মন রোসে বরিস ঘন
 সংসঅ পড় অভিসার ॥
 সজ্জনী বচন ছড়ইতে মোহি লাজ ।
 জো হো এত সে হো অওবরু সবে হমে অঙ্গিকর
 সাহস মন দেল আজ ॥
 আপন অহিত লেখ কহইতে পরতেখ
 হৃদয়ক ন পাইঅ ওল ।

ସ୍ଥାନେ ସ୍ଥାନେ

চাঁদ হরিণ বহু
পেম পরাভব খোল ॥
চরণ বেখিল কণি হিত কএ মানিল ধনি—
নেপুর ন করএ রোল ।
নুমুখি পুঙ্খঞো তোহি সরূপ কহসি মোহি
সিনেহ কতদূর ওল ॥
ঠামহি রহিঅ ঘুমি পরসে চিহ্নিঅ ভুমি
দিগ মগ উপজু সন্দেহ ।
হরি হরি শিব শিব তাবে জাইহ জিব
জাবে ন উপজু সিনেহ ॥
ভনই বিদ্যাপতি সুনহ সূচেতনি
গমন ন করহ বিলম্বে ।
রাজা শিবসিংহ রূপ নরাএন
সকল-কলা-অবলম্বে ॥

* *

পিয়া যব আঙব এ মনু গেহে ।
 মঙ্গল যতছঁ করব নিজ দেহে ॥
 কনক কুন্ত করি কুচ-যুগ রাখি ।
 দরপণ ধরব কাজর দেই আঁখি ॥
 বেদী বনাব হাম আপন অঙ্গমে ।
 ঝাড়ু করব তাহে চিকুর বিছান্ ॥
 আলিপনা দেওব মোতিম হার ।
 মঙ্গল-কলস করব কুচ-ভার ॥
 কদলি রোপব হাম গুরুদা নিভয় ।
 আত্ম-পদব তাহে কিঙ্কিণী নুবন্ ॥

প্রথম যুগে যুগে

দিশি দিশি আনব কামিনী-ঠাট ।
চৌদিকে পসারব চাঁদক হাট ॥
বিভাপতি কহ—পূরব আশ ।
দুই এক পলকে মিলব তুয়া পাশ ॥

* *

স্নেহ চন্দন উরে হার ন দেলা ।
সো অব নদী গিরি আঁতর ভেলা ॥
পিয়াক গরবে হাম কাছক না গণলা ।
সো পিয়া বিনা মোহে কো কি না কহলা ॥
বড় দুখ রহল মরমে ।
পিয়া বিছুরল যদি কি আর জীবনে ॥
পূরব জনমে বিহি নিখিল ভরমে ।
পিয়াক দোখ নহি যে ছিল করমে ॥
আন অমুরাগে পিয়া আন দেশে গেলা ।
পিয়া বিনে পাঁজরে ঝাঝর ভেলা ॥
ভনয়ে বিভাপতি—শুন বরনারি ।
ধৈরজ ধর চিতে, মিলব মুরারি ॥

* *

কামিনী করএ সিনানে ।
হেরতঁহি হৃদয়ে হানল পাঁচ বাণে ॥
চিকুরে গলয়ে জলধারা ।
জনি মুখ-শশী-ভরে রোঅএ অঙ্কারা ॥
ভিভল বসন তণু লাগু ।
মুনিহক মানস মনোভাব জাগু ॥

মুগ্ধ-মুগ্ধ মুগ্ধ-মুগ্ধ

কুচ-মুগ্ধ চারু চকেবা ।
নিজ-কুলে আনি মিলায়ল দেবা ॥
তৈঞে শঙ্ক ভুজ-পাশে ।
বাঙ্কি ধরল জন্ম উড়ব অকাশে ॥
কবি বিতাপতি গাওয়ে ।
গুণবতী নারী রসিক জন পাওয়ে ॥

* *

কবরী-ভয়ে চামরী গিরি কন্দরে
মুখ-ভয়ে চান্দ আকাশে ।
হরিণি নয়ন-ভয়ে স্বর-ভয়ে কোকিল
গতি-ভয়ে গজ বন-বাসে ॥
সুন্দরি, কাহে মোহে সজ্জাষি না যাসি ।
তুয়া ডরে ইহ সব দূরহি পলায়ল
তুহুঁ পুন কাহে ডরাসি ॥
কুচ-ভয়ে কমল কোরক জলে মুদি রহ
ঘট পরবেশে ছতাসে ।
দাড়িম শ্রীফল গগনে বাস কর
শঙ্কু গরল করু ঐসে ॥
ভুজ-ভয়ে কনক মুণাল পুঙ্কে রহ
কর-ভয়ে কিশলয় কাঁপে ।
বিতাপতি কহ— কত কত ঐছন
করহ দমন পরতাপে ॥

* *

গেলি কামিনী গজহ-গামিনী
বিহসি পালটি নেহারি ।

প্রেম যুগে যুগে

ইন্দ্রজালক কুসুম-সায়ক
 কুহকি ভেলি বরনারী ॥
 জোড়ি ভুজুগ মোড়ি বেড়ল
 ততহি বন্নান সুছন্দ ।
 দাম-চম্পকে কাম পূজল
 যৈছে শারদ-চন্দ ॥
 উরহি অঞ্চল ঝাঁপি চঞ্চল
 আধ পয়োধর হের ।
 পবন-পরাভবে শারদ ঘন জহু
 বেকত করল সুরেক ॥
 পুনহি দরশনে জীবন জুড়ায়ব
 টুটব বিরহক ওর ।
 চরণে যাবক হৃদয়-পাবক
 দহই সব অঙ্গ মোর ॥
 ভনয়ে বিছাপতি— শুনহ যদুপতি
 চিত থির নাহি হোয় ।
 সে যে রমণী পরম গুণমণি
 পুন কি মিলব তোয় ॥



বড়ু চণ্ডীদাস

চারিদিকে তরু পুষ্প মুকুলিল
বহে বসন্তের বাএ ।
আশ্ব ডালে বসি কুইলি কুইলে
লাগে বিষ-বাণ ঘাএ ॥
চান্দ সুরজের ভেদ না জানো
চন্দন শরীর তাএ ।
কাহ্নু বিনি মোর এবেঁ একখন
এক কলি যুগ ভাএ ॥
বাঁশীর শব্দেঁ প্রাণ হরিঅঁ
কাহ্নু গেলা কোন দিশে ।
তা বিনি সকল অন্তর দহে
যেন বেআপিল বিধে ॥

* *

আসাত্ মাসে নব মেঘ গরজএ ।
মদন কদনে মোর নয়ন বুরএ ॥
পাখী জাতী নহোঁ বড়ান্নি উড়ী জাওঁ তথা ।
মোর প্রাণনাথ কাহ্নাঞিঁ বসে যথঁ ॥
কেমনে বঞ্চিবোঁ রে বারিষা চারি মাস ।
এ ভর যৌবনে কাহ্নু করিলে নিরাস ॥
প্রাবণ মাসে ঘন ঘন বরিষে ।
সেজাত স্মৃতিঅঁ একসরী নিন্দ না আইসে ॥

কুশুম্ভম যুগে যুগে

কত না সহিব রে কুশুম্ভমশরজালা ।
হেনকালে বড়ারি কাহ্ন সমে কর মেলা ॥
ভাদর মাসে আহোনিশি আন্ধকারে ।
শিখি ভেক ডাহক করে কোলাহলে ॥
ভাত না দেখিবোঁ যবে কাহ্নাঙ্ঘ্রি'র মুখ ।
চিস্তিতে চিস্তিতে মোর ফুট জায়াবে বুক ॥
আশিন মাসের শেষে নিবড়ে বারিষী ।
মেঘ বহিঁ আঁ গেলে' ফুটিবেক কাশী ॥
তবে' কাহ্ন বিনি হৈব নিফল জীবন ।
গাইল বড়ু চণ্ডীদাস বাসলীগণ ॥

* *

নীল জলদ সম কুণ্ডলভারা ।
বেকত বিজুলি শোভে চম্পকমালা ॥
শিশত শোভএ তো'র কামসিন্দূর ।
প্রভাত সমএ যেন উয়ি গেল সূর ॥
ললাটে তিলক য়েহু নব শশিকলা ।
কুণ্ডলমণ্ডিত চারু অ্রবণযুগলা ॥
নাসা তিলফুল তো'র আতী আনুপামা ।
গণ্ডস্থল শোভিত কমলদল সমা ॥
নয়নযুগল শোভে য়েহেন খঞ্জনে ।
ঈসত কটাক্ষে মোহে মুনিমনে ॥
বিস্বকল জিগী তো'র আধরের কলা ।
মাণিক জিনিআঁ তো'র দশন উজ্জলা ॥
কণ্ঠ কন্থসম কুচ কোকযুগলা ।
বাছ মৃণাল কর রাতা উতপলা ॥

প্রেম যুগে যুগে

কনকচম্পক সম শোভে কলেবরা ।
মাঝে দেখি সিংহ গেল পর্বতকুহরা ॥
নাভি গভীর তোর প্রেয়াগ উপামা ।
উরযুগ রামকদলীভরুসমা ॥
মহুন্ন গমনে যাসি ভাঁগিবার ডরে ।
তা দেখিআ বনবাস লৈল করীবরে ॥
অমরপুরত নাহি হএ হেন রামা ।
বিধি কৈল জন্মে কনকপ্রতিমা ॥
দেবাসুরে মহোদধি মখিল তোম্মারে
গাইল বড় চণ্ডীদাস বাসলীবরে ॥

* *

তমাণ কুসুম চিকুরগণে ।
নীল কুরুবক তোর নয়নে ॥
সুপুট নাসা তিলফলে ।
দেখি তোর গণ্ডযুগ মছলে ॥
আধর সুরঙ্গ বাঙ্কলী ফুলে ।
কঙ্কযুগ তোর এ বগছলে ॥
মুকুলিত কুন্দ তোর দশনে
খস্তরী কুসুম তোর বসনে ॥
ভুজযুগ হেমযুথিকামালে ।
আশোকতবক করযুগলে ॥
মুকুলিত ধলকমল তনে ।
রোমরাজী তাত আতন্নীগণে ॥
গভীর নাভী নাগেশ্বর ফুলে ।
কনক কেতকী জংঘযুগলে ॥

হুঁপ্ৰেম যুগে যুগে

চরণ কমল ধলকমলে ।
আজুলী চম্পককলিকাজালে ॥
নখরনিকর দেখি গুলানে ।
শিরীষ কুসুম তনু সকলে ॥
কনক চম্পক কুসুমপান্তী ।
তোদ্রার সকল শরীরকান্তী ॥
নেআলী সেআলী মাছলী বিকসে ।
তোদ্রার মধুর ঈষত হাসে ॥
দেখোঁ মো তোর ফুলশরীরে ।
গাইল চণ্ডীদাস বাসলীবরে ॥



চণ্ডীদাস

কাঞ্চন বরণী কে বটে সে ধনী
ধীরে ধীরে চলি যায় ।
হাসির ঠমকে চপলা চমকে
নীল শাড়ী শোভে তায় ॥
দেখিতে বদন মোহিত মদন
নাসাতে দুলিছে দুল ।
সুবিশাল আঁখি মানস ভাবিয়া
ছুটিছে মরাল-কুল ॥
আঁখি-ভরা দুটি বিরলে বসিয়া
সৃজন করেছে বিধি ।
নৌল পদ্ম ভাবি লুবধ ভ্রমরা
ছুটিতেছে নিরবধি ॥
কিবা দম্ভ-ভাতি মুকুতার পাঁতি
জিনিয়া কন্দক কুঁড়ি ।
সিঁথায় সিন্দূর জিনিয়া অরুণ
কানে কর্ণমালা টেঁড়ি ॥
শ্রীফল যুগল জিনি কুচ-যুগ
পাতলা কাঁচলী তাহে ।
তাহার উপর মণিময় হার
উপমা কহিব কাহে ॥
কেশরী জিনি কুশ মাঝখনি
মুঠে করি যায় ধরা ।
গজ কুন্ত জিনি নিতম্ব বলনি
উরু করী-কর পারা ॥

মুগ্ধের মুগ্ধে মুগ্ধে

চরণ-মুগ্ধল জিনিয়া কমল
আলতা রঞ্জিত তাম্র ।
মরু মন তাহে কাহে না ভুলব
মদন মুরছা পায় ॥
কাহার নন্দিনী কাহার রমণী
গোকুলে এমন কে ।
ক্লোনু পুণ্য-ফলে বল বল সখা
সে রমা পাইল সে ॥
চণ্ডীদাস বলে— ভেবনা ভেবনা
ওহে শ্যাম গুনমণি ।
তুমি সে তাহার সরবস-ধন
তোমারি আছে সে ধনী ॥

* *

মরম না জানে ধরম বাখানে
এমন আছেয়ে যারা ।
কাজ নাই সখি তাদের কথায়
বাহিরে রহুক তারা ॥
আমার বাহির দুয়ারে কপাট লেগেছে
ভিতর দুয়ার খোলা ।
তোরা নিসাড় হইয়া আয়লো সজনি
আঁধার পেরিলে আলা ॥
আলার ভিতরে কালাটি আছে
চৌকি রয়েছে তথা ।
সে দেশের কথা এ দেশে কহিলে
লাগিবে মরমে ব্যথা ॥

ইপ্সেচ যুগে যুগে

তোরা পর-পতি সনে শয়নে স্বপনে
সত্তত করিবি মেহা ।

তোরা সিনান করিবি নীর না ছুঁইবি
ভাবিনী ভাবের দেহা ॥
কহে চণ্ডীদাস— এমতি হইলে
তবে ত পীরিতি সাজে ।

তোরা না হইবি সতী না হবি অসতী
থাকিবি ধরঙ্গী-মাঝে ॥

* *

সুখের লাগিয়া এ ঘর বান্ধিলুঁ
অনলে পুড়িয়া গেল ।

অগ্নিমা সাগরে সিনান করিতে
সকলি গরল ভেল ॥

সখি কি মোর কপালে লেখি ।

শীতল বলিয়া ও চাঁদ সেবিলা
ভান্নর কিরণ দেখি ॥

নিচল ছাড়িয়া। উচলে উঠিতে ...
পড়িলুঁ অগাধ জলে ।

লক্ষ্মী চাহিতে দারিদ্র্য বাঢ়ল
মানিক হারালু হেলে ॥

নগর বসালেম সাগর বাঁধিলাম
মানিক পাবার আশে ।

সাগর শুখান মানিক লুকান
 অভাগীর করম দোষে ॥

হুঃপ্রেম যুগে যুগে

পিয়াস লাগিয়া জলদ সেবিবুঁ—

বজর পড়িয়া গেল ।

চণ্ডীদাস কহে— কান্নুর পিরিতি

মরণ অধিক শেল ॥

* *

এমন পিরিতি কভু নাহি দেখি শুনি ।

নিমিখে মানয়ে যুগ কোরে দূর মানি ॥

সমুখে রাখিয়া করে বসনের বাও ।

মুখ ফিরাইলে তার ভয়ে কাঁপে গাও ॥

এক তলু হৈয়া মোরা রজনী গোড়াই ।

সুখের সাগরে ডুবি অবধি না পাই ॥

রজনী প্রভাত হৈল কাতর হিয়ায় ।

দেহ ছাড়ি যেন মোর প্রাণ চলি যায় ॥

সে কথা কহিতে সই বিদরে পরাণ ।

চণ্ডীদাস কহে—ধনি, সব পরমান ॥

* *

সই, কে বলে পিরিতি ভাল ।

হাসিতে হাসিতে পিরিতি করিয়া

• কান্নিতে জনম গেল ॥

কুলবতী হইয়া কুলে দাঁড়াঞা

যে ধনী পিরিতি করে ।

তুষের অনল যেন সাজাইয়া—

এমতি পুড়িয়া মরে ॥

প্রেম যুগে যুগে

হাম অভাগিনী দুখের দুখিনী
 প্রেম-ছলছল আঁখি ।
চণ্ডীদাস কহে যে গতি হইল
 পরাণে সংশয় দেখি ॥

* *

এমন পিরিতি কভু নাহি দেখি শুনি ।
পরাণে পরাণে বান্ধা আপনা আপনি ॥
দুহুঁ কোরে দুহুঁ কাঁদে বিচ্ছেদ ভাবিয়া
আধ তিল না দেখিলে যায় যে মরিয়া ॥
জল বিহু মীন যেন কবহুঁ না জীয়ে ।
মানুষে এমন প্রেম কোথা না শুনিয়ে ॥
ভানু কমল বলি—সেহো হেন নয় ।
হিমে কমল মরে ভানু শুখে রয় ॥
চাতক জলদ কহি—সে নহে তুলনা ।
সময় নহিলে সে না দেয় এক কণা ॥
কুসুমের মধুপ কহি—সেহো নহে তুল ।
না আইসে ভ্রমর আপনি না যায় ফুল ॥
কি ছার চকোর চান্দ—দুহুঁ সম নহে ।
ত্রিভুবনে হেন নাহি চণ্ডীদাসে কহে ॥

* *

বধুঁ তুমি যে আমার প্রাণে
দেহ মন আদি তোমাতে সপেছি
 কুল শীল জাতি মান ॥
অখিলের নাথ তুমি হে কালিয়
 যোগীর আরাধ্য ধন ।

হুঃ প্রেম ঘুণে ঘুণে

গোপ-গোয়ালিনী হাম অতি হীনা
না জানি ভজন পূজন ॥
পিরিতি রসেতে ঢালি তন্ময়ন
দিয়াছি তোমার পায় ।
তুমি মোর পতি তুমি মোর গতি
মন নাহি আন ভায় ॥
কলঙ্কী বলিয়া ডাকে সব লৌকে
• তাহাতে নাহিক দুখ ।
বঁধু তোমার লাগিয়া কলঙ্কের হার
গলায় পরিতে সুখ ॥
সতী বা অসতী তোমাতে বিদিত
ভাল মন্দ নাহি জানি ।
কহে চণ্ডীদাস— পাপ পুণ্য মম
তোমার চরণখানি ॥

* *

পিরিতি পিরিতি সব জন কহে
পিরিতি সহজ কথা ।
বিরিখের ফল নহে ত পিরিতি
• নাহি মিলে যথা তথা ॥
পিরিতি অন্তরে পিরিতি মস্তুরে
• পিরিতি সাধিল যে ।
পিরিতি রতন লভিল যে জন
বড় ভাগ্যবান সে ॥
পিরিতি লাগিয়া আপনা ভুলিয়া
পরেতে মিশিতে পারে ।

হুঃপ্রোম্ব যুগে যুগে

পরকে আপন করিতে পারিলে
 পিরিতি মিলয়ে ভারে ॥
 পিরিতি সাধন বড়ই কঠিন
 কহে দ্বিজ চণ্ডীদাস ।
 দুই লুচাইয়া এক অঙ্গ হও
 থাকিলে পিরিতি আশ ॥

✻ ✻

কি মোহিনী জান বঁধু কি মোহিনী জান ।
 অবলার প্রাণ নিতে নাহি তোমা হেন ॥
 রাতি কৈলু দিবস দিবস কৈলু রাতি ।
 বুঝিতে নারিলু বঁধু তোমার পিরিতি ॥
 ঘর কৈলু বাহির বাহির কৈলু ঘর ।
 পর কৈলু আপন আপন কৈলু পর ॥
 কোন বিধি সিরজিল সোতের শেওলি ।
 এমন ব্যথিত নাই ডাকি বন্ধু বলি ॥
 বঁধু যদি তুমি মোর নিদাকণ হও ।
 মরিব তোমার আগে দাঁড়াইয়া রও ॥
 বাণুলী আদেশে দ্বিজ চণ্ডীদাস কয় ।
 পরের লাগিয়া কি আপন পর হয় ॥

* *

সই কে বা শুনাইল শ্রাম নাম ।
কানের ভিতর দিয়া । মরমে পশিল গো
আকুল করিল মোর প্রাণ ॥
না জানিয়ে কত মধু . শ্রাম নামে আছে গো
বদন ছাড়িতে নাহি পারে ।

হৃদয়-প্রেম যুগে যুগে

জপিতে জপিতে নাম অবশ করিল গো
কেমনে বা পাসরিব তারে ॥
নাম-পরতাপে যার ঐছন করিল গো
অঙ্গের পরশে কিবা হয় ।
যেখানে রসতি তার নয়নে দেখিলে গো
যুবতী ধরম কৈছে রয় ॥
পাসরিতে চাহি মনে পাসরা না যায় গো
কি করিব কি হবে উপায় ।
কহে দ্বিজ চণ্ডীদাসে কুলবতী কুল নাশে
আপনার যৌবন যাচায় ॥



রামী

তুমি দিবাভাগে লীলা অমুরাগে

ভ্রম সদা বনে বনে ।

তাহে তব মুখ না দেখিয়া দুখ

পাই বহু ক্ষণে ক্ষণে ॥

ক্ৰটি সম কাল মানি স্নজ্জ্বল

যুগ-তুল্য হয় জ্ঞান ।

তোমার বিরহে মন স্থির নহে

ব্যাকুলিত হয় প্রাণ ॥

কুটিল কুন্তল কত স্ননির্মল

শ্রীমুখমণ্ডল শোভা ।

হেরি হয় মনে এ দুই নয়নে

নিমেষ দিয়েছে কেবা ॥

তুমি যে আমার আমি যে তোমার

স্নহৎ কে আছে আর ।

খেদে রামী কয় প্রাণনাথ বিনা

ভাগ্য দেখি আঁধার ॥



কবিকঙ্কণ

নাথ শুন নিবেদন নাথ শুন নিবেদন ।
যতক বিবিধ সুখ পাইবে ফাস্তন ॥
ফাস্তনে ফুটিবে পুষ্প মোর উপবনে ।
তথি দোলমঞ্চ নাথ করিব নির্মাণে ॥
* সখিগণ আসিবে সুন্দর বেশ করি ।
হরিদ্রা কুসুমেরে নাথ দিবে পিচকারি ॥
সখী সব মিলি আসি গাইব গীত ।
দোলাইব জগন্নাথ হইয়া মোদিত ॥
মৃদঙ্গ পাখোয়াজ বীণা একত্র করিয়া ।
নাচিবে নর্তকগণ সুবেশ ধরিয়া ॥
মধুমাসে মালতী কুসুমেরে মধুকর ।
মধুমন্ত্রে মাতোয়াল ভ্রমরা ভ্রমর ॥
কুসুম কাননে কান্ত করিবে নিবাস ।
বিষম মদন তাপ হইবে বিনাশ ॥
যেই মধুমাস যাইবে কুতূহলে ।
শীতল যোগাব আমি চিয়ান বিকালে ॥
মালতী মল্লিকা চাঁপা বিছায়ে শয়নে ।
** মধুমাস যাইবে মধুর আলাপনে ॥
মোহন চৈত্রমাস মোহন চৈত্র মাসে ।
মোহন মন্দিরে রবে মোহন আবেশে ॥



জ্ঞানদাস

সই কি না সে বন্ধুর প্রেম ।
আখি পালটিতে নহে পরভীত
যেন দরিদ্রের হেম ॥
হিয়ায় হিয়ায় লাগিব লাগিয়া
চন্দন না মাখে অঙ্গে ।
গায়ের ছায়া— বায়ের দোসর
সদাই ফিরয়ে সঙ্গে ॥
তিলে কত বেরি মুখানি হেরয়ে
আঁচরে মুছয়ে ঘাম ।
কোরে থাকিতে কত দূর হেন মানয়ে
তেঞি সদাই লয়ে নাম ॥
জাগিতে ঘুমাইতে আন নাহি চিতে
রসের পসার কাছে ।
জ্ঞানদাস কহে— এমন পিরিতি
আর কি জগতে আছে ॥

* * *

শিশুকাল হৈতে বন্ধুর সহিতে
পরানে পরানে নেহা ।
কি জানি কি লাগি কো বিহি গড়ল
ভিন ভিন করি দেহা ॥

প্রেম যুগে যুগে

সই কিবা সে পিরিতি তার ।

আলস করিয়া। নারি পাসরিতে

কি দিয়া শোধিব ধার ॥

আমার অঙ্গের

পীত বাস পরে শ্যাম ।

প্রাণের অধিক করে মুরলী

লইতে আমার নাম ॥

আমার অঙ্গের বরণ-সৌরভ

যখন যে দিকে পায়।

বাহু পাসরিয়া বাউল হইয়া

তখন সেদিকে ধায় ॥

লাখ কামিনী ভাবে রাতি দিনি

যে পদ সেবিতো চায় ।

জ্ঞানদাস কহে আহীর-নাগরী

পিরিতে বান্ধিলা তায় ॥

* *

মনের মরম-কথা তোমাতে কহিয়ে এথা

শুন শুন পরানের সই ।

স্বপনে দেখিলুঁ যে শ্যামল বরণ দে

•• তাহা বিনা আর কারু নই ॥

রজনী শাউন ঘন ঘন দেয়া গরজন

রিমি ঝিমি শব্দে বরিষে ।

পালকে শয়ান রঙ্গে বিগলিত চীর অঙ্গে

নিন্দা যাই মনের হ্রিষে ॥

শিখরে শিখন্ত-রোল মত্ত দাদুরি বোল

কোকিল কুহরে কুতুহলে ।

প্রেম যুগে যুগে

ঝিঁঝা ঝিনিকি বাজে ডাহুকি সে গরজে
স্বপন দেখিলু' হেন কালে ॥
মরমে পৈঠল সোহ ছদয়ে লাগিল দেহ
অবণে ভরল সেই বাণী ।
দেখিয়া তাহার রীত যে করে দারূণ চিত
ধিক্ রছ কুলের কামিনী ॥
রূপে গুণে রসসিদ্ধু মুখ-ছটা জিনি ইন্দু
মালতীর মালা গলে দোলে ।
বসি মোর পদতলে গায়ের হাত দেই ছলে
আমা কিন বিকাইলু' বোলে ॥
কিবা সে ভুরুর ভঙ্গ, ভুষণের ভুষণ অঙ্গ
কাম মোহে নয়নের কোণে ।
হাসি হাসি কথা কয় পরান কাড়িয়া লয়
ভুলাইতে কত রঙ্গ জানে ॥
রসাবেশে দেই কোল মুখে না নিঃসরে বোল
অথরে অধর পরশিল ।
অঙ্গ অবশ ভেল লাজ ভয় মান গেল
জ্ঞানদাস ভাবিতে লাগিল ॥

* *

এ ঘোর রজনী মেঘ-গরজনী
কেমনে আঁওব পিয়া ।
শেজ পিছাইয়া রহিঁলু বসিয়া
পথ-পানে নিরখিয়া ॥
সই কি করব কহ মোরে ।
এতছঁ বিপদ তরিয়া আইলুঁ
নব-অমুরাগ ভরে ॥

প্রেম যুগে যুগে

এ হেন রজনী কেমনে গোড়াব
বঁধুর দরশ বিনে ।
বিফল হইল মোর মনোরথ
প্রাণ করে উচাটনে ॥
দহয়ে দামিনী ঘন বনুবানি
পরান-মাঝারে হানে ।
জ্ঞানদাস কহে— গুনহ শূন্দরি
মিলবি বন্ধুর সনে ॥

* *

হাসিয়া হাসিয়া মুখ নিরখয়ে
মধুর কথাটি কয় ।
ছায়ার সহিতে ছায়া মিশাইতে
পথের নিকটে রয় ॥
আলো সহি সেজন মানুষ নয় ।
তাহার সঙ্গে যে পিরিতি করয়ে
কি জানি কি তার হয় ॥
সহজে রসের আকর সে যে
ভাবের অঙ্কুর তায় ।
বাতাসে বসন উড়িতে আপন
অঙ্গে ঠেকাইয়া যায় ॥
চমক চলনি ও গীম-দোলনি
রমণী-মানস-চোর ।
জ্ঞানদাস কহে— সে পিয়া-পিরিতি
মরমে পশিল তোর ॥

● ● ●

গোবিন্দ দাস

ঢল ঢল কাঁচা অঙ্গের লাবনি

অবনী বহিয়া যায় ।

ঈষত হাসির তরঙ্গ-হিল্লোলে

মদন মুরছা পায় ॥

কিবা সে নাগর কি খেনে দেখিলুঁ

ধৈর্য রহল দূরে ।

নিরবধি মোর চিত বেয়াকুল

কেনে বা সদাই বুঝে ॥

হাসিয়া হাসিয়া অঙ্গ দোলাইয়া

নাচিয়া নাচিয়া যায় ।

নয়ন-কটাখে বিষম বিশিখে

পরান বিকিতে ধায় ॥

মালাভী-ফুলের মালাটি গলে

হিয়ার মাঝারে দোলে ।

উঠিয়া পড়িয়া মাতল ভ্রমরা

ঘুরিয়া ঘুরিয়া বুলে ॥

কপালে চন্দন কোঁটার ছটা

লাগিল হিয়ার মাঝে ।

না জানি কি ব্যাধি মরমে বাধল—

না কহি লোকের লাজে ॥

এমন কঠিন নারীর পরান—

বাহির নাহিক হয় ।

না জানি কি জানি হয় পরিণামে

দাস গোবিন্দ কয় ॥

* *

প্রেম যুগে যুগে

শরদ চন্দ পবন মন্দ বিপিনে ভরল কুমুম গন্ধ
কুল মল্লিকা মালতী যুথী
মস্ত মধুকর ভোরনি ।
হেরত রাতি ঐছন ভাতি শ্যামর মোহন মদন মাতি
মুরলী গান পঞ্চম তান
কুলবতী চিত চোরনি ॥
সুতল গোপী প্রেম রোপি মনহি মনহি আপনা সোঁপি
তাহি চলত ঝাঁহি বোলত
মুরলিক কলরোলনি ।
বিছুরি গেহ নিজহি দেহ একু নয়নে কাজরয়েহ
বাঁহে রঞ্জিত মঞ্জীর একু
একু কুণ্ডল ডোলনি ॥
শিখিল ছন্দ নৌবি বন্ধ বেগে ধাওত যুবতী বৃন্দ
খসত বঁসন রসন চোলি
গলিত বেণী লোলনি ।
ততহি বেলি সখিনী মেলি কেহ কাছক পথ না হেরি
ঐছন মিলল গোকুলচন্দ
গোবিন্দ দাস বোলনি ॥

* *

ঝর ঝর জলধর-ধার ।
ঝঙ্কা-পবন বিধার ॥
ঝলকত দামিনী-মালা ।
ঝামরি ভৈ গেল বালা ॥
ঝুট কি কহব কানাই ।
ঝুরত তুয়া বিহু রাই ॥

প্রেম যুগে যুগে

কন কন বজ্র-নিশান ।
কাঁপি রহত দুহু কান ॥
ঝিকি-ঝিকি রাতি ।
বন্ধ সহনে নাহি যাতি ॥
ঝুঁঝুঁ দাদুরী বোল ।
ঝুলত মদন-হিলোল ॥
ঝটকি চলহ ধনি পাশ ।
ঝগড়ত গোবিন্দ দাস ॥



निताई दास

বঁধুর বাঁশী বাজে বুঝি বিপিনে ।

শ্যামের বাঁশী বাজে বুঝি বিপিনে ॥

সই কেন অঙ্গ অবশ্য হইল

সুখ। বরষিলা শ্রবণে ।

বৃক্ষডালে বসি পক্ষী অগণিত

জড়বৎ কোন কারণে ।

যমুনারি জলে বহিছে তরঙ্গ

তরু হেলে বিনে পবনে ॥

একি একি সখি একি গো নিরখি

দেখ দেখি সব গোধনে

তুলিয়ে বদন নাহি খায় তৃণ

আছে যেন হীনচেতনে ॥

হায় কিসের লাগিয়ে বিদরে এ হিষে

উঠি চমকিয়ে সঘনে ।

অকস্মাৎ এ কি প্রেম উপজিন

সলিল বহিল নয়নে ॥

আর একদিন শ্যামের ঐ বাঁশী

বেজেছিল সই কাননে ।

কুল লাজ ভর হরিল তাহাতে

মরিতেছি শুরু গঙ্গনে ॥



প্রেমদাস

এ সখি অদভূত প্রেমতরঙ্গ ।
দুহুঁ অদরশে দুহুঁ অতি মে বিয়াকুল
দরশনে ঐছন রঙ্গ ॥
মরকত-কনক— মুকুর জিনি দুহু তনু
দুহুঁ ছাহ হেরি দুহুঁ অঙ্গে ।
দুহুঁ জন দেখি হৃদয়ে দ্বিধা উপজল
দুহুঁ বৈঠল মুখ বন্ধে ॥
কিয়ে দুহুঁ মনহিঁ রোখ অতি বাঢ়ল
দৌহে চলু তেজইতে প্রাণে ।
নিবিড় কুঞ্জে দৌহে দৈবে মিলায়ল
কোরে কয়ল আন ভানে ॥
কোরহি পরশে মদন দুহুঁ উপজল
গেলহিঁ দূর দূরভান ।
কত কত চুহ্নন কতহি আলিঙ্গন
প্রেমদাস রসদান ॥



বলরামদাস

কিশোর বয়স কত বৈদগধি ঠাম ।
মুরতি-মরকত-অভিনব কাম ॥
প্রতি অঙ্গ কোন বিধি নিরমিল কিসে ।
দেখিতে দেখিতে কত অমিয়া বরিষে ॥
মল্লু মল্লু কিবা রূপ দেখিলু স্বপনে ।
খাইতে শুইতে মোর লাগিয়াছে মনে ॥
অরুণ অধর মূঢ় মন্দ মন্দ হাসে ।
চঞ্চল-নয়ন কোণে জাতিকুল নাশে ॥
দেখিয়া বিদরে বুক দুটি ভুরু-ভঙ্গী ।
আই আই কোথা ছিল সে নগর রঙ্গী ॥
মস্থর চলনখানি আধ আঁধ যায় ।
পরান যেমন করে কি কহব কায় ॥
পাষণ মিলাঞা যায় গায়ের বাতাসে ।
বলরাম দাসে বলে অবশ পরশে ॥

* *

রাতি দিনে চৌখে চৌখে বসিয়া সদাই দেখে
ঘন ঘন মুখ খানি মাজে ।
উলটি পালটি চায় সোয়াস্ত নাহিক পায়
কত বা আরতি হিয়ার মাঝে ॥
সই ও দুখ লাগিয়া আছে মনে ।
যারে বিদগধ-রায় বলিয়া জগতে গায়—
মোর আগে কিছুই না জানে ॥

প্রেম যুগে যুগে

আলিয়া উজ্জল বাতি জাগিয়া পোহায় রাত—
নিদ নাহি যায় পিনা ঘুমে ।
ঘন ঘন করে কোলে খেনে করে উতরোলে
তিলে শত বার মুখ চুমে ॥
খেনে বকে খেনে পিঠে খেনে রাখে দিঠে দিঠে
হিয় হৈতে শেজে না ছোঁয়ায় ।
দরিদ্রের ধন হেন রাখিতে না পায় স্থান—
অঙ্গে অঙ্গে সদাই ফিরায়ে ॥
ধরিয়া দুখানি হাতে কখন ধরয়ে মাথে
খেনে ধরে হিয়ার উপরে ।
খেনে পুলকিত হয় খেনে আঁখি মুদি রয়
বলরাম কি কহিতে পারে ॥



শ্রীনিবাস দাস

বদন চান্দ কোন কুন্দারে কুন্দিল গো
ফে না কুন্দিলে দুই আঁখি । •
দেখিতে দেখিতে মোর পরাণ যেমন করে
সেই সে পরাণ তার সাথী ॥
রতন-কড়িয়া কে বা যতন করিয়া গো
কে না গড়িয়া দিল কানে ।
মনের সহিতে মোর এ পাঁচ পরাণি গো
যোগী হবে উহারি ধোয়ানে ॥
অমিয়া-মধুর বোল সুধা খানি খানি গো
হাতের উপরে লাগি পাও ।
এমতি করিয়া যদি বিধাতা গড়িত গো—
ভাঙ্গিয়া ভাঙ্গিয়া উহা খাও ॥
মদন ফান্দিয়া ও না চুড়ার টানানি গো
উহা না শিখিয়া আইল কোথা ।
এ বুক ভরিয়া মুঞি উহা না দেখিলুঁ গো
এ বড়ি মরমে মোর বেথা ॥
নাসিকার আগে দোলে এ গজ মুকুতা গো
•• সোনায় মড়িত তার পাশে ।
বিজুড়ি-জড়িত যেন চাঁদের কণিকা গো
মেঘের আড়ালে থাকি হাসে ॥
সুন্দর কপালে শোভে চন্দন-ভিলক গো
তাহে শোভে অলকার-পাঁতি ।
মেঘের উপরে যেন বল মল করে গো
চাঁদে যেন ভ্রমরার ভাঁতি ॥

প্রেম যুগে যুগে

করভের কর জিনি বাহর বলনি গো
হিঙ্গল-মণ্ডিত তার আগে ।
যৌবন বনের পাখী পিয়াসে মরয়ে গো
উহারি পরশ-রস মাগে ॥
নাটুয়া-ঠমকে যায় রহিয়া রহিয়া চায়—
চলে যেন গজরাজ মাতা ।
শ্রীনিবাস দাস কর— লখিলে লখিল নয়
রূপ-সিদ্ধ গঢ়ল বিধাতা ॥



ঘনশ্যাম দাস

ডাকে ডাহুক ঝমক ঝমকল

ঝারি ঝলকত ঝরিয়া ।

ডিঙি মারিত মণ্ডুকীবর

ময়ূর নাচত সাজিয়া ॥

রে ঘন ঘন ঘন গহন দূর গহ

গগনে ঘন ঘন গজিয়া ।

আওয়ে রতি পতি মন্ত-গজ-পর

বিরহীগগণ তর্জিয়া ॥

হানে তরুমন পলক পলকন

ঝলকে যামিনী-কাঁতিয়া ।

খুর-ধার খরণ উঘারি ঝাকত

বীর-রস-ভরে মাতিয়া ॥

অরবিন্দ নাহি পর জীউ-সংহর

অসম শর বরখন্তিয়া ।

নন্দ-নন্দন চরণে ভণ

ঘনশ্যাম দাস নমন্তিয়া ॥



নরহরি দাম

প্রাণনাথ পরাণ কেমন করে ।
তোমাতে বিদায় দিয়া কেমনে যাব ঘরে ॥
পুরুষে যতেক করিলুঁ স্মৃতপ—
তপের নাহিক সীমা ।
সেই সব তপ বিফল নহিল
তেঞিসে পাইলুঁ তোমা ॥
মৃগমদ বলি ঝাঁপিয়া কাঁচলি
রাখিব হিয়ার মাঝে
তোমার বরণ বসনে ঝাঁপিয়া
রাখিব লোকের দ্বাজে ॥
কিন্হা কেশপাশে কুবলয়-দামে
রাখিব যতন করি ।
একলা হইয়া মুকুত করিয়া
দেখিব নয়ান ভরি ।
যদি কদাচিত হয় জানাজানি
কহিব বেকত করি ।
সে ভয়ে সভয় নহি কদাচিত—
কহে-দাস নরহরি ॥



বান্দুদেব ঘোষ

না জানিয়া না গুনিয়া পিরিতি করিলাম গো
পরিণামে পরমাদ দেখি ।

আষাঢ় শ্রাবণ মাসে ঘন ছেয়া বরিখয়ে
এমতি বরয়ে দুটি আঁখি ॥

হের যে আমারে দেখ মানুষ-আকার গো
মনের অনলে আমি পুড়ি ।

জলন্ত অনলে যেন পুড়িয়া রৈয়াছি গো
পাকানিয়া পাটের ডুরী ॥

আঙ্কুরা পুখরে যেন দীনহীন মীন হেন
নিশ্বাস ছাড়িতে ঠাঞি নাই ।

বান্দুদেব ঘোষ কহে— ডাকাত্যা পিরিতি গো
তিলে তিলে বন্ধুরে হারাই ॥



মুরারি গুপ্ত

সখি হে কিরিয়া আপন ঘরে যাও ।
জীয়েন্তে মরিয়া যে আপনা খাইয়াছে
তারে তুমি কি আর বুঝাও ॥
নয়ন-পুতলি করি লয়্যাছি মোহন রূপ
হিয়ার মাঝারে করি প্রাণ ।
পিরিতি-আগুনি জালি সকলি পোড়াঞাছি—
জাতি কুলশীল অভিমান ॥
না জানিয়া মূঢ় লোকে কি জানি কি বলে মোকে
না করিয়ে অবণ গোচরে ।
স্রোত-বিথার জলে এ তম্বু ভাসাঞাছি—
কি করিবে কুলের কুকুরে ॥
খাইতে শুইতে রইতে আন নাহি লয় চিতে—
বন্ধু বিনে আন নাহি ভায় ।
মুরারি গুপ্তে কহে— পিরিতি এমতি হইলে
তার যশ তিন লোকে গায় ॥



রাধা বল্লভ

সখিহে অপরূপ পেখলু বালা ।

হিমকর-মদন—

মিলিত মুখমণ্ডল

তা পর জলধর-মালা ॥

চঞ্চল নয়নে হেরি মুখে সুন্দরী মুচকায়ই ফিরি গেল ।

তৈখনে মরমে মদন-জ্বর উপজল জীবইতে সংশয় ভেল ॥

অহনিশি শয়নে

স্বপনে আন না হেরি,

অপুখন সোই দেখান ।

তাকর পিরিতি

কি রীতি নাহি সমুঝিয়ে

আকুল অধির পরাণ ॥

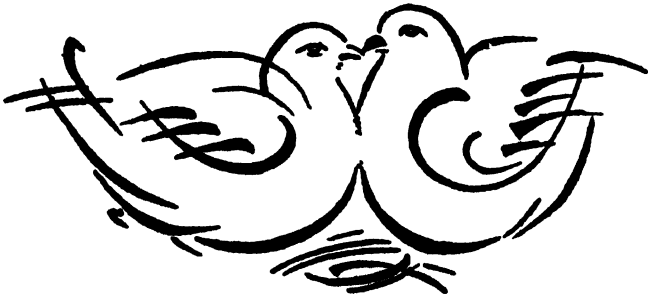
মরমক বেদন তোহে পরকাশল তুহু অতি চতুর সুজান ।

সো পুন মধুর-মুরতি দরশায়বি এ রাধাবল্লভ গান ॥



রায় শেখর

সই পিরিতি পিয়াসে জানে ।
যে দেখি যে শুনি চিতে অহুমানি
নিছনি দিয়ে পরাণে ॥
মো যদি সিনাও আগিলা ঘাটে
পিছিলা ঘাটে সে নায় ।
মোর অঙ্গের জল পরশ লাগিয়া
বাহু পসারিয়া রয় ॥
বসনে বসন লাগিবে লাগিয়া
একই রজকে দেয় ।
মোর নামের আধ ' আখর পাইলে
হরিষ হইয়া লেয় ॥
ছায়ায় ছায়ায় লাগিব লাগিয়া
ফিরয়ে কতেক পাকে ।
আমার অঙ্গের বাতাস যে দিগে
সে মুখে সিদিন থাকে ॥
মনের আকুতি বেকত করিতে
কত না সন্ধান জানে ।
পায়ের সেবক রায় শেখর—
কিছু বুঝে অহুমাণে ॥



শেখর

সেকাল গেল বৈয়া বন্ধু
সেকাল গেল বৈয়া ।

আঁখি-ঠারঠারি মুচকি হাসি
কত না করিতা বৈয়া ॥

ঘেষের লাগিয়া দেশের ফুল
না রহিত কিছু বনে ।

নাগরীর সনে নাগর হইল—
আর যে চিনিবা কেনে ॥

কুলি বেড়াইয়া নাম লইয়া
ফিরিতা বংশী বাইয়া ।

মুখের কথা শুনিতেহ কত
লোক পাঠাইতা ধাইয়া ॥

হাতে করিয়া মাথায় করিলুঁ
কলঙ্কের ডালা ।

শেখর কহে— পরের বেদন
নাহি জানে কালা ॥



লোচন দাম

এসো এসো বঁধু এসো আধ আঁচরে বসো
নয়ান ভরিয়ে তোমায় দেখি ।
অনেক দিবসে মনের মানসে
তোমা খনে মিলাইল বিধি ॥
মনি নও মানিক নও ছায় করি পরি গলে
ফুল নও যে কেশে করি বেশ ।
নারী না করিত বিধি তোমা হেন গুণনিধি
লৈয়া কিরিতাম দেশ দেশ ॥
বঁধু তোমায় যখন পড়ে মনে চাহি বৃন্দাবন পানে
আলুইলে কেশ নাহি বাঁধি ।
রক্তনশালাতে যাই তুয়া বঁধু গুণ গাই
ধুঁয়ার ছলনা করি কাঁদি ॥
কাজর করিয়া তোমা নয়নেতে রাখি যদি
তাহে গুরুজনা অপবাদ ।
ও রাগা চরণে নূপুর হইতে
লোচন দাসেরই সাধ ॥



বসন্ত রাত

ওহে নাথ কিছুই না জানি
তোমাতে মগন মন দিবস রজনী ।
জাগিতে ঘুমিতে চিতে তোমাকেই দেখি
পরাণ-পুতলি তুমি জীবনের সখি ।
অঙ্গ-আভরণ তুমি শ্রবণ-রঞ্জন
বদনে বচন তুমি নয়নে অঞ্জন ।
নিমিখে শতেক যুগ হারাই যেন বাসি
রায় বসন্ত কহে — পছ প্রেমরাশি ।



নরোত্তম দাস

কিবা সে তোমার প্রেম— কত লক্ষ কোটি হেম
নিরবধি জাগিছে অন্তরে।
পূরবে আছিল ভাগি তেঞি পাইয়াছি লাগি
প্রাণ কাঁদে বিচ্ছেদের তরে ॥
কালিয়া বরণখানি আমার মাথার বেণী—
আঁচরে ঢাকিয়া রাখি বুকে ।
দিয়া চাঁদ-মুখে মুখ পূরিব মনের সুখ
যে বলে সে বলুক পাপ লোকে ॥
মণি মুকুতা নও গলায় গাঁথিয়া লব
ফল নও কেশে করি বেশ ।
নারী না করিত বিধি তোমা হেন গুণনিধি
লইয়া ফিরিতুঁ দেশ দেশ ॥

* *

দুহুঁ মুখ দরশনে দুহুঁ ভেল ভোর ।
দুহুঁক নয়নে বহে আনন্দ লোর ॥
দুহুঁ তনু পুলকিত গদগদ ভাষ ।
ঈষদবলোকনে লহু লহু হাস ॥
অপরূপ রাখা-মাধব-রঙ্গ ।
মান বিরামে ভেল একসঙ্গ ॥
ললিতা বিশাখা আদি যত সখীগণ ।
আনন্দে মগন ভেল দেখি দুহুঁ জন ॥
নিকুঞ্জের মাঝে দুহুঁ কেলি-বিলাস ।
দুরহি নেহারত নরোত্তম দাস ॥



সৈয়দ মতুজা

ওহে পরাণ বঁধু তুমি ।
কি আর বলিব আমি ॥
তুমি সে আমার আমি সে তোমার
তোমার তোমাকে দিতে কি যাবে আমার
কে জানে মনের কথা কাহারে কহিব
তোমাতে তোমার দিয়া তোমার হইয়া রইব ॥



আলাওন

বসন্তে নাগরবর নাগরী বিলাসে ।
বরবালা দুই ইন্দু শ্রবে যেন সুখা বিন্দু
মৃদুমন্দ অধরে ললিত মধু হাসে ॥
প্রক্লিষ্ট কুসুম মধুভ্রত বঙ্কত
ছঙ্কত পরভূত কুঞ্জে রত বাসে ।
মলয় সমীর সুসৌরভ সুশীতল
বিলোলিত পতি অতি রস ভাসে ॥
প্রক্লিষ্ট বনস্পতি ফুটিল তমালদ্রুম
মুকুলিত চ্যুতলতা কোরক জালে ।
যুবজন-হৃদয় আনন্দে পরিপূরিত
রঙ্গ মল্লিকা মালতী মালে ॥



ভবানী দাস

তোমা সঙ্গ শ্রীতি করি আনলে দহিয়া মরি
পাজার বিক্লি কাল যুগে ।
যদি মণি মুক্তা হৈত হার গাথি গুলে দিত
পুষ্প নহে কেশেত রাখিতাম ॥
আসিব আসিব করি আগি রইলাম পশ্চ হেরি
নয়ান হইয়া গেল ঘোর ।
যেদিন আসিলু শিশু না জানিলাম দুঃখ কিছু
এবে যৌবন হইল পূরণ ।
যৌবন হইল কাল মরিলে সে হয় ভাল
এরূপ যৌবন বৃথায় গেল ॥
এরূপ যৌবন-ধন হারাইলাম অকারণ
বৃথায় বৃথায় গেল দিন গণিয়া ।
যৌবন হৈল বৈরী সম্বর রাখিতে নারি
না ভজিল প্রিয়া গুণনিধি ॥



ময়নামতীর গান

না যাইও না যাইও রাজা দূর দেশান্তর ।
কান্ন লাগিয়ে বাক্সিলাম শীতল মন্দির ঘর ॥
নিদের স্বপনে রাজা হবে দরশন ।
পালঙ্কে ফেলাইব হস্ত—নাই প্রাণের ধন ॥
দশ গৃহের মা-বহিন রবে স্বামী লইয়া কোলে ।
আমি নারী রোদন করিব খালি ঘর মন্দিরে ॥
জান্নব জীবন-ধন আমি কত সঞ্চে গেলে ।
রাক্ষিয়া দিমু অন্ন (তোমার) ক্ষুধার কালে ॥
পিপাসার কালে দিমু পানী ।
হাসিয়া খেলিয়া পোহামু রজনী ॥
শীতলপাটি বিছাইয়া দিমু বালিসে হেলান পাও ।
হাউম রঞ্চে সঁাতিয়ু হস্ত পাও ॥
ঐশ্বকালে বদন ত দিমু দণ্ড-পাখা বাও ।
মাঘ মাসের শীতে ঘেঁসিয়া রমু গাও ॥



মৈমনসিংহ গীতিকা

দেখিল সুন্দর কন্যা জল লইয়া যায়
মেঘের বরণ কন্যার গায়েতে লুটায় ॥
এই তো কেশ কন্যার লাখ টাকার মূল ।
শুকনা কাননে যেন মহুয়ার ফুল ॥
ডাগল দীঘল আঁখি যার পানে চায় ।
একবার দেখলে তারে পাগল হইয়া যায় ॥
এমন সুন্দর কন্যা না দেখি কখন ।
কার ঘরের উজল বাতি চুরি করল মন ॥
জাগিয়া দেখ্যাছি কিবা নিশির স্বপন ।
কার ঘরের সুন্দর নারী কার পরাণের ধন ॥
জলের না পদ্মফুল শুকনায় ফুটে রইয়া ।
আসমানের তারা ফুটে মঞ্চেতে ভরিয়া ॥

—অজ্ঞাত কবি

* *

বাড়ীর আগে ফুট্যা আছে
মাগতী বকুল ।
আঞ্চল ভরিয়া তুল্য
তোমার মাগার ফুল ॥
বাড়ীর আগে ফুট্যা রইছে
রক্তজবা সারি ।
তোমারে করিব পূজা
প্রাণে আশা করি ॥

হুগোয় যুগে যুগে

বাড়ীর আগে ফুট্য রইছে

মল্লিকা মালতী ।

জন্মে জন্মে পাই যেন

তোমার মত পতি ॥

বাড়ীর আগে ফুট্য রইছে

কেতকী দুস্তর ।

কি জানে লেখ্যাছে বিধি

কপালে আমার ॥

—নয়ানচাঁদ ঘোষ

* *

যেদিন হইতে দেখছি বন্ধু তোমায়

মৈষালের বাড়ী ।

সেইদিন হইতে বন্ধু আমি

পাগল হৈয়া ফিরি ॥

আন্দাইরে ডুবাইছে বন্ধু আরে বন্ধু

চন্দ্র সূর্য তারা ।

তোমাতে দেখিয়া বন্ধু আরে বন্ধু

হৈছি আপন-হারা ॥

বাইরেতে শুনিবে বন্ধু আরে বন্ধু

তোমার পায়ের ধ্বনি ।

সুম হইতে জাইগা উঠি

আমি অভাগিনী ॥

বুক ফাটিয়া যায় রে বন্ধু আরে বন্ধু

মুখ ফুটিয়া না পারি ।

অস্তরের আগুনে আমি

জলিয়া গুড়িয়া মরি ॥

হৃদয়ে যুগে যুগে

পাখী যদি হইতারে বন্ধু আরে বন্ধু
রাখতাম হৃদপিঞ্জরে ।
পুষ্প হইলে বন্ধু আরে বন্ধু
গাঁইখা রাখতাম তোরে ॥
চান্দ যদি হইত বন্ধু আরে বন্ধু
জাইগা সারা নিশি ।
চান্দ-মুখ দেখিতাম
নিরালায় বসি ॥
বার্টা ভরি বানাইয়া পান রে বন্ধু
তোরে দিতে লাজ বাসি ।
আপনার চক্ষের জলে আরে বন্ধু
আপনি যাই ভাসি ॥
—দ্বিজ ঈশান

* *

কইও কইও কইও দূতী
কইও মায়ের আগে ।
আমারে যে লইয়া যায়
দেওয়ান ভাবনার চরে ॥
(ভাবনায় লইয়া যায় রে ।)
কইও কইও কইও দূতী
কইও মামীর আগে ।
আমার কাঁথের কলসী পইড়া রৈলা
অইনা নদীর ঘাটে ॥
(ভাবনায় লইয়া যায় রে ।)
কইও কইও কইও দূতী
প্রাণ-বন্ধুর আগে ।

সুপ্ৰেমা যুগে যুগে

বন্ধুরে জানাইও সুনাই রে
খাইছে ভাবনা-বাঘে ॥

সাক্ষী হইও চান্দ সুরষ
দিবস রজনী ।

বন্ধুর লাগাল পাইলে কইও
দুঃখের কাহিনী ॥

উইড়া যাওরে বনের পংখী
নজর বহুদূরে ।

বন্ধুরে কহিও সুনাই
লইয়া গেছে চোরে ॥

গানের পারের হিজল-গাছ
শুন আমার কথা ।

প্রাণ-বন্ধুরে লাগাল পাইলে
কইও যত কথা ॥

গানের পারের কেওয়া-ফুল
ফুট্যা রইছে ডালে ।

দুষ্কের কথা কইও মোর
বন্ধুর লাগাল পাইলে ॥

সাক্ষী হইয়ো নদী নালা
আর পশু পংখী ।

অভাগী সুনাইরে দিল
কাল বিধাতা কঁাকি ॥

সত্যযুগের বায়ু সাক্ষী
আর তো সাক্ষী নাই ।

বন্ধুর আগে কইও তোমার
মইরাছে সুনাই ॥

ইপ্সোম ঘুণে ঘুণে

কি করিলাম দুকের কপাল

কেন বা আইলাম জলে ।

সেই কারণে যন্তের ঘির্ত

খাইল চণ্ডালে ॥

আগে যদি জানতাম দুকুরে

এই ছিল কপালে ।

কাঙ্কের কলসী গলাত বান্ধা

ডুব্যা মরতাম জলে ॥

(ভাবনায় লইয়া যায় রে ।)

আসিব বলিয়া বন্ধু

না আসিল করে ।

না জানি পরাণের বন্ধু

পড়িল কি ফেরে ॥

না আইল না আইল বন্ধু

ক্ষতি নাই সে তাতে ।

না জানি বিপদে বন্ধু

পড়িল কি পথে ॥

বিষম নদীর ঢেউ রে

অলছ-তলছ পানি ।

কি জানি পহুঁতে বন্ধুর

ডুবেছে নাওখানি ॥

উইড়া যাওরে বনের পংখী

খবর দিও তারে ।

তোমার সুনাই লইয়া যায়

দেওয়ান ভাবনার ঘরে ॥

(ভাবনায় লইয়া যায় রে ।)

হৃৎপ্রিয় যুগল যুগল

সুন্দর দেখিয়া ভাবনায়

নইয়া যায় রে ।

নইয়া যায় নইয়া যায়

নইয়া যায় রে ॥

—অজ্ঞাত কবি

* *

ফুল হইয়া ফুটিতাম বন্ধুরে যদি কেওয়া বনে ।

নিতি নিতি হইত বন্ধু দেখা তোমার সনে ॥

তুমি যদি হইতেরে বন্ধু আসমানের চান ।

রাজি-নিশা চাইয়া থাকতাম খুলিয়া নয়ান ॥

তুমি যদি হইতেরে বন্ধু ঐ সে নদীর পানি ।

তোমাতে চাহিয়া দিতাম তাপিত পরাগি ॥

একেত অবলা নারী ঘরে বন্দী রই ।

দারুণ দুঃখের জ্বালা কেমনে রইয়া সই ॥

যে দিন দেখ্যাছি তোমায় ঐ না জলের ঘাটে ।

সেই দিন হইতে মন ফিরে বাটে বাটে ॥

—চন্দ্রাবতী

* *

আইস আইস প্রাণের বন্ধুরে বইস আমার কাছে ।

দেখিব তোমার মুখে কত মধু আছে ॥

তুমি হও তরুরে বন্ধু আমি হই লতা ।

বেইরা রাখব যুগল চরণ ছাইড়া যাইব কোথা ॥

তোমাতে শুইতে দিবরে বন্ধু অঞ্চল বিছান ।

মুখেতে তুলিয়া তোমায় দিব সাচাঁ পান ॥

গলেতে গাঁথিয়ারে দিব মালতীর মালা ।

ঝাড়িয়া পুঁছিয়া দিব তোমার গায়ের ধূলা ॥

প্রেম যুগে যুগে

তুমি বন্ধু ভবন বন্ধু আমি বন্ধু ফুল ।
তোমার লাইগারে বন্ধু ছাড়বাম জাতিফুল ॥
ধেনু বৎস লইয়া তুমি যাওরে বাথানে ।
বন্ধের লাইগা থাকি চাইয়া পথপানে ॥
পথ নাহি দেখিবে বন্ধু বুঝে আখি জলে ।
পাগলিনী হইয়া ফিরি তিলেক না দেখিলে ॥
নয়নের কাজল রে বন্ধু আরে বন্ধু তুমি গলার মালা ।
একাকিনী ঘরে কান্দি অভাগিনী লীলা ॥
না যাইও না যাইও বন্ধুরে আরে চরাইতে ধেনু ।
আতপে শুকাইয়া গেছে বন্ধু তোমার সোনার তনু ॥
আইস আইস বন্ধু খাওরে বাটার পান ।
তালের পাংখায় বাতাস করি জুড়াকরে পরান ॥
আহারে প্রাণের বন্ধু তুমি ছিলে কৈ ।
তোমার লাইগা ছিকায় তোলা গামছা বান্দা দৈ ॥
গামছা বান্দা দৈরে বন্ধু শালি ধানের চিড়া ।
তোমাতে খাওয়াইব বন্ধু সামনে থাক্যা খাড়া ॥
শ্রীনাথ বানিয়া কয় গীরিত বড় জালা ।
দণ্ডেক অদেখা কহা না হও উতলা ॥

—শ্রীনাথ বানিয়া



চাঁদ কাজি

বাঁশী বাজান জানো না ।

অসম্ভব বাজাও বাঁশী পরাণ মানে না ॥

যখন আমি বৈসা থাকি গুরুজন্যর কাছে ।

(তুমি) নাম ধরিয়া বাজাও বাঁশী আর আমি মইরি

লাজে ॥

ওপার হইতে বাজাও বাঁশী এপার হইতে শুনি ।

(আর) অভাগিয়া নারী হাম হে সঁতার নাহি জানি ॥

যে ঝাড়ের বাঁশের বাঁশী সে ঝাড়ের লাগি পঁও ।

জড়ে-মূলে উপাড়িয়া যমুনায় ভাসাও ॥

চাঁদ কাজি বলে—বাঁশী শুনে বুঝে মরি ।

জীমু না জীমু না আমি না দেখিলে হরি ॥



বংশীবদন

আগে পাছে চলে মোর কত প্রিয় সহচরী
যমুনার জলে আজু যাই ।
খোজট কাড়িতে রূপ নয়ানে লাগিয়া গেল
সরম রহিল স্নেহ ঠাণ্ডি ॥
আজু দেখিলুঁ রূপ কদম্বের তলে ।
হিয়ার মাঝারে মোর না জানি কি জানি হৈল
নিরবধি ধিক ধিক জলে ॥
কেন বা চঞ্চল চিত নিবারিতে নারি গো
মন মোর থির নাহি বান্ধে ।
ভিলে ভিলে বারে বারে মুরুছা পাইয়া থাকি
চেতন পাইলে প্রাণ কান্দে ॥
ধীরে ধীরে পা-খানি বাড়াই কত ছল করি
তাহে গুরুজনেরে ডরাই ।
বংশীবদন কহে শুন অনুরাগিনি
পিরিতি অনল না নিভাই ॥



রাধামোহন ঠাকুর

হরি হরি কোহই অপরূপ বালা ।

কুন্দন কনয়া

কাস্তি কলেবর

নিরূপম রূপক শালা ॥

চিকন চামরি

চামর-চয়-রুচি

পদম বিলম্বিত-কেশা ।

কাস্তি-কলাযুত

কামিনী-মদহর

ত্রিভুবন-বিজয়ী-বেশা ॥

ইন্দীবর-বর

গরব-গরাসিত

খঞ্জন-গঞ্জন-নয়না ।

কোমল বিমল

কমলক কৌশল

জিত স্মিত-বিকশিত-বয়না ॥

থল-কমলারূপ

রাতুল পদতল

জিত-চাঁদ নখ-চাঁদ-শোভা ।

হেরইতে লাবনি

অমিয়াসার জিনি

রাধামোহন মনোলোভা ॥



ভারতচন্দ্র

কি লাগিয়া যাই যাই কহ হে ।
প্রাণনাথ এইখানে বারমাস রহছে ॥
বার মাস ঋতু ছয় লোকে তিন কাল কয়
কাল হয় এ কালে বিরহ হে ।
কোকিলের কলধ্বনি ভ্রমরের গণগণি
প্রলয় মলয় গন্ধ বহ হে ॥
বিজুলী জলের ছাট মস্ত ময়ূরের নাট
মণ্ডেকর কোঁতুক দুঃসহ হে ।
মজ্জিবে কমলকুল সাজাবে মূলার ফুল
ভারতের এ বড় নিগ্রহ হে ॥

* *

তোমারে ভাল জানি হে নাগর ।
কহিলে বিরস হবে সরস অন্তর ॥
যেমন আপন রীতি পরে দেখে সেই নীতি
ধরম করম প্রতি কিছু নাহি ডর ।
আগে ভাল বল যারে পিছে মন্দ বল তারে
একথা কহিব কারে কে বুঝিবে পর ॥
আদর কাজের বেলা তার পরে অবহেলা
জান কত খেলা দেলা গুণের সাগর ।
কথা কহ কত মত ভূলায়ে রাখিবে কত
তোমার চরিত্র যত ভারত গোচর ॥

* *

প্রেম যুগে যুগে

ওলো ধনি প্রাণধন শুন মোর নিবেদন
সরোবরে স্নান হেতু যেও না লো যেও না ।
যতপি বা যাও তুলে অতুলে ঘোমটা তুলে
কমল-কানন পানে চেও না লো চেয়ো না ॥
মরাল মৃণাল লোভে ভ্রমর কমল ক্রোভে
নিকটে আইলে ভয় পেও না লো পেও না ।
তোমা বিনা নাহি কেহ ঘামে পাছে গলে দেহ
বায়ে পাছে ভাঙে কটি ধেও না লো ধেও না ॥



রামপ্রসাদ

ঘন ঘন ঘন রব অবশ শরীরে সব
মনোভাব নিতান্ত দুরন্ত ।
কদম্ব কুমুম ফুটে বনভটে মন ছুটে
দুঃখ শাস্ত কান্ত কি কৃতান্ত ॥
কর্কটে বরিষা বাড়ে পক্ষী নাহি বাসা ছাড়ে
যাতায়াতে সকলে রহিত ।
ঘর ছাড়া পতি যার অভাগা কপাল তার
ধীরে ধীরে বিধি বিড়ম্বিত ॥
ধরাধর গুরু গর্জে যে বুলি মদন তর্জে
আটনি দামনী বাছ লাড়া ।
দেবরাজ দন্ধে মর্ম দেখ কি অনীত কর্ম
মড়ার উপরে হানে খাঁড়া ॥
সিংহে মহী একাকার জল ভিন্ন স্থল আর
ভিল অর্থ নাহি দেখি মাত্র ।
ভেকের পরম সুখ কাল কোকিলের দুখ
কামিনীর কৈপে উঠে গাত্র ॥
দিবা যায় গৃহ নাটে রজনীতে বুক ফাটে
আবেশে বাগিশ চাপে কোলে ।
যে সুখ পতির সঙ্গে প্রসঙ্গ কি তার সঙ্গে
হৃতের সুস্বাদ কোথা ঘোলে ॥



বাউল

আমার ডুবল নয়ন রসের তিমিরে ।
 কমল যে তার দল গুটালো, আঁধারের তীরে ।
 গভীর কালোর যমুনাত্তে
 চলছে লহরী
 —রসের লহরী ।
ও তার জলে ভাসে
 কানে আসে
 রসের বাঁশরী ।
আমি বাইরে ছুটি বাউল হয়ে
 সকল পাসরি ।
 ঘর ছাড়িয়ে কেঁদে মরি
 ভাসাই কুন্ত রসের নীরে ।
 আমার চোখ ডুবেছে রসের তিমিরে ।

* *

 আমি মজ্জছি মনে ।
 না জানি মন মজ্জল কিসে
 আনন্দে কি মরণে ।
ওরে আমার এখন ডাকা মিছে
 নাই যে হিসাব আগে পিছে
 আনন্দে মন নেচে ওঠে
তার নূপুর বাজে রাত্রে দিনে ।
 কই সে সাগর কই এ নদী
 তবু চলছে খবর নিরবধি

হুঃপ্রোম হুঃ হুঃ হুঃ

আজব রঙ্গ দেখবি যদি
মিলা নয়ন হৃদয় সনে ।

* *

নয়ন আমি মেলুম না
যদি না দেখি তায় প্রথম চাওনে ।
তোরা গন্ধে আমায় বল বলরে শ্রবণে ॥
তোরা বলগো ভ্রাণে বল শ্রবণে
তোর বন্ধু এসেছে পূর্বব গগনে ।
কমল মেলে কি আঁখি
তারে সঙ্গে না দেখি
তারে অরণ এসে দিল দোলা রাতের শয়নে ।
নয়ন আমি মেলুম না
যদি না দেখি তায় প্রথম চাওনে ।

* *

ওগো দরদি ।
আমার মন কেন উদাসী হতে চায় ।
তার ডাক নাহি হাঁক নাহি গো
আপনে আপনে চলে যায় ।
ধৈর্য না ধরে অস্তুরে
মন শিহরি নয়ন পরে
মন নীরবে সরবে সদা
বলে আয় গো আয় ।
ভাটী সোঁতে ভাটারি গড়ান
সাগর যেমন সদা টানে নদীর পরাগ ।
সে টান এতই প্রবল মনের গরল
অমৃত হইয়ে যায় ।

ইন্দ্রেন্দ্র যুগে যুগে

কেমন করে দেয় গো মন্ত্রণা

উড়িয়ে দেয় মনের পাখী

মানা মানে না।

উড়ে যায় বিমানের পানে

শীতল বাতাস লাগে গায়।



অজ্ঞাত গ্রাম্য কবি

মনের অনুরাগী পোষা পাখী আমার গিয়াছে উড়ে ।
যখন পাখীর মন ছিল সরল ফাকি দিয়া কাট্য গেল
তিন পৌঁচের শিকল ।

কাতেনা তোর পায়ে ধরি আমার পাখী দাও'ধরে
মনের অনুরাগী পোষা পাখী আমার গিয়াছে উড়ে ।
পাখীর সাথে ময়ূরের পাখা গৌরবরণ সেই না পাখা
চোখ দুইটি রাক্ষা
হিঙ্গুল বরণ সেই না পাখী দেখলে মুনির মন বুঝে
মনের অনুরাগী পোষা পাখী আমার গিয়েছে উড়ে ।

* *

বাড়ীর কাছে কামার ভাই থাইয়া যাও পান
ভাল করে গড়াইও কাঁচি আলি কাটবে ধান ।
দুঃখের যৌবন প্রাণের বৈরী ।
আলি যাবে ধান কাটিতে খায়া যাবে কি ।
মেনা গাবীর ছানা দুধ গমের রুটি ।
দুঃখ যৌবন প্রাণের বৈরী ।
যৌবন জ্বালা বড়ই জ্বালা সহিতে না পারি,
যৌবন জ্বালা তেজ্য করি গলায় দিব দড়ি ।
দুঃখ যৌবন প্রাণের বৈরী ।
ঝাড়ের বাঁশ কাটেরে যাদু বন্দিও বাজেলা
তুমি যাদু বাণিজ্যে গেলে কে থাকে কাথলা ।
দুঃখ যৌবন প্রাণের বৈরী ।

হুঃখ যৌবন যুগে যুগে

হাটে যাও বাজারে যাও গাছে পাকা বেল
তুমি যাদু বাণিজ্যে গেলে রাখালে মারবে ডেল ।

হুঃখ যৌবন প্রাণের বৈরী ।

হাটে যাও বাজারে যাও কিনে আনো কলা
তুমি যাদু বাণিজ্যে গেলে কে ধরিবে, গলা ।

হুঃখ যৌবন প্রাণের বৈরী ।

যৌবন জ্বালা বড় জ্বালা সহিতে না পারি
যৌবন জ্বালা তেজ্য করে জ্বলে ডুবি মরি ।

হুঃখ যৌবন প্রাণের বৈরী ।

ঝাড়ের বাঁশ কাটিয়া যাদু বান্দিও লাওয়ের গুড়া
তুমি যাদু না যাইও বাণিজ্যে যাবে তোমার খুড়া ।
ঝাড়ের বাঁশ কাটিয়া যাদু বান্দিও লাওয়ের বাতা
তুমি যাদু না যাইও বাণিজ্যে যাবে তোমার দাদা ।

হুঃখ যৌবন প্রাণের বৈরী ।

লাউসাক দিব লাল পাগড়ী মাঝিরে দিব সোনা
আমার যাদু বাণিজ্যে যা'তে তোমরাই কর মানা ।

হুঃখ যৌবন প্রাণের বৈরী ।

যৌবন জ্বালা বড় জ্বালা সহিতে না পারি
যৌবন জ্বালা তেজ্য করে গলায় দেব ছুরি ।

হুঃখ যৌবন প্রাণের বৈরী ।

* *

ও রায় কিশোরী তোর সনে মোর কথা ছিল কি ।
ঐ কাল জলে চান করাব সই
ও সহরে ডাল ভাঙ্গিয়া বাতাস করি ।

তোর সনে মোর কথা ছিল কি ।

প্রেম যুগে যুগে

বেড়াই আমি তোমার লাগে

অনুধারী হলাম সাথে তোমার লাগে

ঘুরছি আমি রাত্রদিন, করিছো কেন চাতুরী ।

তোর সনে মোর কথা ছিল কি ।

ও সহরে তোমার লাগে পাক পাড়িয়ে

পথের দুর্বা মাইরাছি ।

তোর সনে মোর কথা ছিল কি ।

ও রায় কিশোরী তোর সনে মোর কথা ছিল কি ।

* *

নটবর গত নিশি কোথায় কল্লেন ভোর ।

বেলা গেল সন্ধ্যা লাগল গৃহে দাও বাতি

রাঁধিয়া বাড়িয়া অন্ন হে জাগব কত রাতি হে ।

ভাত হ'ল কড়কড়া হ'ল হে নটবর

ব্যঞ্জন হলরে বাসী

শিকার উপর দুধের বাটী

হানা গেল সাছি হে (নটবর) ।

আত্র ধরে ঝোঁপা ঝোঁপা তেঁতুল ধরে বেকা

বাছিয়া বাছিয়া কর পিরিত যাহার হাতে শ'্যাকা হে । (নটবর)

বেলা গেল সন্ধ্যা হল কাক কোকিল গেল বাসা

উঠ উঠ প্রাণ শয্যা ছাড়ি দেও একবার দেখা । (হে নটবর)

বড় পাতারি চাকল চুকল বাঁশ পাতারি সরু

দেখে শুনে ক'রো পিরিত যাহার মাজা সরু । (হে নটবর)

* *

মালা কার গলে দিবরে ও প্রাণ ভ্রমরা

চাঁপা ফুলের মোহন মালা ।

আমি না জানি উঠিতে না জানি বসিতে না জানি

এ কেশ বাঁধিতে

ইঞ্জেন মূলে মূলে

সরু সূতার বস্ত্র না জানি পড়িতে মূই নারী অন্ন বয়সে ।

রাজার ঝিয়ারী মাটির কলসী

যায় কল্যা যমুনার জলে ।

কলসীর ভারে চলিতে না পারে

হেলে ছলে পড়ে বন্ধুর গারে ।

(মালা কার গলে দিবরে ।)

জলেতে রাখিব জলেতে বাড়িব জলেতে ভাসাব হাঁড়ি

যে মোরে ভাজিল এ নবীন পিবিতি তাঁই যেন হয়

এ পাপের দায়ী ।

(মালা কার গলে দিবরে ।)

আমারি বন্ধু অস্তুরি বাড়ি যায় আমারি বাড়ী দিয়া ঘাটা

আরকে দিন দেখিলে আপন নজরে পাষণে ভাজিব মাথা

(মালা কার গলে দিবরে ।)

বন্ধুরী বাড়ীতে একজোড়া কবিতর আভাগার বাড়ীতে চার

এক মুষ্টি শরিষা ফিকিয়া মারিলে খায় আর বাকুম

বাকুম করে ।

(মালা কার গলে দিবরে ।)



রত্নবাহু

গাদলা নাই ঝড়ি নাই
কাশিয়ার ফুল ফুটে ।
নাচিয়া বেড়ায় খঞ্জনগুলা
ইতি-উতি ছুটে ॥
নদীর জল টলমল
দেখা যায় ভাল ।
মাথার উপর আকাশখানি
খালি সব নীলা ॥
সাঁঝের বেলা পূরব দিগে
ঝলক দিয়া চান্দ ।
আকাশের গায় উঠে অই
কেমন তার ছান্দ ॥
সিঁজাহারের ফুলে ফুলে
ঢাকিল সব বন ।
সুবাস পায় ঘরে থাকিব
কাহারো না হয় মন ॥
সব ঠাই ছড়ায় বসে
ফুর ফুরা বায় ।
লাখে লাখে ভ্রমরা উড়ে
মুতি ফুলের গায় ॥

হুগোয় যুগে যুগে

এমন সময় নদীর কূলে
বাঁশীত দিল সান ।
গলে মালা চিকণ কালা
করে রাখা রাখা গান ॥

* *

রূপসী যতেক ছিল ব্রজের বউরী ।
সকলে বাহির হইল কেহ নাই বৈরী ॥
সকলি মিলিল আসি নিকুঞ্জের বনে ।
ডালি ভরি তুলি ফুল আনে জনে জনে ॥



জয়নারায়ন সেন

অন্য নাস্তিকার ঘরে নিশীথে বঞ্চিয়া ভোরে
মোর কাছে এসেছিল। তুমি ।
খণ্ডিতা অধীরা হৈয়। মন-রাগ না সহিয়।
মন্দ কাজ করেছিন্তু আমি ॥
রঙ্গনের মালা দিয়। দহাতে বন্ধন দিয়।
কর্ণ-উৎপালে গাৰ্ভিচ্ছিলে ।
সেই অভিমান মনে করিয়া আমার সনে
রস রঙ্গ সকলি ত্যজিলে ॥
আর দঃখ মনে জ্বলে একদিন নৃত্য কালে
পদের নৃপুৰ খসেছিল ।
ভরা তুমি দিতে পায় বিলম্ব হইল তায়
দিতে দিতে ভাল ভঙ্গ হইল ॥
তাতে আমি মান করি নৃত্যগীত পরিহারি
বসিয়। রহিল মৌনী হয়ে ।
যত মাধ কৈলা তুমি পুনঃ না নার্চিন্তু আমি
তাতে রৈলে বিরস শুইয়ে ॥



জানন্দ ময়ী

ভাবি যাই যথা আছ হইয়া যোগিনী ।
না সহে এ দারুণ বিরহ আশুনি ॥
যে অঙ্গে কুঙ্কম তুমি দিয়াছ যতনে ।
সে অঙ্গে মাখিব ছাই তোমার কারণে ॥
যে দীর্ঘ কেশেতে বেণী বেঁধেছ আপনি ।
তাতে জটাভার করি হইব যোগিনী ॥
শীত ভয়ে যে বকেতে লুকায়েছ নাথ ।
বিদারিব সে বুক করিয়া করাঘাত ॥
যে কঙ্কণ করে দিয়াছিল হৃষ্টমনে ।
সে কঙ্কণ কুণ্ডল করিয়া দিব কানে ॥
তব প্রেমময় পাত্র ভিক্ষাপাত্র করি ।
মনে করি হরি স্মরি হই দেশান্তরী ॥
আর তব স্থাপ্যধন বিষম যৌবন ।
লুকাইয়া নিয়া ফিরি দরিদ্র যেমন ॥



নিধুবাবু

কাজল নয়নে আর দিওনা কখন ।
শরে কেবা নাই মরে
বিষ যোগ তাহে কেন ॥
তোমার কটাক্ষে কেহ না বাঁচিছু প্রাণে
বাঁচিবার এক হেতু আছে তাহে শুন ।
সুখা হলহল সুরা নয়নের তিন গুণ ॥

* *

বিচ্ছেদ যাতনা অতিশয় তাত নয় গো ।
সুখের জলধি শ্রোত নিরবধি বয় গো ॥
সদা নেত্র উন্মীলনে হেরি সে মনোরঞ্জে ।
প্রতি পলক পতনে অঞ্জে মিশায় গো ॥
যখন থাকি নিদ্রিত স্বপনে প্রাণ পুলকিত ।
সে মনে হয়ে উদ্ভিত যেন কথা কয় গো ॥

* *

তোমার নয়ন রক্ষক আমার ও মৃগনয়নী ।
মৃগের গমন দ্রুত আমি পলাইব কত
পথ না পাই ধনি ।
তাহার সহিত হাসি দেখ আর কেশ ফাঁসি
অবগেয়ে তব আঁখি কহে কি না জানি না ।
আমি হইয়াছি ভীত ভরসা বচনামৃত
বাঁচিবার হেতু জানি ।



কালী মির্জা

সই যে যার মরম জানে
সে কি তারে ত্যজিতে পারে ।
না বুচে আঁখির আশা
ও মুখ হেরে ।

যার যাতে মজে মন
সে তার পরম ধন
সতত সে প্রাণপণ করে তাহাবে ।



বাম বসু

তুমি হও মহাজন অবলার ।
বাঁধা রেখে মন লব প্রেমধন
আমার যৌবন হবে জামিনদার ॥
পিরিতেরি খাঁতক আমি হবো হে তোমার
পরিশোধ না হবে প্রণয় ।
মন বাধা থাকবে আমার প্রাণ যতদিন রয় ॥
মুদে মুখ ভুঞ্জ চিবদিন
মলে এ ধাবে হবে উদ্ধার ।
এসেছি পিরিতেব দেশে প্রাণ প্রেমিক না পাই
হেন স্থান নাহি প্রাণ সপে প্রাণ জুড়াই ।
পেয়েছি হে প্রেমিক তোমায়
বঞ্চিত কোবো না বঁধু কিঞ্চিতে। আমায় ।
আপনাব কোরে লও আমারে
প্রেমনিধি দিয়ে ধার ॥

* *

হর নট হে আমি যুবতী
কেন জালাতে এলে রতি-পতি ।
কোরো না আমার দুর্গতি ॥
বিচ্ছেদে লাবণ্য হয়েছে বিবর্ণ
ধরেছি শঙ্করের আকৃতি ॥

সুপ্ৰেম যুগে যুগে

কীণ দেখে অঙ্গ
আজ অনঙ্গ একি রঙ্গ হে তোমার ।
হর জমে শরাঘাত
কেন করিতেছ বার বার ॥

ছিন্ন ভিন্ন বেশ দেখে কও মহেশ
চেন না পুরুষ প্রকৃতি ।
হার শূন শঙ্কু-অরি ভেবে ত্রিপুরারি
বৈরী হয়ে। না আগার ।
বিচ্ছেদে এ দশা বিগলিত-কেশা
নহে এতো জটাতার ।
বয়সে নবীন। প্রাণপতি বিনা
যোগিনী হয়েছি সম্প্রতি ॥
কঠে কালকূট নয় দেখ পরেছি নীলরতন
অরুণ হল নয়ন কবে পতি বিরহে বোদন ।
এ অঙ্গ আমার ধূলায় ধূসর
মাখি নাই বিভূতি ॥



মধুসূদন

কে জানে আগুন তার গুণাগুণ
সেই জানে এ কেমন আগুন যার মনে এ আগুন ।
দেখিলাম নানা স্থানে না দেখি নয়নে,
মনে মনে জলে এ আগুন ।
প্রজলিত অন্তরে হয় নাকো সৎকার
কেবল দেহদাহ সদাই হাহাকার ।
পিপাসায় প্রাণ জলে
যদি যাইরে জলে
আরও জলে জালা হয় দ্বিগুণ ।
সে না হয় নির্বাণ
এমনি এ আগুন ।
নিবালে চতুর্দণ্ড এমনি তার বিদগুণ ।
সূদন বলে হরি উহু মরে যাই
তার বলিহারি যে দিলে আগুন ॥



ইক ঠাকুর

যার স্বভাবে। যাঁ থাকে প্রাণনাথ
তাকি ঘুচাতে কেহ পারে।
নিদর্শন তোমারে ॥

গুনেছো কখনো অঙ্গারের মলিনো
ঘুচে কি দূধে ধুলে পরে।
নিহতক যদি রোপণো হয়ে।
শত ভারো শর্করে।
সে মিষ্ট রসো না হয়ো কখনো
নিজ গুণ প্রকাশো করে ॥

* *

পিরিতি নাহি গোপনে থাকে
গুনলো সজনি বলি তোমাকে।
গুনেছো কখন জলন্ত আগুনো
বসনে বন্ধনো বাধে।
প্রতিপদের চাঁদ হরিষে-বিষাদ
নয়নে না দেখে উদয় লেখে।
দ্বিতীয়ের চাঁদ কিঞ্চিৎ প্রকাশ
তৃতীয়ের চাঁদ জগতে দেখে ॥



দাশরাথি রায়

বধিব না আয়রে নলিনীর অবোধ ভুঙ্গ ।

কি যশ আছে

লোকের কাছে

ভোরে ব'ধে রে পতঙ্গ ॥

ডাকে যত পলায় তত অলি পাইয়ে আতঙ্ক ।

মান বাড়াতে মান ভরে

ছিলাম মান সরোবরে

সে মান হরে হাসালি রে বৈরঙ্গ ।

কমল ফেলে

রস কি পেলে

করে মালতীর সঙ্গ ।

তোর কি চুখের তৃষ্ণা ঘোলে হয়েছে রে ভঙ্গ ॥

* *

মন দিয়ে অরসিকে মরি ।

মরি মরি মনাগুনে মরি গুমরি যায় বুঝি যায় গো

ভেবে ভেবে তার গুণ ভেবে

বিরলে কাঁদি গুন গুন রবে সহচরি ॥

অবলারে ক'রে ধাঙ্গা সহ

মজ্জালে মজ্জিব ব'লে সে মজ্জিল কৈ ।

সে আমায় যে কাঁদায় প্রেম দায় একি দায় ।

তথাপি তাহারে কেন মন চায় কি করি ॥



শ্রীধর কথক

কে বলে বিচ্ছেদ ভাল নয় সেত ভাল নয় ।
আমি জানি সেই ভাল তাতে অতি সুখোদয় ॥
আমি ত বিচ্ছেদে ব্রতী হয়েছি সখি সম্প্রতি ।
তাতে কি হয়েছে ক্ষতি বরঞ্চ সুখ সঞ্চয় ॥
দিনান্তে প্রাণান্ত হতো তাতে নাহি দেখা দিতো ।
এখন সে যে অবিরত অন্তরে আছে উদয় ॥

* *

তবে কি সুখ হতো
মন যারে ভালবাসে সে যদি ভালবাসিত ।
কিঞ্চুক শোভিত জাণে কেতকী কণ্টক হীনে
ফুল হৈল চন্দনে ইক্ষুতে ফল ফলিত ।
প্রেম সাগরেরি জল হত শূন্যতল
বিচ্ছেদে-বাড়বানল তাহে যদি না থাকিত ॥

* *

ভালোবাসিবে বলে ভালোবাসিনে ।
আমার স্বভাব এই তোমা বই আর জানিনে ॥
বিধুমুখে মধুর হাসি
দেখিলে সুখেতে ভাসি
সে জন্ম দেখিতে আসি
দেখা দিতে আসিনে ॥



ঈশ্বর গুপ্ত

সলিলে কমল হয় সই
সদা সবে কয় ।
হেরি পদ্মের উপর পদ্ম
আবার তাতে বারি রয় ॥
আমরা এ পথে আসি যাই
এমন রূপ দেখি নাই
কমলের জলে কমল ভেসে যায় ।
তোরা দেখে যা গো সখি
হল এ কি দায় ॥
তোরা দেখ ওই প্রাণ সই
এত বারি নয় ।
অনল ক্রীমুখ কমল গুখাল
বল কি করি উপায় ॥

* *

যতনে মন প্রাণ তোমায় দান
করেছি লো প্রাণ নিয়ত তব আঞ্জিত
- তবু বলহে পরের প্রাণ ।
ভুলে ধর্ম পানেও চেয়ে দেখ না
নিশিদিন তুমি মন তোষণা ।
তবু মন
এ দুঃখে প্রাণে বাঁচি না ।

প্রেম যুগে যুগে

উচিত নয় বিশ্বযুগী অমুগতে করা দুঃখী
হান কি দোষে নির্দোষীয়ে বাক্য-বাণ ।
বুঝলেম প্রেমসী আমায় ক'রে দোষী
অশ্রু জনে দিবে প্রাণ ।
আমি নিতান্ত অমুগত তোমারই প্রেমে রত
কেন মিছে কথায় বাড়াও মন অভিমান ॥



গোপাল উড়ে

কি মনে অধোবদনে ।

ধরাসন করেছ আসন হাসি নাইক চন্দ্রাননে ।

নয়নে নিরখি যেন নবঘন

অলুভবে বুঝি হবে বরিষণ ।

হলো হলো যেন হয় হেন মন

হৃদাকাশে হেরি চাতকীসনে ॥

চিকুরে নিরখি খেলিছে পবন

ধূলাতে ধূসরা করি নিরীক্ষণ ।

আজি মন-করী কেন দুঃখ বারি

মস্ত হলো ধরায় বরিষণে ॥



माईकेल यथुसूदन

वृथा

কেন এত ফুল ভুলিল সজনি
ভরিয়া ডালা ?
মেঘাবৃত হ'লে পরে কি রজনী
তারার মালা ?
আর কি যতনে কুসুম-রতনে
ব্রজের বালা ?
আর কি পরিবে কতু ফুল-হার
ব্রজ কামিনী ?
কেন লো হরিলি ভূষণ নতীর
বনশোভিনী ?
অলি বঁধু তার কে আছে রাখার
হতভাগিনী ?
হায় লো দোলাবি সম্বি কার গলে
মালা গাঁথিয়া ?
আর কি নাচে লো তমালের তলে
বনগালিয়া ?
প্রেমের পিজয় ভাজি পিকবর
গেছে উড়িয়া !

ਬੰਨੀ ਖਾਨੀ

কেও বাজাইছে বাঁশী, স্বজনি,
মৃত-মৃত স্বরে নিকুঞ্জ-বনে ?
নিবার উহারে, শুনি ও ধ্বনি
দ্বিগুণ আশুন অলোচনা মনে !—

ইন্ডোনেশিয়ায় যুগে যুগে

এ আশুনে কেন আহুতি-দান ?
অমনি নারে কি জ্বালাতে প্রাণ ?
বসন্তে-অসন্তে কি কোকিলা গায়
পল্লব-বসনা শাখা-সদনে ?
নীরবে নিষিড় নীড়ে সে যায়—
বাঁশী ধ্বনি আজি নিকুঞ্জ-বনে ?
হায়, ও কি আর গীত গাইছে ?—
না হেরি শ্রামে ও বাঁশী কাঁদিছে !
তুনিয়াছি সই ! ইন্দ্র কুশিয়া,
গিরিকুল-পাখা কাটিলা যবে,
সাগরে অনেক নগ পশিয়া
রহিল ডুবিয়া জলধি-ভবে ।
সে শৈল সকল শির উচ্চ করি
নাশে এবে সিদ্ধ-গামিনী তরী ।
কে জানে কেমনে প্রেম-সাগরে
বিচ্ছেদ-পাহাড় পশিল আসি !
কার প্রেম-তরী নাশ না করে—
ব্যাধ যেন পাখী, পাতিয়া কাঁসি—
কার প্রেম-তরী মগনে না জলে
বিচ্ছেদ-পাহাড়—বলে কি ছলে !
হায় লো সখি ! কি হবে স্মরিলে
গত মুখ ? তারে পাব কি আর ?
বাসি ফুলে কি লো সৌরভ মিলে ?
ভুলিলে ভাল যা—স্মরণ তার ?
মধুরাজে ভেবে নিদাঘ-জ্বালা,
মধু কহে, সহ, ব্রজের বালা ।

হেমচন্দ্র

মদন-পূজা

কি দিয়ে মদন পূজিব তোমারে অনঙ্গ তুহারী নাম ।
বসন্ত সমীর নিশোয়াস তোর কুসুম-লাবণ্য ঠাম !
সুবাণ্ড ঝঙ্কার সঙ্গীত উছাস বচন তুহার মানি,
হিয়ার মাঝারে প্রেমের নিখর তুহারি পরান জানি ।
কেমনে মদন পূজিব তোমারে, তুহারি ধনুর ভয়ে,
নয়ন দিঠিতে দিঠি জড়াইয়া দাঁড়াই অধীর হয়ে ।
বলি বলি বলি, শুনি শুনি শুনি, থমকে থমকে চাই,
জানি দিবানিশি তুহারি তরাসে জুড়াতে নাহিক পাই ।
পূজিব কিরূপে তোমায় মদন তুহার পূজার প্রথা,
কেহ না জানিল কেহ না শিখিল সে গুঢ় রহস্য কথা !



বনদেব পালিত

পরোধর

অঞ্চলেতে ঢাকা, প্রিয়ে তব পরোধর
মেঘাবৃত গিরি প্রায় ছিল শোভাকর ;
উপরেতে তরলিত মুকুতার হার
বিহার করিতেছিল মুকুতা আকার ।
এখন অম্বর-মুক্ত করি মনঃসাথে,
অপূর্ব মোহন ঠাম নিরখি অবোধে ।
পীনোন্নত শূকঠিন রক্তত বরন,
জিনিয়া ধবল গিরি মনোজ্ঞ গঠন ।
পুনঃ ভাবি ধরাধর বঙ্কুর বিষম,
পরোধর নধর, চিকন মনোরম ।
তাই যুক্তি করি মনে, কাম-বায়ু ভরে,
উঠিছে তরঙ্গ তব বক্ষ সরোবরে ;
অথবা মানস সরঃ করি পরিহার,
দ্বিব্য দুই হংস আসি করিছে বিহার ।
আবার মৃণাল-তুল্য ভুজ বিলোকনে,
কুচ পদ্মকলি বলি ভ্রম হয় মনে ;
যৌবন-প্রভাতে কিবা নব বিকসিত,
চুচুক ভ্রমর তার পতিত মোহিত ।
কভু ভাবি মুগ্ধ হয়ে তব কেশপাশে,
কাদস্থিনী ভ্রমে বুঝি কদম্ব বিকাশে ।
কভু ভাবি তব রূপ-কীর্ত্তি মম্বনে,
ঐরাবত-কুম্ভ যুগ উঠিছে গগনে ।

কুশোভা যুগে যুগে

কখনো বা মনে মনে করি অলুভব,
ত্রিভুবন পরাভব করি মনোভব,
আপন দুন্দুভিযুগ অহঙ্কার করি
রেখেছে উলটি তব বক্ষঃস্থলোপরি ।
এইরূপ বিবিধ কল্পনা করি মনে,
অবশেষে এই স্থির করি, চন্দ্রাননে,
জন্মে তব মনোমত্ত পাইয়া সদন,
সমাগত হয়েছেন আপনি মদন ।
তাই তাঁর পূজা হেতু ওখানে নিশ্চিত,
পূৰ্ণ-কুন্ত পয়োধর হয়েছে স্থাপিত ।
চন্দ্রনে উহাতে লিখি মকর আকার,
চৌদিক বেড়িয়া দিব কুসুমের হার ;
পল্লব স্বরূপ ধনি এ কর-পল্লবে
রাখিব ঘটের মুখে কাম মহোৎসবে ।
সিন্দূরের বিনিময়ে নখ-ক্ষত-ছটা
অপূৰ্ব শোভিবে যেন প্রবালের ঘটা ।

বসন্ত

শোভে কিবা তরুণতা নবপত্র-মালা,
ডাকে বসন্ত-গরল প্রতি বৃক্ষ ডালে ।
তারে সলজ্জ করিতে কল-ঘোষ হর্ষে
উচ্চৈঃস্বরে মধুর মোহন তান বর্ষে ॥

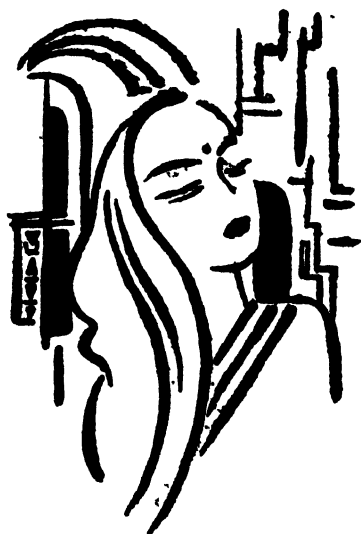
গঙ্গাত্য ফুল মুকুলে, সহকার কুঞ্জে,
মস্ত দ্বিরেক-নিকরে অনিবার গুঞ্জে ;
চারি রসাল অবলম্বি মনোভিলাষে
স্নেহাননে কুসুম মাধবিকা বিকাশে

প্রেম যুগে যুগে

পুল্পাদগমে শিমুল, কেশর কোবিদারে
একান্ত পান্ধু বনিতার মনো বিদারে ।
তাহে সুমন্দ মল্লম্ভাচল গন্ধবাহ
আলে পুনঃ শতশুণে বিরহাগ্নি দাহ ॥

জ্যোৎস্নাশ্রিতা রজনীতে বসি হর্ষা-ছাদে
সীমন্তিনী সহিত কাম-সখ প্রসাদে ।
ক্রীড়া নিমগ্ন করি আসব পান-পাত্রে
ক্রীড়া করে রসিক মন্থন-বিদ্ধ গাত্রে ॥

উল্লসিতা সুরস মঞ্চ-রসে নবীন।
হস্তে লয়ে মদ-ভরে অতি মধু বীণা,
মোহে প্রিয়ে ললিত গীত সুধা তরঙ্গে,
বর্ষে 'বসন্ত-তিলকে' কবি মাতি রঙ্গে ॥



বক্ষিষ চন্দ্র

সাধের তরঙ্গী আমার কে দিল তম্ভে ।

কে আছে কাণ্ডারী হেন কে যাইবে সঙ্গে ।

ভাসল তরী সকাল বেলা

ভাবিলাম এ জল খেলা

মধুর বহিবে বায়ু ভেসে যাব রঙ্গে ।

গগনে গরজে ঘন

বহে খর সমীরণ

কুল ত্যাজি এলাম কেন মরিতে আতঙ্কে ।

মনে করি কূলে ফিরি বাহি তরী ধীরি ধীরি

কূলেতে কটক তরু বেষ্টিত ভুজ্জলে ।

বাহারে কাণ্ডারী করি সাজাইয়া নিহু তরী

সে কভু দিলনা পদ তরঙ্গীর অঙ্গে ।



নবীনচন্দ্র দেন

প্রেমের দুঃখ

কেন দুঃখ দিতে বিধি প্রেমনিধি গড়িল ?
বিকচ কমল কেন কণ্টকিত করিল ?
ডুবিলে অভঙ্গ জলে তবে প্রেম-রত্ন মিলে,
 কারো ভাগ্যে মৃত্যু ফলে,
 কারো কলঙ্কে কেবল ।

বিদ্যুৎ-প্রতিম প্রেম দূর হতে মনোন্নম
 দরশনে অল্পপম,
 পরশনে মৃত্যু ফল ।

জীবন-কাননে হায়, প্রেম মৃগ তৃষ্ণিকায়,
 যে জল পাইতে চায়—
 পাষণে সে চাহে জল ।

আজি যে করিব প্রেম মনে করি স্মৃধা যেন,
 বিচ্ছেদ অনলে ক্রমে
 কালি হবে অশ্রুজল ।



বিশ্ববীন্দ্র

অন্তিম

নয়ন-অমৃত রাশি প্রেমসী আমার
জীবন-জুড়ান ধন যদি ফুলহার ।
মধুর মৃত্তি ভব
ভরিয়া রয়েছে ভব,
সমুখে সে মুখশশী জাগে অনিবার ।
কি জানি কি ধুমধোরে
কি চোখে দেখেছি তোরে ,
এ জনমে ভুলিতে রে পারিব না আর ।

* *

তবে কি সকলি ভুল !
নাহি কি প্রেমের মূল—
বিচিত্র গগন-ফুল কল্লনাগতার '
মন কেন রসে ভাসে,
প্রাণ কেন ভালোবাসে
আদরে পরিতে গলে সেই ফুলহার ' ।

শত শত নয়নারী
দাঁড়ায়েছে সারি সারি,
নয়ন খুঁজিছে কেন সেই মুখখানি,—
হেরে হারানিধি পায়,
না হেরিলে প্রাণ যায়,
এমন সরল সত্য কী আছে না জানি ।

• •

দুরৈন্দ্রনাথ মজুমদার

নারী-স্ফটিক

নবীম জনমে নর জাগি সচকিতে
শ্রামকাস্তি নিরখে ধরার,
জলে স্থলে বিমল আলোকে পুনকিতে,
চরাচর বিরহে অপার ;—
সমীরণে দোলে ফুল,
গুঞ্জে কুঞ্জে ভুলকুল,
পাখি গায় বসি শাখী পরে,
সবে সুখী, নর শুধু কাতর অন্তরে !

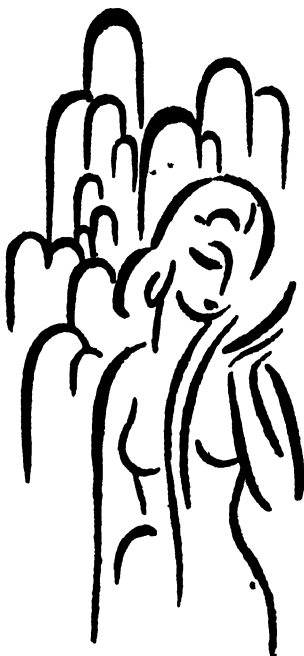
শূন্য মনে বসি শূন্য আকাশের তলে
শূন্য দেখে শোভিত সংসার ।
নির্মথিতে নাহি পারে নিজ বুদ্ধিবলে
কিলে চাঃখী, কি অভাব তার !—
বুঝি ভাব মানবের
ধাতা তার মানসের
করিলেন প্রীতিমা রচনা ;—
ভুলোক পুনক-পূর্ণ জন্মিল ললনা ।

পূজিবর তরে ফুল ঝরে পড়ে পায়,
ছদ্ম ফল পরশে পাখিতে,
মুগ্ধ মুখে কুরঙ্গিণী মুগ্ধ মুখে চায়,
ধায় অগ্নি অধরে বসিতে !

হৃদয়ে ঘুণে ঘুণে

লক্ষ্যে পদ রাগ-ভরা
অশোক লভিল ধরা ;—
এলোকেশে কে এল রূপসী !—
কোন্ বন-কুল, কোন্ গগনের শশী !

চন্দ্রোদয়ে হয় যথা ভিমির তাড়িত,
টুটিল মানিক্য মানবের !
অজানিত হর্ষভরে ব্যাকুলিত চিত
ঘুটিল বিরাগ জীবনের !



গিৰিশ ঘোষ

ধিকি ধিকি ধিকি জ্বলিছে অনল,
কেন এ জ্বালা মরমে চাপি ।
পাখি কুলস্বরে পন্নান শিহরে,
অনিল বহিলে কেন লো কাঁপি ।
কি যেন কি যেন, মনে হয় যেন,
এল এল এল, চলে গেল কেন,
হৃদয় মাঝারে কত কথা কই,
মনে মনে সাধি, কত জ্বালা সই,
মান করে মানা, কেমনে যাব,
সাধি কেমনে, কেমনে পাব,
নাহি সহ্যে আর, হয় বা প্রচার,
অনল কেমনে বসনে কাঁপি ॥



জ্যোতিরিন্দ্রনাথ ঠাকুর

দেলো সখি দে পরাইয়া চুলে
সাধের বকুল ফুল হার ।
আধ কোটা জুঁই গুলি যতনে আনিয়ে তুলি
দেলো দেলো ফুলময় সাজে
সাজায়ে আমারে সখি আজ ।
তুলে দেলো চঞ্চল কুন্তল,
কপোলে পড়িছে বার বার ।
আজি এত শোভা কেন আনন্দে বিবশা হেন
বিন্ধ্যধরে হাসি নাহি ধরে
লাবণ্য ঝরিয়া পড়ে ধরাতলে ।
সখি তোরা দেখে যা দেখে যা
তরুণ তনু এত রূপরাশি
বহিতে পারেনা বুঝি আর ।

* *

সহেনা যাতনা ।
দিবস গণিয়া গণিয়া বিরলে
নিশিদিন বসে আছি,
আঁখি মেলি পথপানে চেয়ে
সখাহে এলে না ।
দিন যায় রাত যায় সব যায়
আমি বসে হায় । .
দেহে বল নাই চোখে ঘুম নাই
শুকায়ে গিয়াছে আঁখি-জল ।
একে একে সব আশা
ঝোরে ঝোরে পড়ে যায় সহে না ॥

● ● ●

স্বর্ণকুমারী দেবী

মিলন

এমন চাঁদিনী নিশি পূলক-কম্পিত দিশি
এমনি বিজ্ঞন উপবনে ;
মুখেতে চাঁদের আলো দীপ্ত আঁখি তারী কালো
চেয়েছিল নয়নে নয়নে ।
কুঞ্চিত অলক চুল ঈষৎ দোদুল দুল
অঞ্চলে বকুল ফুল রাশ,
আখো গাঁথা মালাখানি হাতের বাধা না মানি
লুটাইছে চরণের পাশ !
তুলিয়া কুমুম হার সঁপিলাম করে তার
অনন্ত খুলিল আঁখি পরে,
মুহুর্তে বন্ধন চূর্ণ অগূর্ণ হইল পূর্ণ
স্পর্শ হল অধরে অধরে ।

* *

শুকাইতে রেখে একা, কেলিয়ে চলিলে সখা,
যাও যাও দূরদেশে স্মৃতে থেকে। এই চাই ।
যখন আসিবে ফিরে, শুনিও হরষ-ভরে,
জাগাতন করিবারে, অভাগিনী বেঁচে নাই ॥



অশ্বিনীকুমার দত্ত

চিরদিনের আমি গো তার,
আমার প্রাণের বঁধু আমার ;
ওগো সে মুখ দেখিলে আমি ভুলে থাকি
ত্রিসংসার ।
না জানি কি গুণ ক'রে ভুলায়ে রেখেছে মোরে,
এখন তারে না দেখিলে পোড়া চোখে
দেখি অঁধার ।
গোপনে কি কথা বলে, ভাসালে নয়ন জলে,
সে হ'তে প্রাণ বিকানু আমার,
আমি ভুলিতে যে নারি আর ;
(তারে ভুলিতে পারিনে আর) ।



রাজকুমার বাঘ

প্রেম যদি সই শিখতে হয়,
মাছুষের কাছে নয় ।
সাঁজের রবি, প্রেমের ছবি,
প্রেমের আলো আকাশময় ।
ওই রবি সই প্রেমের খেলা,
খেলছে কেমন সাঁজের বেলা,
আধেক আঁধার আধেক আলো,
কমলবালা চেয়ে রয় ;—
দূরে দুজন, ভবুও কেমন
প্রাণে প্রেমের তুকান বয় ॥



দেবেন্দ্রনাথ সেন

স্বভাব সুন্দরী

বসন্তের উষা আসি রঞ্জি দিল যুগল কপোলে ;
তাই ত ফুলের বাস ফুল-হাসি আননে প্রিয়ার !
নিদাঘের রোদ্ভ আসি বিলসিল ললাট নিটোলে ;
তাই গো প্রিয়ার ভালে জ্যোতি খেলে মহিমা ছটীর !
ঘনঘোর বর্ষারাত্রি বিহরিল অলক নিচোলে ;
তাই গো প্রিয়ার পিঠ কেশ-মেঘে সদা মেঘাকার !
নাচিল শরৎ-শশী রূপ-হ্রদে হিল্লোলে হিল্লোলে ;
তাই গো প্রিয়ার দেহ ফুলে ফুলে চলে চন্দ্রাকার !

রাহু কেতু দুই ঋতু শীত ও হেমন্ত শুধু হায়,
প্রিয়ার হৃদয়ে পশি ছড়াইল কঠিন তুষার ;
তাই প্রিয়ে তাই বখি সুকঠিন হৃদয় তোমার ?
উপাসনা আরাধনা সকলি ঠেলিয়া দাও পার !
আমি গো বখিতে নারি, দেবী তুমি অথবা রাক্ষসী,
পূর্ণিমার জ্যোৎস্না তুমি কিংবা ঘোর কৃষ্ণ চতুর্দশী ।

সখী

[সখীর গান ও স্ত্রীস্বামিকার উক্তি]

জ্বাদে তোয় পায়ের ধরি, গাও গাও সহচরী,
সে গান আবার !

ফুটুক লো বনফুল, জুটুক লো অলিকুল
করুক আকুল পিক বকুলে ঝঙ্কার !

বাক সখি জুড়াইয়া চির-বিরহিণী হিয়া—
ফুটুক অধরে হাসি দুঃখিনী রাধার !

ইশ্রোম যুগে যুগে

**“জনম জনম আমি তোমায় হেরি শু স্বামী,
আঁখি না জুড়ান !**

লাখ লাখ যুগে যুগে বঁধু হে ধরিত্রি বুকে
আকুলি-ব্যাকুলি মোর তব না ফুরাল !”
আহা কি মধুর গান,
জুড়াল তাপিত প্রাণ
বিষাদ প্রেমাদ সখি সকলি লুকাল !

“জনম জনম আমি জান হে অন্তর্যামী,
করিলাম গান !

তোমার দর্শন পাই মান রোষ ভুলে যাই,
হে শ্রাম, তোমার প্রেমে নাহি অকল্যাণ !”
আহা কি মধুর গান, জুড়াল তাপিত প্রাণ
আর সখি কঁাদিব না, মুছি'লু নয়ান !

“জনম জনম আমি তোমাতেই পাই স্বামী,
এই দাও বর !

হে বঁধু যে কাজ কর তাই হয় মনোহর
হে বঁধু যে সাজ ধর তাহাই সুন্দর !”
আহা কি মধুর গান, জুড়াল তাপিত প্রাণ
রূপে শুণে নাহি শ্যাম তোমার দোসর !

“জনম জনম আমি পেয়েছি হৃদয়-স্বামী
কতই যাতনা :

সুখ দাও সেও ভাল, দুঃখ দাও সেও ভাল,
আমার স্বভাব শুধু ও পদ কামনা !”

জুড়াইয়া যুগে যুগে

আহা কি মধুর গান, জুড়াইয়া গেল কান,
গোপীর ধরম শুধু ও পদ-বাসনা !

“জনম জনম আমি, চাই না হৃদয়-স্বামী
কোনো পুরস্কার !

চাই না রূপের কান্তি, সে শুধু আঁখির ক্রান্তি,
তুমিই প্রাণের শান্তি ব্রজ-গোপীকার !”

আহা কি মধুর গান, জুড়াইয়া গেল প্রাণ,
হে শ্রাম, তুমিই মম, মঙ্গল-ভাণ্ডার !

“জনম জনম আমি, করি গো হৃদয়-স্বামী,
এই সে বাসনা,—

আমি থাকি ক্রোড়ে ধরি, তুমি যাও নিদ্রা হরি,
আমি হেরি ওই মুখ হইয়ে মগনা !”

আহা কি মধুর গান, জুড়াইয়া গেল প্রাণ,
আহা এতো গান নয়, মধুর সাক্ষনা !

হৃদয়ে তোর পায়ে ধরি, গাও গাও সহচরী,
এ গান আবার !

ফুটিল লো বনকুল, জুটিল লো অলিকুল,
করিল আকুল পিক বকুলে ঝঙ্কার !

গেল সখি জুড়াইয়া, চির-বিরহিণী হিয়া—
ফুটিল অধরে হাসি দুঃখিনী রাধার !



গিরীন্দ্রমোহিনী দাসী

সুখা না গরল ?

বুঝিতে পারিনা, সখা, বল
এ কি প্রেম ?—সুখা না গরল ?
শিরা উপশিরা যায় জলে,
জুড়ায় না প্রণেপন দিলে ।—
বুঝি তবে প্রণয় গরল !
বল, সখা, বল মোরে তবে,
প্রেম যদি কালকূট হবে,
ত্যাগিতে পারিনা কেন তারে ?
রাখি কেন বুকের মাঝারে ?
মাখি কেন ছানিয়া ছানিয়া ?
—তবে বুঝি প্রণয় অমিয়া ?—
পড়িয়াছি সন্দেহের ঘোরে,
দেহ সখা বুঝাইয়া মোরে ।



গগন হরকরা

মনের মানুষের সন্ধানে

আমি কৌথায় পাব তারে

আমার মনের মানুষ যে রে !

হারান্নে সেই মানুষে

তার উদ্দেশে

দেশ বিদেশে

বেড়াই ঘুরে ।

লাগি সেই ছদয় শশী

সদা প্রাণ হয় উদাসী,

পেলে মন হত খুশী,

দেখতাম নয়ন ভ'রে ।

আমি প্রেমানলে মরছি জলে, নিভাই কেমন ক'রে,

মরি হায়, হায়, রে ।

ও তার বিচ্ছেদে প্রাণ কেমন করে,

ওরে দেখনা তোরা ছদয় চিরে !

দিব তার তুলনা কি,

যার প্রেমে জগৎ সুখী,

হেরিলে জুড়ায় আঁখি,

সামান্তে কি দেখিতে পারে তারে

তারে যে দেখেছে

সেই মজেছে

ছাই দিয়ে সংসারে !

মরি হায়, হায়, রে !

প্রেমের যুগে যুগে

ও সে না জানি কি কুহক জানে
অলক্ষ্যে মন চুরি করে !
কুল মান সব গেলরে
ভবু না পেলাম তারে,
প্রেমের লেশ নাই অস্তরে !
তাইতে মোরে দেয়না দেখা সে রে
ও তার বসত কোথায়
না জেনে তার
গগন ভেবে মরে !
মরি হায়, হায়, রে !

ও সে মানুষের উদ্দেশ্য যদি জানিস
কৃপা ক'রে,
আমার সুস্থ হইবে,
ব্যথার ব্যথিত হইবে,
আমার ব'লে দেবে !



অক্ষয়কুমার বড়াল

আত্মবান

হের, প্রিয়া, এই ধরা— তরু-লতা পুষ্প-ভরা,
গিরি-নদী-সাগর-শোভনা,
নয় দেহে, মুক্ত প্রাণে চাহিয়া আকাশ পানে,
নাহি লজ্জা, নাহিক ছলনা ।

হের, ওই মহাকাশ— লয়ে মেঘ রাশ রাশ,
লইয়া আলোক অন্ধকার,
কি গাঢ় গভীর সুখে পড়িয়া ধরার বুকে,
নাহি ঘৃণা, নাহি অহঙ্কার ।

শিরে শূন্য, পদে ভূমি, মধ্যে আছি আমি তুমি—
কল্প কল্প বিকাশ-বারতা !

আছে দেহ, আছে ক্ষুধা, আছে হৃদি, খুঁজি সুখা,
আছে মৃত্যু চাহি অমরতা !

আছে দুঃখ, আছে আশ্রি, আছে সুখ, আছে আশ্রি,
আছে ত্যাগ, আছে আহরণ,
তুমি সাগরের প্রায় পারিবে কি ঝটিকায়
উঠিতে পড়িতে আজীবন ।

আজি করে কর দিয়া বুঝিছ আমারে, প্রিয়া !
বুঝিছ কি মনঃপ্রাণ সব ।

নহে মৃত্যু, নহে শূন্য, নহে পাপ, নহে পুণ্য,
আত্মায় আত্মায় অমৃতব !

বুঝিছ কি এ আনন্দ— এতো আলো এত ছন্দ,
এত গন্ধ, এত গীতি গান ।

হুংপ্রেম যুগে যুগে

কত জন্ম-মৃত্যু দিয়া, কত স্বর্গ-মর্ত্য নিয়া
করি আজ তোমাকে আহ্বান !
বিস্ময়ে কাতর চক্ষে হের, এ কম্পিত বক্ষে
কত শোভা—কত ধ্বংস, প্রিয়া !
শত শত ভগ্ন স্তূপ কি বিরাট অপরাধ—
জন্ম-জন্ম আশা-স্মৃতি নিয়া !
চিত্রে শিল্পে কাব্যে গানে মগন তোমার ধ্যানে,
ভুচ্ছ করি কালের গরিমা !
পাষাণে পাষাণে রেখা— তোমার প্রণয়-লেখা,
মর জড়ে অমর মহিমা !
আসে সন্ধ্যা মৃদুগতি, আকাশ কোমল অতি,
জল স্থল নিষ্পন্দ নির্বাক,
পশু পক্ষী গেছে ফিরে, ফুটে তারা ধীরে ধীরে,
শ্রান্ত ধরা প্লথ বাহু পাক ।
এস এ হৃদয়ে মম, অফুট চন্দ্রিক সম,
প্রেমে স্নিগ্ধ, স্তব্ধ করুণায় ।
ঢেকে দাও সব ব্যথা, অসমতা, অন্ধমতা,
জড়িয়ে ছড়িয়ে আপনায় !



রবীন্দ্রনাথ

বন্দী

দাও খুলে দাও সখী, ওই বাহুপাশ,
চুষনমদিরা আর করায়ো না পান ।
কুম্বের কারাগারে রুদ্ধ এ বাতাস,
ছেড়ে দাও ছেড়ে দাও বন্ধ এ পরান ।
কোথায় উষার আলো, কোথায় আকাশ ।
এ চির পূর্ণিমারাত্রি হোক অবসান ।
আমারে ঢেকেছে তব মুক্ত কেশপাশ,
তোমার মাঝারে আমি নাহি দেখি ত্রাণ ।
আকুল অঙ্গুলিগুলি করি কোলাকুলি
গাঁথিছে সর্বাঙ্গে মোর পরশের কাঁড় ।
ঘুমঘোরে শূণ্য পানে দেখি মুখ তুলি—
শুধু অবিজ্ঞামহাসি একখানি চাঁদ ।
স্বাধীন করিয়া দাও, বেঁধে না আমায়,—
স্বাধীন হৃদয়খানি দিব তব পায় ॥

বর্ষার দিনে

এমন দিনে তারে বলা যায়,
এমন ঘনঘোর বরিষায় ।
এমন মেঘস্বরে বাদল-ঝরঝরে
তপনহীন ঘন তমসায় ॥

সে কথা শুনিবে না কেহ আর,
নিভৃত নির্জন চারিধার ।

ইন্ডোম যুগে যুগে

দুজনে সুখোমুখি গভীর দুখে দুখী,
আকাশে জল ঝরে অনিবার,
জগতে কেহ যেন নাহি আর ॥

সমাজ সংসার মিছে সব,
মিছে এ জীবনের কলরব ।
কেবল আঁখি দিয়ে আঁখির সূখী পিয়ে
হৃদয় দিয়ে হৃদি অনুভব,—
আঁধারে মিশে গেছে আর সব ॥

বলিতে ব্যথিবে না নিজ কান
চমকি উঠিবে না নিজ প্রাণ ।
সে কথা আঁখিনীরে মিশিয়া যাবে ধীরে,
বাদলবারে তার অবসান ।
সে কথা ছেয়ে দিবে দুটি প্রাণ ॥

তাহাতে এ জগতে ক্ষতি কার,
নামাতে পারি যদি মনোভার ।
আবগবরিষনে একদা গৃহকোণে
দু'কথা বলি যদি কাছে তার,
তাহাতে আসে যাবে কিবা কার ॥

আছে তো তার পরে বারো মাস ;
উঠিবে কত কথা, কত হাস ।
আসিবে কত লোক কত-না দুখশোক ;
সে কথা কোন্‌খানে পাবে নাশ ।
জগৎ চলে যাবে বারো মাস ॥

হুঃপ্রোচ মুণে মুণে

ব্যাকুল বেগে আজি বহে বায়
বিজুলি থেকে থেকে চমকায় ।
যে কথা এ জীবনে রহিয়া গেল মনে
সে কথা আজি যেন বলা যায়
এমন ঘনঘোর বরিষায় ॥

স্বপ্ন

দূরে বহুদূরে
স্বপ্নলোকে উজ্জয়িনীপুরে
খুঁজিতে গেছি কবে শিপ্রানদীপারে
মোর পূর্ব জনমের প্রথমা প্রিয়ারে ।
মুখে তার লোভরেণু, লীলাপদ্ম হাতে,
কর্ণমূলে কুন্দকলি, কুরুবক মাথে,
ভহুদেহে রক্তাস্বর নীবীবন্ধে বাঁধা,
চরণে নৃপুয়খানি বাজে আধা-আধা ।
বসন্তের দিনে
কিরেছি বহুদূরে পথ চিনে চিনে ॥

মহাকাল-গন্দিরের মাঝে
তখন গম্ভীর মস্ত্রে সঙ্ক্যারতি বাজে ।
জনশূন্য পণ্যবীথি, উদ্বেগ যায় দেখা
অন্ধকার হর্ম্য-পরে সঙ্ক্যারশ্মিরেখা ॥

প্রিয়ার ভবন
বঙ্কিম সংকীর্ণ পথে দুর্গম নির্জন ।
দ্বারে আঁকা শঙ্খচক্র, তারি দুই ধারে
দুটি শিশু নীপতরু পুত্রস্নেহে বাড়ে ।

প্রোচ মুগে মুগে

তোরণের খেত স্তম্ভ-’পরে
সিংহের গম্ভীর মূর্তি বসি দস্তভরে ॥

প্রিয়র কপোতগুলি ফিরে এল ঘরে,
ময়ূর নিদ্রায় মগ্ন স্বর্ণদণ্ড-’পরে ।

হেন কালে হাতে দীপশিখা
ধীরে ধীরে নামি এল মোর মালবিকা ।
দেখা দিল দ্বারপ্রান্তে সোপানের ’পরে
সন্ধ্যার লক্ষ্মীর মতো সন্ধ্যাতারা করে ।
অঙ্গের কুঙ্কুম গন্ধ কেশ ধূপ বাস
ফেলিল সর্বঙ্গে মোর উতলা নিশ্বাস ।
প্রকাশিল অর্ধচ্যুত বসন-অস্তুরে
চন্দনের পত্রলেখা বাম পয়োধরে ।

দাঁড়াইল প্রতিমার প্রায়
নগরগুঞ্জনকাস্ত নিস্তব্ধ সন্ধ্যায় ॥

মোরে হেরি প্রিয়া
ধীরে ধীরে দীপখানি দ্বারে নামাইয়া
আইল সম্মুখে,—মোর হস্তে হস্ত রাখি
নীরবে শুধালো শুধু, সঙ্করণ আঁখি,
“হে বন্ধু, আছ তো ভালো ?” মুখে তার চাহি
কথা বলিবারে গেছু, কথা আর নাহি ।
সে ভাষা ভুলিয়া গেছি । নাম দৌহাকার
দুজনে ভাবিছু কত, মনে নাহি আর ।
দুজনে ভাবিছু কত চাহি দৌহা-পানে,
অঝোরে ঝরিল অশ্রু নিষ্পন্দ নয়ানে ॥

হুঃপ্রোচ যুগে যুগে

দুজনে ভাবিহু কত দ্বারতরুতলে ।

নাহি জানি কখন কী ছলে
সুকোমল হাতখানি লুকাইল আসি
আমার দক্ষিণ করে কুলায়প্রত্যাশী
সন্ধ্যার পাখির মতো । মুখখানি তার
নতবৃন্ত পদসম এ বক্ষে আমার
নামিয়া পড়িল ধীরে । ব্যাকুল উদাস
নিঃশব্দে মিলিল আসি নিশ্বাসে নিশ্বাস ॥

রজনীর অন্ধকার
উজ্জয়িনী করি দিল লুপ্ত একাকার ।
দীপ দ্বারপাশে
কখন নিবিয়া গেল দুর্বৃত্ত বাতাসে ।
শিপ্রানদী তীরে
আরতি থামিয়া গেল শিবের মন্দিরে ॥

সোজাসুজি

হৃদয়-পানে হৃদয় টানে,
নয়ন-পানে নয়ন ছোটে,
দুটি প্রাণীর কাহিনীটা
এইটুকু বই নয়কো মোটে ।
গুরু-সন্ধ্যা চৈত্র নাসে,
হেনার গন্ধ হাওয়ায় ভাসে,
আমার বাঁশি লুটায় ভূমে,
তোমার কোলে ফুলের পুঁজি,
তোমার আমার এই যে প্রণয়
নিতান্তই এ সোজাসুজি

হৃদয়ে যুগে যুগে

বাসন্তী রঙ বসনখানি

নেশার মতো চক্ষে ধরে,

তোমার গাঁথা যুথীর মালা

স্মৃতির মতো বন্ধে পড়ে ।

একটু দেওয়া, একটু রাখা,

একটু প্রকাশ, একটু ঢাকা,

একটু হাসি, একটু শরম,

দুজনের এই বোঝাবুঝি ।

তোমার আমার এই যে প্রণয়

নিতান্তই এ সোজামুজি

মধুমাসের মিলন-মাঝে

মহানু কোনো রহস্য নেই,

অসীম কোনো অবোধ কথা

যায় না বেধে মনে-মনেই ।

আমাদের এই সুখের পিছু

ছায়ার মতো নাইকো কিছু,

দৌহার মুখে দৌহে চেয়ে

নাই হৃদয়ের খোঁজাখুঁজি ।

মধুমাসে মোদের মিলন

নিতান্তই এ সোজামুজি ॥

ভাষার মধ্যে তলিয়ে গিয়ে

খুঁজিবে ভাই, ভাষাতীত,

আকাশ-পানে বাহু তুলে

চাহিবে ভাই, আশাতীত ।

যেটুকু দিই—যেটুকু পাই

তাহার বেশি আর কিছু নাই,

ই প্রেম যুগে যুগে

স্বথের বক্ষ চেপে ধরে
করিনে কেউ যোঝাযুঝি ।
মধুমাসে মোদের মিলন
নিতান্তই এ সোজামুজি ॥

গুনেছিহু প্রেমের পাথার,
নাইকো তাহার কোনো দিশা,
গুনেছিহু প্রেমের মধ্যে
অসীম ক্ষুধা, অসীম তৃষা ।
বীণার তন্ত্রী কঠিন টানে
ছিঁড়ে পড়ে প্রেমের তানে,
গুনেছিহু প্রেমের কুঞ্জে
অনেক বাঁকা গলিঘুঁজি ।
আমাদের এই দৌহার মিলন
নিতান্তই এ সোজামুজি ॥

লীলাসঙ্গিনী

দুয়ার-বাহিরে যেমনি চাহি রে
মনে হল যেন চিনি,—
কবে নিরুপমা ওগো প্রিয়তমা,
ছিলে লীলাসঙ্গিনী ?
কাজে ফেলে মোরে চলে গেলে কোন্‌ দূরে,
মনে পড়ে গেল আজি বুঝি বন্ধুরে ?
ডাকিলে আবার কবেকার চেনা সুরে—
বাজাইলে কিঙ্কণী ।
বিস্মরণের গোধূলি ক্ষণের
আলোকে তোমারে চিনি ॥

হুগোয় যুগে যুগে

এলাচুলে বহে এনেছ কী মোহে

সেদিনের পরিমল ।

বকুল গন্ধে আনে বসন্ত

কবেকার সম্মল ।

চৈত্র-হাওয়ায় উতলা কুঞ্জ-মাঝে

চারু চরণের ছায়া-মঞ্জির বাজে,—

সেদিনের তুমি এলে এদিনের সাজে

ওগো চিরচঞ্চল ।

অঞ্চল হতে ঝরে বায়ুশ্রোতে

সেদিনের পরিমল ॥

মনে আছে সে কি সব কাজ, সখী

ভূলায়েছ বারে বারে ।

বন্ধ দয়ার খুলেছ আমার

কঙ্কণঝংকারে ।

ইশারা তোমার বাতাসে বাতাসে ভেসে

ঘুরে ঘুরে যেত মোর বাতায়নে এসে

কখনো আমার নব মুকুলের বেশে,

কভু নব মেঘ ভারে ।

চকিতে চকিতে চল চাহনিতে

ভূলায়েছ বারে বারে ॥

নদীকূলে-কূলে কল্লোল তুলে

গিয়েছিলে ডেকে ডেকে ।

বনপথে আসি করিতে উদাসী

কেতকীর রেণু মেখে ।

হুঃপ্রেম যুগে যুগে

বর্ষাশেষের গগনকোনায়-কোনায়,
সন্ধ্যামেষের পুঞ্জ সোনায় সোনায়
নির্জন খনে কখনু অশ্রুমনায়
ছুঁয়ে গেছ থেকে থেকে ।
কখনো হাসিতে কখনো বাঁশিতে
গিয়েছিলে ডেকে ডেকে ॥

কী লক্ষ্য নিয়ে এসেছ এ বেলা
কাজের কক্ষকোণে ।
সাথি খুঁজিতে কি ফিরিছ একেলা
তব খেলা প্রাঙ্গণে ।
নিয়ে যাবে মোরে নীলান্বরের তলে
ঘরছাড়া যত দিশাহারাদের দলে—
অযাত্রাপথে যাত্রী যাহারা চলে
নিষ্ফল আয়োজনে ?
কাজ ভোলাবারে ফের' বারে বারে
কাজের কক্ষকোণে ॥

আবার সাজাতে হবে আভরণে
মানসপ্রতিমাগুলি ?
কল্পনাপটে নেশার বরনে
বুলাব রসের তুলি ?
বিবাগি মনের ভাবনা কাগুনপ্রাতে
উড়ে চলে যাবে উৎসুক বেদনাতে
কলগুঞ্জিত মৌমাছিদের সাথে,
পাখায় পুষ্পধূলি ।
আবার নিভুতে হবে কি রচিতে
মানস প্রতিমাগুলি ॥

প্রেম যুগে যুগে

দেখ না কি, হায়, বেলা চলে যায়—

সারা হয়ে এল দিন ।

বাজে পুরবীর ছন্দে রবির

শেষ রাগিণীর বীণ ।

এতদিন হেথা ছিলাম আমি পরবাসী,

হারিয়ে ফেলেছি সেদিনের সেই বাঁশি,—

আজ সন্ধ্যায় প্রাণ ওঠে নিশ্বাসি

গানহারা উদাসীন ।

কেন অবেলার ডেকেছ খেলায়,—

সারা হয়ে এল দিন ॥

এবার কি তবে শেষ খেলা হবে

নিশীথ-অন্ধকারে ।

মনে মনে বুঝি হবে খোঁজাখুঁজি

অমাবস্তার পারে ?

মালতীলতার যাহারে দেখেছি প্রাতে

তারায় তারায় তারি লুকাচুরি রাতে ?

সুর বেজেছিল যাহার পরশপাতে

নীরবে লভিব তারে ?

দিনের দুরাশা স্বপনের ভাষা

রাচবে অন্ধকারে ?

যদি রাত হয় না করিব ভয় --

চিনি যে তোমারে চিনি ।

চোখে নাই দেখি, তবু ছলিবে কি,

হে গোপনরঙ্গিনী ।

নিমেষে আঁচল ছুঁয়ে যায় যদি চলে
তবু সব কথা যাবে সে আমার বলে,-
তিমিরে তোমার পরশ লহরী দোলে
হে রস তরঙ্গিনী ।
হে আমার প্রিয়, আবার ভুলিয়ে,-
চিনি যে তোমারে চিনি ॥

নির্ভয়

আমরা দুজন স্বর্গ-খেলনা
গড়িব না ধরনীতে
মুক্ত ললিত অশ্রুগলিত গীতে ।
গন্ধশরের বেদনামাধুরী দিয়ে
বাসররাত্রি রচিবনা মোরা প্রিয়ে ।
ভাগ্যের পায়ে দুর্বল প্রাণে
ভিক্ষা না যেন যাচি ।
কিছু নাই ভয়, জানি নিশ্চয়—
তুমি আছ, আমি আছি ॥

উড়াব উর্ধ্ব প্রেমের নিশান
দুর্গম পথ মাঝে
দুর্দম বেগে, দুঃসহতম কাজে ।
রুদ্ধ দিনের দুঃখ পাই তো পাব,
চাই না শান্তি, সাস্থ্য নাহি চাব
পাড়ি দিতে নদী হাল ভাঙে যদি,
ছিন্ন পালের কাছি,
মৃত্যুর মুখে দাঁড়ায়ে জানিব—
তুমি আছ, আমি আছি ॥

হৃদয়ের যুগে যুগে

দুজনের চোখে দেখেছি জগৎ,
দৌহারে দেখেছি দৌহে, —
মরুপথতাপ দুজনে নিয়েছি সহে ।
ছুটিনি মোহন মরীচিকা-পিছে-পিছে,
ভুলাইনি মন সত্যেরে করি মিছে—
এই গৌরবে চলিব এ ভবে
যত দিন দৌহে বাঁচি ।
এ বাণী প্রেয়সী, হোক মহীয়সী
তুমি আছ, আমি আছি ॥

হঠাৎ-দেখা

রেলগাড়ির কামরায় হঠাৎ দেখা
ভাবিনি সম্ভব হবে কোনোদিন ॥

আগে ওকে বারবার দেখেছি
লালরঙের শাড়িতে
দালিম ফুলের মতো রাঙা ,
আজ পরেছে কালো রেশমের কাপড়,
আঁচল তুলেছে মাথায়
দোলনচাঁপার মতো চিকনগোর মুখখানি ঘিরে ।
মনে হল, কালো রঙে একটা গভীর দূরত্ব
• ঘনিষে নিয়েছে নিজের চারিদিকে,
যে দূরত্ব শর্বে খেতের শেষ সীমানায়
শালবনের নীলাঞ্জনে ।
থমকে গেল আমার সমস্ত মনটা
চেনা লোককে দেখলেম অচেনার গাঙ্গীরে ॥

হুগো হুগো

হঠাৎ খবরের কাগজ ফেলে দিয়ে

আমাকে করলে নমস্কার ।

সমাজবিধির পথ গেল খুলে ;

আলাপ করলেম গুরু—

“কেমন আছ, কেমন চলছে সংসার”

ইত্যাদি ।

‘ সে রইল জানলার বাইরের দিকে চেয়ে

যেন কাছের দিনের ছোঁয়াচ-পার-হওয়া চাহনিতে ।

দিলে অত্যন্ত ছোটো-দুটো-একটা জবাব

কোনোটা বা দিলেই না ।

বুঝিয়ে দিলে হাতের অস্থিরতায়—

কেন এ-সব কথা,

এর চেয়ে অনেক ভালো চুপ করে থাকা ॥

আমি ছিলাম অগ্নি বেষ্টিতে

ওর সাথীদের সঙ্গে ।

এক সময়ে আঙুল নেড়ে জানালে কাছে আসতে

মনে হল, কম সাহস নয় ;

বসলুম ওর এক বেষ্টিতে ।

গাড়ির আওয়াজের আড়ালে

বললে মৃদুস্বরে, .

“কিছু মনে কোরো না,

সময় কোথা সময় নষ্ট করবার ।

আমাকে নামতে হবে পরের স্টেশনেই ;

দূরে যাবে তুমি,

ইন্ডিয়ান যুগে যুগে

দেখা হবে না আর কোনোদিনই ।
তাই, যে প্রশ্নটার জবাব এতকাল থেমে আছে,
শূন্য তোমার মুখে ।
সত্য করে বলবে তো ?”

আমি বললেম “বলব ।”
বাইরের আকাশের দিকে তাকিয়েই
সুধোল,
“আমাদের গেছে যে দিন
একেবারেই কি গেছে,—
কিছুই কি নেই বাকি ।”

একটুকু রইলেম চূপ করে ;
তারপর বললেম,
“রাতের সব তারাই আছে
দিনের আলোর গভীরে ।”

খটকা লাগল, কী জানি বানিয়ে বললেম না কি ।
ও বললে, “থাক্, এখন যাও ওদিকে ।”
সবাই নেমে গেল পরের স্টেশনে ।
আমি চললেম একা ॥

তর্ক

নারীকে দিবেন বিধি পুরুষের অন্তরে মিলায়ে
 সেই অভিপ্রায়ে
 রচিলেন সূক্ষ্ম শিল্প কারুণ্যী কায়ী,
 তারি সঙ্গে মিলালেন অঙ্গের অতীত কোন্ মায়া
 বারে নাহি যায় ধরা,
 যাহা শুধু জাদুমন্ত্রে ভরা,
 যাহারে অন্তরতম হৃদয়ের অদৃশ্য আলোকে
 দেখা যায় ধ্যানাবিষ্ট চোখে,
 ছন্দোজালে বাঁধে যার ছবি
 না-পাওয়া বেদনা দিয়ে কবি।
 যার ছায়া সুরে খেলা করে
 চঞ্চল দিঘির জলে আলোর মতন থরথরে।
 নিশ্চিত পেয়েছি ভেবে যারে
 অবুঝ আঁকড়ি রাখে আপন ভোগের অধিকারে,
 মাটির পাত্রট। নিয়ে বঞ্চিত সে অমৃতের স্বাদে,
 ডুবায় সে ক্লান্তি অবসাদে
 সোনার প্রদীপ শিখা-নেভা।
 দূর হতে অধরাকে পায় যে বা
 চরিতার্থ করে সেই কাছের পাওয়ারে
 পূর্ণ করে তারে ॥

নারীস্বব গুনালেগ। ছিল মনে আশা
 উচ্চতম্বে ভরা এই ভাষা
 উৎসাহিত করে দেবে মন ললিতার,
 পাব পুরস্কার।

হুগোয় যুগে যুগে

হারারে, দুঃখ হুগো

কাব্য শুনে

ঝকঝকে হাসিখানি হেসে

কহিল সে, “তোমার এ কবিত্বের শেষে

বসিয়েছ মহোন্নত যে কটা লাইন

আগাগোড়া সত্যহীন।

ওরা সব ক’টা

বানানো কথার ঘটনা,

সদরেতে যত বড়ো, অন্তরেতে ততখানি ফাঁকি।

জানি না কি

দূর হতে নিরামিষ সাদ্রিক মৃগয়া

নাই পুরুষের হাড়ে অমায়িক বিসৃদ্ধ এ দয়া।”

আমি শুধালেম, “আর তোমাদের?”

সে কহিল, “আমাদের চারিদিকে শব্দ আছে ঘের

পরশ-বাঁচানো,

সে তুমি নিশ্চিত জানো।”

আমি শুধালেম, “তার মানে?”

সে কহিল, “আমরা পুষি না মোহ প্রাণে,

কেবল বিসৃদ্ধ ভালোবাসি।”

কহিলাম হাসি,

“আমি যাহা বলেছিলাম সে-কথাটা মস্ত বড়ো বটে
কিন্তু তবু লাগে না সে তোমার এ স্পর্ধার নিকটে।

মোহ কি কিছুই নেই রমণীর প্রেমে।”

সে কহিল একটুকু থেমে—

“নেই বলিলেই হয় এ কথা নিশ্চিত।

জোর করে বলিবই

আমরা কাঙাল কভু নই।”

ইপ্রেম ঘুণে ঘুণে

আমি कहিলাম, "ভজ্জে, তাহলে তো পুরুষের জিত ।"

"কেন শুনি"

মাথাটা ঝাঁকিয়ে দিয়ে বলিল তরুণী ।

আমি कहিলাম, "যদি প্রেম হয় অমৃত কলস,

মোহ তবে রসনার রস ।

সে সুধার পূর্ণ স্বাদ থেকে

মোহহীন রমণীয়ে প্রবলিত বলে। করেছে কে ।

আনন্দিত হই দেখে তোমার লাবণ্যভরা কায়,

তাহার তো বাবো আনা আমাবি অনুরবাসী মায়।

প্রেম আর মোহে

একেবারে বিরুদ্ধ কি দৌহে ?

আকাশের আলো

বিপরীতে ভাগ করা সে কি সাদা কালো ।

ঐ আলো আপনার পূর্ণতারে চূর্ণ করে

দিকে দিগন্তরে,

বর্ণে বর্ণে

ভ্রুণে শাস্ত্রে পুষ্প পর্ণে,

পাখির পাখায় আব আকাশের নীলে,

চোখ ভোলাবার মোহ মেলে দেয় সর্বত্র নিখিলে ।

অভাব যেখানে এই মন ভোলাবার

সেইখানে সৃষ্টিবর্তা বিধাতার হার ।

এমন লজ্জার কথা বলিতেও নাই

তোমরা ভোলো না শুধু ভুলি আমরাই ।

এই কথা স্পষ্ট দিহু করে

সৃষ্টি কভু নাহি ঘটে একেবারে বিশুদ্ধে লয়ে ।

পূর্ণতা আপন কেন্দ্রে স্তব্ধ হয়ে থাকে

কারেও কোথাও নাহি ডাকে ।

হুঃপ্রোচ যুগে যুগে

অপূর্ণের সাথে দ্বন্দ্ব চাঞ্চল্যের শক্তি দেয় তারে,
রসে রূপে বিচিত্র আকারে ।

এরে নাম দিয়ে মোহ

যে করে বিদ্রোহ—

এড়িয়ে নদীর টান সে চাহে নদীরে,

পড়ে থাকে তীরে ।

পুরুষ যে ভাবের বিলাসী

মোহতরী বেয়ে তাই সুধাসাগরের প্রান্তে আসি

আভাসে দেখিতে পায় পরপারে অরূপের মায়া,

অসীমের ছায়া ।

অমৃতের পাত্র তার ভরে ওঠে কানায় কানায়

স্বপ্ন জানা ভূরি অজানায় ।”

কোনে কথা নাহি ব’লে

সুন্দরী ফিরায়ে মুখ দ্রুত গেল চ’লে ।

পরদিন বটের পাতায়

গুটিকত সত্তফোটা বেলফুল রেখে গেল পায় ।

ব’লে গেল, “ক্ষমা করো, অবুঝের মতো

মিছেমিছি বকেছিছু কত ।”

ঢেলা আমি মেরেছিছু চৈত্রে ফোটা কাঞ্চনের ডালে,

তারি প্রতিবাদে ফুল ঝরিল এ স্পর্ধিত কপালে ।

নিষে এঁই বিবাদের দান

এ বসন্তে চৈত্র মোর হোলো অবসান ॥



বরদাচরণ মিত্র

রূপ

কেন গো আসি হেথা

শুনিবে সখি ?

কেন গো আসি হেথা ?—

ঘুচাতে হৃদি-ব্যথা,

রূপের ফোয়ারাতে

জুড়াতে আঁখি ;

দেখিতে কালো চুলে,

দেখিতে আঁখি কোলে

কেমনে খেলে তারা

ভ্রমর-ভাতি ;

কেমনে রাঙা ঠোঁটে

মোহন হাসি ফোটে,

সাজায়ে চুনি-মাঝে

মুকুতা-পাতি ;

সুরভি-স্বাস-ভরে

কেমনে হৃদি-থরে

সাগরে ঢেউ যেন

উঠিয়া পড়ে ;

ভুরুর বাঁকা টানে

আকুলি মন-প্রাণে

কেমনে ক্রমে নব

সুখমা গড়ে ;

ইপ্রেম যুগে যুগে

দেখিতে চলে' যাওয়া,
শুনিতে কথা কওয়া,—
স্বপনে দেখা রূপ

দেখিতে চোখে ;

লুটীতে রাঙ্গা পায়

কুসুম-দল-প্রায়

স্মরতি ভাব-গুলি

ফুটীতে বুকে ।



দ্বিজেন্দ্রলাল রায়

প্রিয়ের প্রতীক্ষা

মলয় আসিয়া কয়ে গেছে কানে,

প্রিয়তম, তুমি আসিবে।

মম তৃষিত অন্তর-ব্যথা সযতনে তুমি নাশিবে।

রবি শশী তারা মুনীল আকাশ,

সকলে দিয়েছে তোমার আভাস,

গোপনে হৃদয়ে করেছে প্রকাশ,

তুমি এসে ভালবাসিবে।

মম মর্মমুকুরে দূর হতে সখা পড়েছে তোমার ছায়া,

সেখা অন্তরলোকে প্রেমপুলকে গড়েছি স্বপন-কায়া !

আমার সকল চিত্ত প্রণয়ে বিকশি

তোমারি লাগিয়া উঠেছে উছসি,

কবে তুমি আসি অধর পরশি

মুখপানে চেয়ে হাসিবে।



মানকুমারী বসু

একা

একা আমি চিরদিন একা—

সে কেন দুদিন দিল দেখা ?

আঁধারে ছিলাম ভালো—

কেন বা জ্বলিল আলো ?

আঁধার বাড়ায় যথা বিজলীর রেখা !

ভুলে ভুলে ভালবাসা,

ভুলে ভুলে সে দুরাশা—

ভুলে মুছিলনা শুধু কপালের লেখা !

একা আমি এ অবনী তলে,

কেহ নাহি “আপনার” ব’লে,

একাই গাহিব গীতি

একাই ঢালিব শ্রীতি,

একাই ডুবিয়া যাব নয়নের জলে !

সে কেন পরানে আসে,

সে কেন মরমে ভাসে,

কেন ছোটো তারি ঢেউ মরমের তলে !

ঐসস্ত বরষা শীত যারা,

আমার কেহই নয় তা’রা,

ভাসিলে নয়ন-নীরে

দেয় না মাথার কিরে,

হাসিলে আসেনা কাছে ঢেলে সুখা-ধারা !

প্রেম যুগে যুগে

একা আমি একা রই,
সুখ-দুখ একা সহ—
সে কেন আমার তরে হ'ত দিশেহারা ?
একা আমি জগতের 'পর,
এক পাশে বেঁধে আছি ঘর,
আমার উঠানে ভুলে
হাসেনা কুসুম কুলে,
ঢালে নাকো কলকণ্ঠ মধুমাখা স্বর,—
সে হেন একার ঘরে
কেন অধিকার করে,
প্রাণে কেন তারি ছটা ভাসে নিরন্তর ?
একা আমি আসিয়াছি ভবে—
আমার দোসর কেন হবে ?
আশান সৈকত-বুকে
একাই ঘুমাব সুখে,
জগৎ-সংসার মোর শতদূরে র'বে :
আমারে মমতা স্নেহ
দেয়নি, দিবেনা কেহ—
সে কেন আমারি শুধু হয়েছিল তবে ?



কামিনী রায়

চন্দ্রাপীড়ের জাগরণ

অন্ধকার মরণের ছায়

কত কাল প্রণয়ী ঘুমায় ?

চন্দ্রাপীড় জাগ এইবার ।

বসন্তের বেলা চলে যায়,

বিহগেরা সাক্ষ্য গীত গায়,

প্রিয়া তব মুছে অশ্রুধার ।

মাস বর্ষ হ'ল অবসান,

আশা বাঁধা ভগন পরান

নয়নেরে করেছে শাসন ;

কোনোদিন ফেলি অশ্রুজল

করিবে না প্রিয়-অমঙ্গল—

এই তার আছিল যে পণ ।

আজি ফুল মলয়জ্জ দিয়া,

শুভ-দেহা, শুভতর-হিয়া,

পূজিয়াছে প্রণয়ের দেবে ।

নবীভূত আশারাশি তার

অশ্রুমানা শোনে নাকো আর—

চন্দ্রাপীড়, মেল অঁাখি এবে

দেখ চেয়ে, সিক্তোৎপল দুটি

তোমা-পানে রহিয়াছে ফুটি ;

যেন সেই নেত্র-পথ দিয়া

প্রথম যুগে যুগে

জীবন তেয়াজি নিজ কায়

তোমারি অন্তরে যেতে চায়,—

তাই হোক উঠগো বাঁচিয়া ।

প্রণয় সে আশ্রয় চেতন,

জীবনের জনম নূতন,

মরণের মরণ সেথায় ।

চন্দ্রাপীড়, ঘুমাও না আর—

কানে প্রাণে কে কহিল তা'র—

আঁখি মেলি চন্দ্রাপীড় চায় ।

মৃত্যু-মোহ ওই ভেঙ্গে যায়

স্বপ্ন তার চেতনে মিশায়,

চারি নেত্রে শুভ-দরশন ;

এক দৃষ্টে কাদস্বরী চায়,

নিমেষ ফেলিতে ভয় পায়,—

‘এ তো স্বপ্ন—নহে জাগরণ

নয়ন ফিরাতে ভয় পায়

এ স্বপন পাছে ভেঙ্গে যায়,

প্রাণ যেন উঠে উথলিয়া ।

আঁখি দুটি মুখ চেয়ে থাক,

জীবন স্বপন হয়ে যাক

অতীতের বেদনা ভুলিয়া

“আধেক স্বপনে, প্রিয়ে,

কাটিয়া গিয়াছে নিশি,

মধুর আধেক আর

জাগরণে আছে মিশি ;

আঁধারে মুদিলু আঁখি,

আলোকে মেলিলু তায় ।

মরণের যুগে যুগে

মরণের অবসানে

জীবন জনম পায় ।

জীবন ? জীবন প্রিয় ?

নহি স্বপনের মোহে ।

মরণের কোন্ তীরে

অবতীর্ণ আজি দৌছে !”



শশাক্ষমোহন সেন

মধু ব্রত

এ ধরণী বরতনু আধারে মার্জিয়া

আলোকে প্রত্যহ উঠে রসস্নান করি ;

নিত্য নব পুষ্পদামে বাঁধিয়া কবরী

বনে শিহরিয়া উঠে, সমুজ্রে নাচিয়া ।

অসীমের পানে ফেলে' দৃষ্টি প্রেমাতুর

তারাগণ চেয়ে কহে—“মধুর-মধুর ।”

আকাশ-সরসী-জলে আকণ্ঠ ডুবিয়া

সাতারে উজলমুখী জ্যোতির্বালাগণ ;

পরস্পরে আঁখি ঠারে কাহারে লইয়া,

কৌতুকে আলোক-মুষ্টি করিয়া ক্লেপন !

হাসির অস্তুরে প্রেম-রাগিণী—বিধুর

ধরণী চাহিয়া কহে—“মধুর-মধুর ।”

আকাশ ও ধরণীর উপাস্তে বসিয়া

চিরদিন মধুজীবী কবির হৃদয় :

আধ জাগরিত স্তম্ভ বিভোর হইয়া

উভয়ের প্রেমরসে হরয়েছে তন্ময় !

অতর্কিতে প্রাণে ফোটে প্রেমারতি সুর !

দেবতা চাহিয়া কহে—“মধুর-মধুর !



গোরিন্দচন্দ্র দাস

আমার ভালোবাসা

আমি তারে ভালোবাসি অস্থিমাংস সহ,

অমৃত সকলি তা'র—মিলন বিরহ ।

বুঝি না আধ্যাত্মিকতা,

দেহ ছাড়া প্রেম-কথা,

কামুক লম্পট ভাই যা কহ তা কহ ।

কোথায় স্থাপিয়ে মূল

কোটে প্রেম পদ্মকুল ?

আকাশ-কুসুম সে যে কল্পনা কলহ ।

আত্মার আত্মার যোগ

বুঝি না সে উপভোগ

অদেহী আত্মারে আগে কিসে ছুঁয়ে লহ ?

তোমাদের রীতি নীতি

বুঝি না পবিত্র ঐতি,

তোমরা কি পৃথিবীর নরলোক নহ ?

আমি তাই ভালোবাসি অস্থিমাংস সহ ।

আমি তারে ভালোবাসি অস্থিমাংস সহ !

আমি ও নারীর রূপে

আমি ও মাংসের রূপে

প্রথম যুগে যুগে

কামনার কমনীয় কেলি কালীদহ—

ও কর্দমে—অই পড়ে

অই ক্রেদে—ও কলছে

কালীর নাগের মত নুখী অহরহ !

আমি তারে ভালোবাসি অস্থিমাংস সহ ।

আমি তারে ভালোবাসি অস্থিমাংস সহ !

ধরার মানুষ আমি

আমি ভাই মহাকামী

আমার আকাঙ্ক্ষা সে যে মহাভরাবহ !

আলিঙ্গনে ভাজে চুরে

স্বাসে হিমালয় উড়ে,

চুষনে চূর্ণিত হয় গ্রহ উপগ্রহ !

আমাদেরি কেলিভরে

পৃথিবী উলটি পড়ে

ও নহে সাগরে বান তোমরা যা কহ !

মর্দনে মস্থনে বুকে

অগ্নি উঠে গিরি মুখে

ভূমিকম্পে কাঁপে বিশ্ব ভরে অহরহ ।

আমি তারে ভালোবাসি অস্থিমাংস সহ ।

আমি তারে ভালোবাসি অস্থিমাংস সহ !

শুন্দর কুৎসিত হোক্

উলঙ্গ আবৃত রোক্

কুরুচি বলিয়া কর কলঙ্ক নিগ্রহ !

থাক্ তা'র মহাকুষ্ঠ

আমি যে তাভেই ছুট

প্রথম যুগে যুগে

তোমরা দেখ না নয়, ভয়ে দূরে রহ
চন্দন আন্তর সম
তার পুষ প্রিয় মম
শরীরে মাখিলে যার যাতনা দুঃসহ !
থাক্ তার শত পাপ
থাক্ শত অভিশাপ
সে আমার বিধাতার মহা অনুগ্রহ !
আমি তারে ভালোবাসি অস্থিমাংস সহ !

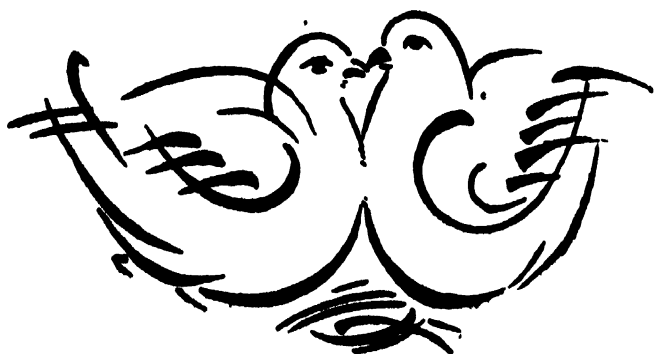
রমণীর মন

রমণীর মন,
কি যে ইন্দ্রজালে আঁক। কি যে ইন্দ্র-ধনু ঢাকা,
কামনা কুয়াশা মাখা মোহ-আবরণ,
কি যে সে মোহিণী-মস্তক রয়েছে গোপন !
কি যে সে অঙ্গুর দুটি নীল নেত্রে আছে ফুটি ;
ত্রিভুবনে কার সাধ্য করে অধ্যয়ন ?
কত চেষ্টা যত্ন করি উলটি পালাটি পড়ি
কিছুতে পারি না অর্থ করিতে গ্রহণ !
কি যে সে অজ্ঞাত ভাষা দেব কি দৈত্যের আশা
ঝলকি ঝলকি যেন করে উদিগরণ !
অতি ক্ষুদ্র দুই বিন্দু অকুল অসীম সিদ্ধ
উথলি উঠিছে তাহে প্রলয় প্লাবন !
ত্রিদিবের সুরা নিয়া ধরণীর ধূলা দিয়া,
রসাতল নিঙাড়িয়া করিয়া মিলন,
ঢালিয়াছি কত ছাঁচে মৃত্তিকা কাঞ্চন কাঁচে,
পারি নি তেমন আর করিতে গঠন,
রমণীর মন !

চিত্তরঞ্জন দাশ

তুমি ও আমি

আমার এ প্রেম মোর চিত্ত হ'তে এসে
তোমারি লাভণ্য মাঝে নিত্য খেলা করে,
কৌতূহল-দীপ্ত আঁখি, সুখপ্রাপ্তি শেষে,
আবার তোমারি বক্ষে ঘুমাইয়া পড়ে ;
আমার আকাঙ্ক্ষা সখি ! পতঙ্গের মত
দিবসে নিশীথে শুধু দক্ষ হ'তে চায় ;
চলিয়া পড়িছে তব সর্বাঙ্গে সতত,
অভূপ্তের তৃপ্তি লাগি উদ্ভাদের প্রায় !
আমার এ মন সখি, মুগ্ধ কবি সম,
সর্বদা করিছে শত সঙ্গীত রচনা,
গাঁথি গাঁথি সুখ দুঃখ পুষ্প অনুরূপম,
আপনি চরণে তব চালিছে আপনা !
তুমি আমি কাছে তবু দূরে দূরে থাকি,
দুজন্য মাঝে এক দীপ জ্বলে রাখি !



প্রিয়ম্বদা দেবী

খেলা

প্রেম যদি খেলা হ'ত ভালো হ'ত তবে,
এ জীবন কেটে যেত নিশ্চিন্ত নীরবে
শুধু কল্পনার সুখে ! দূরে গেলে তুমি
সংসার হ'তনা মনে শূণ্য মরুভূমি,
ব্যাকুল হ'তনা প্রাণ সদা আশঙ্কার,
সমান মধুর হ'ত মিলন বিদায় !
প্রেম যদি বসন্তের বায়ুর মতন
দ্রুত শু কাঁপায় যেত মোর পুষ্পবন,
বুঝিতে না পারিতাম চঞ্চল উচ্ছ্বাস
হাসি দিয়ে গেল কিছা দিল দীর্ঘশ্বাস ।
কম্পমান কণিকের মর্মর গাথার,
সমান মধুর হ'ত মিলন বিদায় ।



প্রমথ চৌধুরী

প্রিয়া

কারো প্রিয়া স্থলনিত সারিগান গেয়ে,
রক্তিম-কপোল উষা জাগে যবে হেসে,—
রূপোর ঢে'য়ের পরে তালে তালে ভেসে,
দক্ষিণ পবন সনে আসে তরী বেয়ে ।
কারো প্রিয়া মেঘসম চতুর্দিক ছেয়ে,
অকালের প্রলয়ের অগানিশা বেশে,
দূরন্ত পবনে ক্ষিপ্ত ঘনকৃষ্ণ কেশে,
প্রচণ্ড ঝড়ের মত আসে বেগে ধেয়ে ॥

তুমি প্রিয়ে এ হৃদয়ে পশি ধীরে ধীরে,
বহিছ প্রাণের মত প্রতি শিরে শিরে ।
প্রচ্ছন্ন কাপোরে আছ আচ্ছন্ন করিয়া,
আমার সকল অঙ্গ, সকল অন্তর ।
সকল ইন্দ্রিয় মোর জ্যোতিতে ভরিয়া,
যোঁগাও প্রাণের মূলে রস নিরন্তর ॥

একদিন

একদিন এক' বসি, শিবে রাখি কর,
একমনে করি যবে কবিতা বয়ন,
শব্দের কুণ্ডল করি স্মৃতিতে চয়ন,—
সহসা ফুলের গন্ধে ভরি গেল ঘর ।

সুপ্রেম যুগে যুগে

তখন ছিলনা কিছু ইন্দ্রিয় গোচর,
সুপ্ত ভাব, ত্যজি মোর হৃদয়-শয়ন,
উঠেছিল সেই ক্ষণে মেলিয়া নয়ন,—
ফুলের নিঃশ্বাস প'ল ফুলের উপর ॥

লিখিয়াছি সবে যবে দুই চার ছত্র,
নীলাঙ্ক আভায় হ'ল সুরঞ্জিত পত্র,
শেষে যেই মিলে গেল অন্তিম চরণ,
অধরে মিলিল এসে ফুলের অধর,
চোখেতে ফুলের হোরি রক্তিম বরণ,
কাণে শুনি প্রিয়া-কণ্ঠ-গলিত আদর !



অতুলপ্রসাদ সেন

বিনিময়

বঁধুয়া, নিদ নাহি আঁখি পাতে !
আমিও একাকী, তুমিও একাকী, আজি এ বাদল রাতে !
ডাকিছে দাদুরী, মিলন-পিয়াসে
ঝিল্লী ডাকিছে উল্লাসে—
পল্লীর বধু বিরহী বঁধুরে
মধুর মিলন সম্ভাষে ;
আমারো যে সাধ বরষার রাত
কাটাই নাথের সাথে !
—নিদ নাহি আঁখি পাতে !

গগনে বাদল, নগ্ননে বাদল, জীবনে বাদল ছাইয়া
এসহে আমার বাদলের বঁধু চাতকিনী আছে চাহিয়া,
কাঁদিছে রজনী তোমার লাগিয়া
সজনি তোমার জাগিয়া,
কোন অভিমানে, হে নিষ্ঠুর নাথ
এখনো মোরে তেয়াগিয়া ?
এ জীবন ভার হয়েছে অসহ, সঁপিব তোমার হাতে
নিদ নাহি আঁখি পাতে ।



জগদীশ্বনাথ রায়

ব্যথা

বেদনা যত পেয়েছি ওগো
রয়েছে বুকে গাঁথা,—
নীরবে তার সকল গুলি
নিয়েছি পেতে মাথা ;
বুকের যত শোণিত ধারা
নয়ন-পথে ঝরে--
কলস ভরে রেখেছি সব
সাজিয়ে তব তরে ।
পাখালি পদ, হিয়ার পরে
বস হে বঁধু মোর,
তোমার পদ পরশ যাচি
করিয়া কর যোড় ;
ভাবিগো বঁধু, দুখের ঘায়ে
কঠিন মোর হিয়া,
বাজে বা ব্যথা তাহার পরে
কোমল পদ দিয়া ।



বালেন্দ্রনাথ ঠাকুর

গৃহলক্ষ্মী

তখন আছিলে শুধু রূপে সমুজ্জল ;
আজিকে তোমাতে হেরি সর্ব অমঙ্গল
ধীরে সরে যাব নূরে ; মোন প্রেম ভরে
সকরণ আঁধি অমিয় সেচন করে
অস্তর নিভুতে শতধারে ; হে প্রেমসী,
গৃহলক্ষ্মীরূপে আজি তুমি মহীয়সী
আপন মহিমা লোকে ; সংসারের মাঝে
ঐবতারা সম তুমি সর্ব শুভ কাজে,
অগ্নি অচঞ্চলে ! পাতিয়াছ সিংহাসন
সর্বজন-মনোমাঝে গৌরবে আপন ;
ঘেরিয়াছে চারিধারে কত দুঃখ সুখ,
কত উদ্বেষিত আশা, কত জ্ঞান মুখ ।
সকল হৃদয়-ভার বন্ধে লহ টানি—
তাই তুমি, গৃহলক্ষ্মী সকলের রানী ।

চুল বাঁধা

সকলি তোমার, সখি, হেরি অভিনব,
দেখিতে এসেছি আজি চুল বাঁধা তব ।
এক হস্তে কঙ্কতিকা, অপরে সম্বর
দীর্ঘ-কৃক কেশ-পাশ, সারা বেলা ধরি
বিনায়ে বিনায়ে বেণী কি করি কেমনে,
নিবিড় কবরী বন্ধ বাঁধ আনমনে ।

হুগো হুগো হুগো

কি মন্ড্রে কুটিয়া উঠে স্বর্ণ সীঁথিরেখা
দু'টি করতল-চাপে স্মর-পথ লেখা
যেন অভিসার লাগি । কি পরশ ভরে
কুন্তল কুঁকিয়া আসে ললাটের পরে—
মদনে বাঁধিয়া রাখ যার শত পাকে ।
অবাক বিস্ময় ভরে আঁখি চেয়ে থাকে ;
ভাবিয়া না পায় চিন্তা একি মায়াবিনী,
অথবা পুরানো সেই ঘরের কামিনী ।



সতীশচন্দ্র রায়

দেব-নিঃস্থসিত

স্কন্ধ হ'য়ে পাতাল পানে চুইয়া-পড়া শিরে—
শব্দ পড়ি আছেয়ে সহি আতপ হিমনীয়ে !
একদা এক জ্যোৎস্না রাতে অঙ্গরীরা মেলি,
আইল নামি সাগর তীরে করিতে স্নান-কেলি ।

সহসা এক মরুভাসী

যুবারে লখি, প্রণয়রাশি

উথলে এক অঙ্গরার - মায়ার জাল কেলি
অমনি ফেলে ধরিয়া তারে অঙ্গরীরা মেলি !

সেদিন সুখ-উৎসবেতে বাজন লাগি সবে
গুরু শাঁখে সহসা তুলি বাজাল ঘন রবে ।

মোদিত হিয়া উর্বশীর

সুখের ফুঁয়ে সুগম্ভীর

বাজিল শাঁখ—তুলিয়া বাহু ফেলিয়া দিল তবে ;
অঙ্গরীরা আকাশ-পথে চলিয়া গেল সবে ।

চন্দ্রালোকে চমকি কায় শব্দে পিয়া জল

সার্থকতা জানাতে যেন ভাবিয়া গলগল

ভুবিয়া গেল শব্দখানি—

কাহিনী এত রেখেছি জানি—

তাই ত আছি আঁকড়ি পড়ে বালুর ভটতল—

বুগাস্তরে আসিবে কবে স্বরগ-সখীদল ।

সত্যেন্দ্রনাথ দত্ত

কাজরী

- (আজ) নূতন শাখে বাঁধ তোরা সহ
নূতন হিন্দোলা, .
আজকে হাওয়ার নূতন দুয়ার
হ'ল যে খোলা !
- (নব) নীপের দীপে, কেয়ার ধূপে
আজ ভুবন ভোলা,
নূতন বঁধুর নূতন মধুর
কাজরী উতলা ।
- (ওকে) দোল দিল মোর মনে, ওগো !
তাই দোলে-ভুবন !
আবণ দোলে, পবন দোলে,
দোলে সকল বন !
হৃদয় দোলায় চলছে লো কার
আনন্দ ঝুলন !
ঝুলন মাতাল রাগরাগিনী
কাজরী নিমগন !
তোমার আমার মন মিলেছে
মনের মাগকে !
কে জানে আজ দুনিয়া সমাজ
পড়শী পক্ষে !
অঞ্চলে বেঁধেছি মোরা
(আজ) সাত রাজার ধন যে !
কাঞ্জে নাই রুচি চরণ

হৃদয়ের ঘুণে ঘুণে

মাণিকের মঞ্চে !
 ভোমার আমার ফুল ফুটেছে
 মনের মাগঞ্চে !
 (আমার) সকল ভুবন দোল দিলরে
 জনম জনমে !
 দোল দিল আনন্দ-বিষাদ
 শঙ্কা শরমে !
 দোল দিল কামিনী-কুঁড়ি
 (মোর) গোপন মরমে !
 সূর্য তারার নাগর-দোনার
 ছন্দেই সমে !
 (আজ) জীবন মরণ বুলান খেলে
 দোল দিয়েছে কে !
 সুধা-সুরা-সোম-ধুতুরায়
 ঢেউ গিয়েছে কে !
 (আজ) বাদল ধারায় জ্যোৎস্না জড়ায়
 (হায়) সে রক্ত দেখে ' .
 বুলান ঝোলে ঝাণ্ডা তালের
 বন্ধাতে বেঁকে ' .

যক্ষের নিবেদন

[মন্দাক্রান্ত ছন্দের অন্তরঙ্গ্যে]

পিঙ্গল বিহ্বল ব্যর্থিত নভতল, কই গো কই মেঘ উদয় হও,
 সন্ধ্যার তন্ত্রার মুরতি ধরি আজ মন্ত্র-মন্ত্র বচন কও ;
 সূর্যের রক্তিম নয়নে তুমি মেঘ ! দাও হে কঙ্কাল পাড়াও স্তম্ভ,
 বৃষ্টির চুষন বিধারি চলে যাও—অঙ্গে হর্ষের পড়ুক ধুম ।

যক্ষের গর্ভেই রয়েছে আজো যেই—আজ নিবাস যা'র গোপনলোক,

সেই লক্ষ্মী-সহস্রা কুটিবার লষ্ট চোটার কুমুম হোক ;
 ঐশ্বর্য-শেষ, ভরিয়া সাহুদেশ স্নিগ্ধ গভীর উঠুক তান
 বন্ধের দুঃখের করছে অবসান, যক্ষ-কান্তার জুড়াও প্রাণ !

শৈলের পৈঠার দাঁড়ারে আজি হায় প্রাণ উধাও ধায় প্রিয়ার পাশ,
 মূর্ছার মস্তুর ভরিছে চরাচর, ছায় নিখিল কা'র আকুল শ্বাস !

ভরপুর অশ্রুর বেদনা-ভারাতুর মৌন কোন্‌ সুর বাজায় মন,
 বন্ধের পঙ্কর কাঁপিছে কলেবর, চক্ষে দুঃখের নীলাঞ্জন ।

রাত্রির উৎসব জাগালে দিবসেই, তাইতো তন্দ্রায় ভুবন ছায়,
 রাত্রির গুণ সব দিনেই দিলে দান, তাই তো বিচ্ছেদ দ্বিগুণ হায় ;
 ঐশ্বর্য দক্ষিণ বাহু সে তুমি দেব ! পূজ্য, লও মোর পূজার ফল,
 পুঙ্কর বংশের চূড়া যে তুমি মেঘ ! বন্ধু ! দৈবের ঘুচাও ভুল !

নিষ্ঠুর যক্ষেশ, নাহিক রূপালেশ, রাজ্যে আর তা'র বিচার নেই,
 আক্তার লজ্জন করিল একে, আর শাস্তি ভুঞ্জন দুজনকেই !
 হায় মোর কান্তার না ছিল অপরাধ, মিথ্যা সয় সেই কতই ক্লেশ,
 দুর্ভর বিচ্ছেদ অবলা বুকে বয়, পাংশু কুন্তল, মলিন বেশ ।

বন্ধুর মুখ চাও, সখা হে সেথা যাও, দুঃখ দুস্তর তরাও ভাই,
 কল্যাণ-সংবাদ কহিয়ো কানে তা'র, হায়, বিলম্বের সময় নাই ;
 বৃন্তের বন্ধন আশাতে বাঁচে মন, হায় গো, বল তা'র কতই আর ?
 বিচ্ছেদ-ঐশ্বর্য তাপেতে সে শুকায়, যাও হে দাঁও তায় সলিল-ধার ।

নির্মল হোক পথ,—শুভ ও নিরাপদ, দূর-সুদূর্গম নিকট হোক,
 হৃদ নদ নির্ঝর, নগরী মনোহর, সৌধ সুন্দর জুড়াক চোক ;
 চঞ্চল খঞ্জন-নয়না নারীগণ বর্ষা-মঞ্জল করুক গান,
 বর্ষার সৌরভ, বলাকা-কলরব, নিত্য উৎসব ভরুক প্রাণ !

পুষ্পের তৃষ্ণার করছে অবসান, হোক বিনিঃশেষ যুথীর ক্লেশ,
 বর্ষায়, হায় মেঘ ! প্রবাসে নাই সুখ,—হায় গো নাই নাই সুখের লেশ ;
 যাও ভাই একবার, মুহাতে আঁখি তা'র প্রাণ বাঁচাও মেঘ ! সদয় হও,
 “বিদ্যাৎ-বিচ্ছেদ জীবনে না ঘটুক” বন্ধু ! বন্ধুর আশিস লও ।

কিশোরী

তা'র জলচুড়িটির স্বপন দেখে
 অলস হাওয়ার দীঘির জল,
 তা'র আলতা পরা পায়ের মোড়ে
 কুঁকচুড়া ঝরায়ে দল !
 করমচা-ডাল আঁচল ধরে,
 ভোমরা তারে পাগল করে
 মাছরাঙা চায় শিকার ভুলে
 কুহরে পিক অনর্গল ;
 তা'র গজাজলী ডুরের ডোরা
 বুকে আঁকে দীঘির জল ।

তারে আসতে দেখে ঘাটের পথে
 শিউলি ঝরে লাখে লাখে,
 জুঁয়ের বুকে নিবিড় স্নেহে
 প্রজাপতি কাঁপতে থাকে ।
 জলের কোলে ঝোপের তলে
 কাঁচপোকা রং আলোক জলে
 লুক ক'রে মুগ্ধ ক'রে
 বৌ-কথা-কও কেবল ডাকে
 আর হালকা বোঁটা ফুলের বুকে
 প্রজাপতি কাঁপতে থাকে ।

তা'র সীথায় রাঙা সিঁদুর দেখে
 রাঙা হ'ল রঙন ফুল,

প্রথম যুগে যুগে

- তা'র সিঁদুর টিপে খয়ের টিপে
কুঁচের শাখে জাগলো ভুল !
নীলান্বরীর বাহার দেখে
রঙের ভিমান লাগল মেঘে
কানে জোড়া দুল দেখে তা'র
ঝুমকো জবা দোলায় দুল ;
- তা'র সরু সীথার সিঁদুর গেথে
রাঙা হ'ল রঙনু ফুল !
- সে যে ঘাটে ঘট ভাসায় নিতি
অন্ধ ধূয়ে সাঁঝের আগে
সেখা পূর্ণিমা চাঁদ ডুব দিয়ে নায়,
চাঁদমালা তার ভাসতে থাকে !
জলের তলে খবর পেয়ে
বেরিয়ে আসে মৃণাল মেয়ে
কলমীলতা বাড়ায় বাছ
বাহুর পাশে বাঁধতে তা'কে !
- তা'র রূপের স্মৃতি জড়িয়ে বুকে
চাঁদের আলো ভাসতে থাকে !
- সে ধূপের ধোঁয়ায় চুলটি শুকায়,
বিনি সূতার হার সে গড়ে,
দোলন চাঁপা নবীর গায়ে
আলোর সোহাগ গড়িয়ে পড়ে !
কানড়া ছাঁদ ধোঁপা বাঁধে
পিঠ-ঝাঁপা তা'র লুটায় কাঁধে
- তা'র কাজল দিতে চক্ষে আজো
চোখের পাতায় শিশির নড়ে ;

সুপ্ৰেম যুগে যুগে

সে বেনীতে দেয় বকুল মালা
বিনি স্নাতার হার সে গড়ে ।

সে নামানে চোখ আকাশভরা
দিনের আলো কিম্বেরে আসে,
সে কাঁদলে পরে মুক্তা ঝরে
হাসলে পরে মাণিক হাসে !
কেরল কাঠের নৌকাখানি
জানেনাকো তুকান পানি,—
কুল কুলিয়ে ঢেউগুলি যায়
মুইয়ে মাথা আশে পাশে ;

যদি, সেঁউতি 'পরে চরণ রাখে
হয় সে সোনা অনারাসে !

ওই সওদাগরের বোঝাই ডিঙা
কিঙার মত চলত উড়ে,
তার পরশ-লোভে আজকে সে হার
কাড়িয়ে আছে ঘাটটি জুড়ে !
অরাজকের পাগলা হাতী
পথে পথে কিরছে মাতি ;—
তা'রে দেখতে পেলেই করবে রানী
ওঁড়ে তুলে তুলবে মুড়ে !

ওগো তারি লাগি বাজছে বাঁশী
পরান ব্যোপে ভুবন জুড়ে !

সহজিয়া

কুলের যা দিলে হবে নাক কতি
অথচ আমার লাভ,

প্রেম যুগে যুগে

আমি চাই সেই সৌরভ,—শুধু

অতনু অতল ভাব ।

আমি চাই সেই দূর হ'তে পাওয়া

আমি চাই মধু মশগুল হাওয়া

অস্তরে চাই' শুধু রূপসীর

অরূপ আবির্ভাব,

যাহা দিলে তা'র ক্ষতি নাই তবু

আমার পরম লাভ ।

বৃন্তটি হ'তে ছি'ড়িতে না চাই

দিতে নাহি চাই দূখ,

সহজ প্রেমের অমল আমোদে

ভরিয়া উঠুক বুক !

ধাঁটিতে না চাই দুনিয়ার মাটি

তারি মাঝে মিশে রয়েছে যা খাঁটি

নিতে হবে সেই পরশ মণির

চুম্বিত সোণাটুক,

কা'রো কোনো ক্ষতি হবে না অথচ

আমার ভরিবে বুক ।



কল্পানিধান বান্ধ্যাপাধ্যায়

মম-র-স্বপ্ন

বাঁশীর রাগিণী মূরছি রয়েছে
মম-র-রূপ ধরি
বঁধুর পরশে ঘুমার হরষে
মমতাজ সুন্দরী ।

ভালবাসা তার গোলাপ শয়ন
কেশর-পরাগে করিয়া বয়ন
জেগে বসে আছে শিয়রের কাছে
যুগ যুগান্ত ভরি ।

ঋতুরাজ নিজে পুষ্প সুরায়
ভরিয়াছে তার প্রাণ
ঘোবন তাপে সুখ ঝরণায়
করায়েছে তার স্নান ;

মণি-কিশলয় কর লীলায়
ফুটেছে লতিকা বিলাস শিলায়,
পড়ে ঢলি ঢলি প্রতারণিত অলি
ভুলি গুঞ্জর তান ।

নীরবে ঝরিল মরণের হাসি
বাসরের উপকূলে
খসে প'ল তার ঘোমটা-শরম
চুমিয়া চুলের ফুলে ।

লুটাল চরণে হীরার মুকুট,
খুলে দিল বালা প্রেম-সম্পুট,—

ইপ্সেচ যুগে যুগে

দিগ্-বিজয়ীর বৃকের কথির
ঝরিল চরণ-মূলে ।
মোহিনী তরুণী মুরতি ধরিল
হিন্দোলে উপবনে
কলধনু তার তুলীর হারারে
মূরছিল দু'চরণে ।
হিমাংশু কলা মেঘ-সীমানার
কুটার চামেলী হাসনুহানার—
অরুণ-বর্ণ—সোহাগ-অর্ণ
গলিল মিলনক্ষণে ।
আসিরাছি আজি প্রবাসী পাঙ্ক
হেরিতে কাস্তি রাশি
বসিয়া তোমার অনিন্দ-ভনে
হেরিব বিমল হাসি ।
বিরাত দুর্গ-সোপান বাহিয়া
যমুনায় তুমি আসিতে নামিয়া,
কি সুর ধরিতে মুকুতা তরীতে
সখীরা বাজাত বাঁশী ।
কত না আদরে প্রেমের পেয়ালা
আধেক করিয়া খালি
মল্লীমুকুল তুল্য তোমার
অধরে দিত কে ঢালি ?
রাঙিয়া উঠিত ফুল-কপোল
চুখন রাগে বিলোল বিভোল
আনার আঙ্গুর রসে-পরিপূর
মোহ উপহার ডালি ।
পশিতে যখন আরসি খচিত

হুঃপ্রোচ যুগে যুগে

শীশ-মহলের মাঝে
কেহ কি দেখেছে কত লাবণ্য
অঙ্গে তোমার রাজে ।
সুৰভি জলের কোয়ারা থুলিয়া
বসিতে কিশোরী চিকুর মেলিয়া
নগ্ন-গ্রীবায় সজল-শোভায়
নন্দন-বধু লাজে ।
সেরূপ তুফান আজো হেরি যেন
তস্তার কিনারায়
শুনি আনুমনে কোন্ বাতায়নে
নূপুর বাজিছে পায় ;
অপরূপ এই পাষাণের ছায়ে
আছো আনন্দ-কাকল বাজায়,
কে অপরাজিতা বিচ্ছেদ-চিতা
নিবায়েছে নিরাশায় ।
মনে পড়ে সেই অস্ত-শরানে
মুমূর্ষু শাজাহান
অনিমেষে হায় চেয়ে তব পানে
নিমীলিত দু'নয়ান,
রোমাঞ্চ ওঠে যমুনার বুক
তাকে কজলে কৌমুদী মুখ
বিদায়ের শেষে কবিতার দেশে
বিরহের অবসান ।
দাঁড়াহু মেলি গদ্বজ তাল
মূর্ত অঙ্ককারে
প্রতিধ্বনিত ধরণী হৃদয়
মুক শোক-ঝঙ্কারে,—

প্রেম যুগে যুগে

বজ্রপাহর। স্থপ্তিগভীর
ঝঙ্কা নিশীথে বন্দরতীর
এত কি মধুর শাস্ত বিধুর
চির-মৃত্যুর দ্বারে ।
টুটি মর্মর-সমাধি বর্ম
কহে স্মৃতি কি কাহিনী ?
স্তিমিত হইল লোম কূপে কূপে .
বেদনা সৌদামিনী ।
ছিড়ি অতীতের অবশেষ
বজ্রার সম ধায় লুপ্তন
তুনি পাণিপথে মোগলের রথে
রণ-ধনু-শিজিনী ।
এই না জীবন মানব জীবন,
ফুল-ফোটা, ফুল-ঝরা ;—
সম্মুখে হান্স পিছনে অশ্রু
শয্যা-শায়িনী জরা,—
হেরিছু চমকি আসে নরনারী
মাঝে তার এক বঙ্গ কুমারী
বৃকে দোলে হার আঁখি দুটি তার
দুখ-নবনীতে ভরা ।
ভারতের এই প্রেমের তীর্থে
অশ্রু ফুল-ঢালা,
এসগো প্রেমিক, এসো দম্পতি
সাজায়ে বরণ ডালা,
প্রণয়ের এই পুণ্য পুরীতে
নারী মহীয়সী অমরীর স্রীতে

দীপ্ত আননে নাথের চরণে
সঁপেছে পূজার মালা ॥

চুম্বকা-রানী

পাহাড়-ঘেরা বাঁধের তীরে
পথ ফুরালো শেষ-রাতে,
সামনে দূরে উচ্চ চূড়া
দাঁড়িয়ে আছে জ্যোৎস্নাতে
কালকে রাতে প্রহর জাগি
এসেছি আজ বাহার লাগি
সেই মোহিনী ঘুমায় তখন
শিরীষ কেশর শয্যাতে ।
সন্ধ্যে তারার আলোক থেকে
আগিয়ে আপন দীপ-খানি
সুগিরে আছে চুম্বকা-রানী
এলিয়ে তব্বর ফুলদানি ।
অকুরন্ত ধূপের বাসে
মৃগ-নাভির গরব নাশে
পালিয়ে গেছে ভিলোস্তমা
কটাক্ষে তার হার মানি ।
কর্ণধারা গাইছে গো তার
মুপুর পরা পা'র কাছে
ভোরের পাখী উঠছে ডাকি'
ফুটেছে আলো শাল-গাছে ।
মোয়া ফুলের মদালসে
ওড়না খানি গেছে খসে
তখনও তার মুখের পরে
জন্মির চিকণ জাল আছে ।

ইন্ডোম ঘুণে ঘুণে

আসমানি নীল কাঁচলি তার
শিউরে ওঠে উচ্ছ্বাসে
অস্তরে বয়্য আবেগ তুকান
বাইরে তাহার ঢেউ আসে,
বসন্তিরা পরদা টানি
স্বপন দেখে পরীর রানী
রঙীন হিয়া নিঙাড়িয়া
দিলাম আজি তার পাশে ।
চিরবগের কাস্তা আমার
প্রাণ প্রতিমা বাহিতা,
চিনি তোমার সৌখির মণি
শিখিল বেগীর নীলফিতা ।
নিমন্ত্রণের পত্র লিখে
পাঠিয়ে ছিলে এই পথিকে,
শুনবো মধুর কণ্ঠ তুহার
জাগো কাণ্ডন পুষ্পিতা ।
তোমার রূপের দরবারে আজ
ভেট দিগ্ন এই বয়স হার
চারু চোখের চোরা দিঠি
চম্কে দেছে দিল্ আমার !
তোমার পাণির তড়িৎ ভরা
দাও পরশন তরুণ করা,
ছুটাও সম সকল জরা
খোলো শৈল পুরীর দ্বার ।
তো পাষাণি এই প্রবাসে
একটু বস মোর সাথে,
হোক হৃৎকনে চোখোচোখি

হুগোয় ঘুগে ঘুগে

নীল-পাথরের পইঠাতে ।
গরিব-খানার খেয়াল সুরে
আমিই নাহয় ছিলাম দূরে
তুমিই বা কোন্ ডাকুলে মোরে
বকুল-ঝরা দোল বাতে ।
কুঞ্জে যখন ক্যাপা পবন
দুটুতো মধু ঝুঁই ফলে
স্বপন-ঘোরে তখন মোরে
গেছলে প্রিয়ে শ্রেক ভূলে ।
সেদিন তোমার এই লাবণি
লুকিয়ে কেন রাখলে ধনি ?
তাকাও নি ত' হার স্বজনি
কও নি কিছু চোখ ভূলে ।
দিনের রঙে এই দুনিয়া
ঝাপসা দেখে যার আঁখি
আবছারারা আলপনা দেয়
ফিরতি বেলার নেই বাকি :
গুরুকেশে অতিথ সাজি
পরদেশীয়া ডাকছে আজি
ওই দেখ তার প্রিয়তমার
লাজ ভেঙে দেয় বন-পাখী ।
আবার নব কিশোর হ'ব
দাও রসায়ন স্তম্ভরী, .
চল কুটীর-আঙ্গিনাতে
সোহাগ-সিঁদুর-টিপ পরি ।
ফিরবোনা সই ফিরবো না গো
সজ ভুহার লাগছে ভালো ।

ইশ্রাম যুগে যুগে

জীয়াও তারে দরদ-ভাবে
গিয়াছে যার মন মরি ।
রাখ আগার শেষ মিনতি
ছল কোরো না নিষ্ঠুরা,
স্বর মিলায়ে দাওগো বেঁধে
তার-ছেঁড়া মোর তানপুরা ;
গাইব গীতের শেষের কলি
রস-লহরী দাও উথলি
তুষাতুরের পেয়ালাতে
দাওগো ঢালি শেষ সুরা ।
আধ-সুমানো মুখে তোমার
হাসিটুকুন লুকিয়ে না,
উদাস হ'য়ে বাঁকিয়ে গ্রীবা
সাধের মালা শুকিয়ে না ।
এই যদি শেষ ছিল মনে
বিদায় দেবে আপন জনে
মিথ্যা কেন আমায় তবে
করলে হেন উদ্মনা ?
ওই অলকে ওই কপোলে
অপাঙ্গে কি ভজিমা,
অভিসারের ললিত বেশে
বিলাস-লীলার নেই সীমা ।
নূরজাহানের রূপ জিনিয়ে
নিলে আমার মন ছিনিয়ে,
চুনির মত দাও রাঙিয়ে
অমুরাগের রক্তিম ।
দুধ-পাথরে তোমার নিখুঁত

হুঁপে হুঁপে হুঁপে

মুঁড়ি গড়ি নির্জনে
আঙুর-মিঠে অধর-পুটে
পিয়াস মিটাই তখনে
জনম জনম এমনি ক'রে
লুকাও নূরে কাঁদিয়ে মোরে,
দাগ রেখে যায় তোমার ছায়া
আমার স্মৃতির দর্পণে ।
আজও কোটে তেমনি শোভায়
বন গোলাপের লাল কুঁড়ি
নিখর হ'য়ে প্রজাপতি
বসে গো তার বুক জুড়ি ।
বাঁধের ঘাটে পূর্ণিমা সে
চুপি চুপি নাইতে আসে,
গুমরে উঠি গুনি যখন
বাজে তরল জল-চুড়ি ।
জাগাও তুষা, মিটাও তুষা,
লো ষোড়শী সঙ্গিনী
ঘুণি-হাওয়ায় অনেক ঘুরে
এলাম চলে পথ চিনি ।
তোমার পানে চেয়ে চেয়ে
আকশোমে চোখ আসছে ছেয়ে,
কেন মদির যৌবনে মোর
দাওনি ধরা রজিগী ॥



যতীন্দ্রমোহন বাগচী

দ্বিপ্রহরে

বইএর পাতায় মন বসে না, খোলা পাতা খোলাই পড়ে থাকে,
চোখের পাতায় ঘুম আসে না—দেহের ক্লান্তি বুঝাই তবু কাকে ?
কাজের মাঝে হাত লাগাব, কোথাও কোন উৎসাহ নাই তার,
চেয়ে আছি, চেয়েই আছি, চাওয়ার তবু নাইক কিছু আর ।

বেলা বাড়ে, রোদ চড়ে যায়, প্রখর রবি দহে আকাশ ভাল,
ঝাঁঝ করে ভিতর-বাহির, চোখের পথে শুকায় চোখের জল ;
মোহাচ্ছন্ন মৌন জগৎ, কোথাও যেন জীবন চেষ্টা নাহি,
দীপ্ত আকাশ নির্ণিমেষে দিনের দাহ দেখছে শুধু চাহি ।

ঘরে ঘরে আগল আঁটা, আমার ঘরেই মুক্ত শুধু দ্বার,
—সেই যে খুলে চলে গেছে, তেমনি আছে,—কে দেয় উঠে আর ।
দ্বারের কাছে নিমের গাছে একটি কেবল তিস্ত মধুর শ্বাস
ক্ষণে ক্ষণে জানায় শুধু রিক্ত বকের উদাসী উচ্ছ্বাস ।

তাহা করে তপ্ত হাওয়া শশ্যহাবা বসন্ত শেষ মাঠে,
চোতের ফসল বিকিয়ে গেছে কবে কোথায় অজানা কোন হাটে ।
উদার মলয় নিঃশ্ব আজি, সামনে শুধু উষ্ম বালুচব
পঞ্চতপা দিক্ বিধবার বসন খানি লুটছে নিরন্তর ।

কোন পথে সে গেছে চলি, বালু-বেলায় চিহ্নটি নাই তার,
লুপ্ত সকল শ্রামলিমা নিয়ে তাহার মুক্ত উপচার ;
জাগতে শুধু প্রখর দাহ ভূষণে ৩৫। দিশুজ জিহ্বায়, - -
দিনান্ত সে আসবে কখন ? দম্কা বাতাস ধুলো উড়ায় গায় ।

হাকিজের স্বপ্ন

অমা-বামিনীর গহন আঁধারে চুপি চুপি এল প্রিয়া,
 দ্বিগুণ-আঁধার খজুর-বীথি, তাহারি আড়াল দিয়া !
 আঙুরের মত অলকগুচ্ছে গোলাপের মালা পরি,
 মুহূ উল্লীর মদির গন্ধে নিশীথ আকাশ ভরি ;
 কাজল-উজল কালো কটাক্ষে হানিয়া বিজলী-হাসি,
 ফেরোজা রঙের বসন পরিয়া শিথানে দাঁড়াল আসি' !—
 বীণানিন্দিত মধুরকণ্ঠে কহিল— রে অনুরাগী,
 শৃঙ্খলয়নে আমারে মাগিয়া জাগিয়া কিসের লাগি ?

করুণা তাহার হৃদয়ে হানিল সুখেব মত্তন ব্যথা,
 ঘুড়ি ঘোড় পাণি বিগলিত-বাণী কণ্ঠে কহিলু কথা,—
 তব অঞ্চল বসন্তবাসে হৃদয়ে যে ফুল ফুটে,
 তব মঞ্জীর সঙ্গীতরবে হৃদয়ে যে ধ্বনি উঠে,—
 তাহারি গন্ধে, তাহারি ছন্দে রচিয়া গজল-গীতি
 তোমারি কুঞ্জ-দুয়ারে গাহিয়া শুনাইব নিতি নিতি ;
 নাহি চাই খ্যাতি, যশে কাজ নাই, চাহিনাক ধনমান,
 তোমার স্তবের যোগ্য করিয়া শিখাইয়া দাও গান ।
 না কহিয়া কথা, না বলিয়া কিছু—লীলায়িত হেলা ভরে
 সেতারটি শুধু লইল টানিয়া কোমল বৃকের পরে ;
 অঙ্গুলীঘাতে তারগুলি তা'র সঙ্গীতে ভরি দিয়া
 আমার কোলের সঙ্গীতি মোরে ফিরাইয়া দিল প্রিয়া ।

গোলাপের কুঁড়ি তখনো ভাবেনি ফুটিতে হইবে কিনা,
 ডানার মাঝারে মাথাটি গুঁজিয়া চাতকী চেতনাইনা ;
 অমা বামিনীর গভীর আঁধারে মিলাইয়া গেল প্রিয়া—

হুগোয়ান্‌ মুগে মুগে

শিশির-শীতল খজুঁর-বীথি, তাহারি ভিতর দিয়া !
তার পর হ'তে বাজিছে সাহানা মোহিনী সিদ্ধু কাকি,
সাথে সাথে সেই পরম পরশ উঠিতেছে কাঁপি কাঁপি ;
তালে তালে উঠে দুলে, দুলে তারি হৃদয়েরি আকুলতা,
শূরে শূরে সদা ঘুরে ঘুরে ফিরে তাহারি গোপন কথা !



কুমুদরঞ্জন মল্লিক

মাষে.

আজিকে ঘন আঁধার ঘোর,
দারুণ শীত রাতিরে,
সাজানো মম কুটীরখানি,
মলিন দীপভাতিরে,
নাহিক কেহ নাহিক কেহ
রয়েছি আমি একাকী,
এমন রাতে তাহার সাথে
হবে না মোর দেখা কি ?

উক মম শয্যাখানি,
বন্ধ মম শূন্যরে,
রয়েছে চাহি কাহার পানে
নয়ন দুটি ক্ষুন্নরে,
অনিছে বায়ু দুয়ার পাশে
বলিছে বেন কে ডাকি—
'একাকী আছ একাকী থাকে।
রহিতে হবে একাকীই।'

কপোতী আজ কাঁপিয়া শীতে
বলিছে ডাকি কপোতে—
দারুণ শীত এসো গো এসো
আরো বুকের কাছেতে,

ইপ্সোচা যুগে যুগে

কোকিল বধু স্বপন দেখি
সভয়ে যেন শিহরে
সলাজে ধীরে লুকায় মুখ
বঁধুর কোলে বিহরে ।

.

কেবল নূরে কাঁদিয়া ফেরে
বিধুর চখাচখী রে,
শীতের রাতে আমরা শুধু
তাদেরি মত দুখীয়ে ।
ওপারে প্রিয়া এপারে আমি
বহে বিরহ বাহিনী ।
দুজনে কাঁদি দৌহার লাগি
অরি বিগত কাহিনী ।

শুনেছি শীতে জড় জগতে
আপন টানে আপনে,
পৌষ রাতি দামিনী গতি
কাটে বাসর যাপনে ।
অগুর কাছে অণুকা আসে
মিলন যাচে সকলি,
বুক যে টানে আপন জনে
বুকের মাঝে আকুলি ।

.

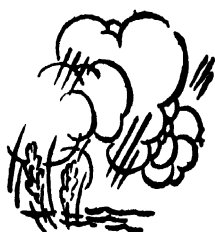
বৈজ্ঞানিকে শুনেছি গাছে
হিমের গুণ গীতিকা,
বলে সে 'আনি দেয় যে টানি
কণার কাছে কণিকা ।'

প্রেম যুগে যুগে

সে যদি আনে প্রণয় টানে
অগুর কাছে অগুরে,
পারে না সে কি আনিতে আহা
তমুর কাছে তমুরে ?

প্রথম কথা ।

প্রথম যখন কাছে এলে আমার প্রণয়িনী
কাঁচা রূপে ঢলঢলে মুখ সোহাগ করবিনী ।
আঁখির পরশ নয় না আঁখি, কথায় কথায় লাজ,
প্রণয় চেয়ে প্রবল হ'ল নূতন গৃহ কাজ ।
লিখতে তুমি জানতে নাক ভালবাসার বাণী,
রেখেছিলে গোপন করে সরল হিয়াখানি ।
মনে মনে ভেবেছিলাম করছ মেঘের ঘৃণা,
করেছি হায় কতই মনে ভালবাস কি না ?
হঠাৎ যেদিন আমার পায়ে ফুটলো ছোট কাঁটা
'উছ' বলে পড়ল বসে অবশ হ'ল পা-টা,
তখন তুমি চকিত এসে হে বালিকা বধু,
লাজটি ভুলে ঘোমটা তুলে বললে 'উছ' শুধু,
সজল নয়ন জানিয়ে দিলে প্রেমের গভীরতা
ভিতের প্রথম ইটখানিতেই সারা বাড়ির কথা ।



মোহিতলাল মজুমদার

দিনশেষে

লাল হয়ে ঐ নীল নভ-ভল সোণালী হয় যে শেষে—
যেন নেবু-রঙ ওড়না খসিছে রজনীর কালো কেশে !

সখি, এ সন্ধ্যা বড় মধুময়,

দিনশেষে তবু কেন মনে হয়—

এখনো যেটুকু রয়েছে সময়

লই মোরা ভালবেসে,

এস, কাছে এস, চুম্বন করি সুগন্ধ কালো কেশে ।

দিন যে ফুরাল, রবে না এ আলো, আসিছে নিশুতি রাত্রি—

সে আঁধারে সখি কেহ যে হবে না কাহারো বাসর-সাথী !

নিশীথ আকাশে আসিবে যে তারা,

চির-তিমিরের গ্রহরী তাহার,

চোখে-চোখে শুধু করিবে ইসারা

সে কি কোতুকে মাতি’—

এত প্রেম, প্রাণ—সব নির্বাণ ! শেষ এল সেই রাত্রি !

এত ছোট বেলা, কত খেলা তবু—কত রঙ, কত রূপ !—

হায় সখি, হায় ! ও রাঙা অধর করে যেন বিজ্রপ !

শত যুগ ধরি’ রূপসী বসুধা

মিটাইতে নারে অসীম যে ক্ষুধা—

এক যৌবনে ফুরাবে সে সুধা ?

—তারি পরে যম-যুগ !

হায় সখি, হায় ! তবু এ ধরায় এত রঙ, এত রূপ !

সুগন্ধে সুগন্ধে সুগন্ধে

রূপ যে অশেষ ! সুগ-সুগাস্ত্র এমনি অটুট রবে,
হেথাকার ফুল এমনি ফুটিবে মৃদু মধু সৌরভে !

আমাদের মত কত বিহঙ্গ,

কত বিচিত্র রূপ-পতঙ্গ

লভি' তার সেই রূপের সঙ্গ

বসন্ত উৎসবে,

লইবে বিদায় ধরণীর ফুল এমনি ফুটিয়া রবে !

ভবু সেইটুকু মধু-পার্বণ হেলা করি' কেটে যায় !

মধু-হৃদ হতে একটি কনিকা শুষিতে সে ভয় পায় !

উষালোকে হেরে সন্ধ্যার ছায়া,

দিবস-দুপুরে কত প্রেত-কায়া !—

হায় সখি, একি নিদারুণ মায়া,

একি বাধা পায়-পায় !

চির-নিশীথের একটি সে দিবা ভয়ে ভয়ে কেটে যায় !

অসীম ক্ষুধার একটু সে সুখা যে করে পুলকে পান,

সে যে জীবনের বনে বনে পায় সুমধুর সন্ধান !—

মাটি কেটে ফোটে নামহারা ফুল,

লতার বিতানে দোলে এলো চুল,

পাতায় পাতায় লিপি সে অতুল—

বায়ু-মর্মর গান !

সারাজীবনেও হেন মধুবনে ফুরায় কি সন্ধান ?

দিনশেষে তাই নয়নে আমার উথলে অশ্রুজল,

কবরী খুলিয়া ওই কেশপাশে মুছাও কপোলতল ।

বন্ধে আমার রাখ হাতখানি,

গুঞ্জর' কানে পরমা সে বাণী—

প্রথম যুগে যুগে

‘পাই বা না পাই, নাহি তার হানি

তবু নহে নিশ্ফল—

যাবার বেলায় কেলিয়াছি মোরা এক ঝোঁটা আঁখি-জল’ ।

এই যে তুলিছ মুখখানি হাতে—চাও দেখি মুখে মোর,

আর একবার—শেষবার—চোখে লাগুক নেশার ঘোর !

ভুলি যাও ব্যথা—বৃথা কলঙ্ক !—

সলিলের তলে আছে যে পঙ্ক ;

তুমি খুলে ধর মধু-করঙ্ক

আপন গঞ্জে ভোর,

কালো হয়ে আসে নীল-বনরেখা, রাখ এ মিনতি মোর !

চৈত্র-রাতে

আসিরাছে চৈত্র-রাতি, সাথে তার জ্যোৎস্না-যাদুকরী—

স্বপ্ন আছে, নিদ্রা নাই ! যৌবনের সেই রূপকথা

চমকিয়া স্মরি শুধু, চমকিয়া উঠে পাশ্ব যথা

মৃদু-গঞ্জে—দূর বনে ফোটে বুঝি নেবুর মঞ্জরী !

স্মরণের কুঞ্জে কুঞ্জে মন আজ করে মাধুকরী—

ঝরা-ফুলে বসে অলি, শুক শাখে শোভে কল্ললতা !

অপূর্ব সে উপশ্বাস !—মনে হয় আমি নাই তথা,

সে কাহিনী যার, তারে আমিও যে গিয়েছি পাসরি’ !

জানি সে যে কত বড় ! স্মরি যবে সেই পূর্বরাগ,

সেই ঋণ-মূছাবেশ হেরি’ শুধু পদচিহ্ন বাটে !—

কে বলিবে, একদিন আমি ছিছ এত ধনে ধনী !

মর্মর-অলিন্দে বসি’ জ্যোৎস্নালোকে যাহার সোহাগ—

(অধরে পড়েছে আলো, ছায়াখানি নরনে লগাটে !)

সজ্জাট-প্রেরণী নয়—সে যে ছিল আমারি রমণী !

কালিদাস রায়

রেবা-রোধসি

(রেবারোধসি বেতসীতরুতলে চৈতঃ সমুৎকণ্ঠতে)

মন পড়ে' আছে রেবাতটভূমে বেতসকুঞ্জতলে,
যেখানে ভোমারে পেয়েছিহু সখা মালতীর পরিমলে ।

হেথায় পৌর সৌধ-সদনে

নিবিড় তোমার বাহুর বাঁধনে

সেই স্মৃতি আজো অন্তরে ঘুরে সন্তুরি' আঁখিজলে ।

সেই লুকোচুরি গোপনাভিসার সেই দুৰু-দুরু বুক
বাণীর-বনের নিভৃত আঁধারে ক্ষণিক মিলনসুখ,

সে সুখের তুলা নাহি এ জীবনে

সে সুখ-বিরহ আজি এ মিলনে

ধিকি ধিকি জ্বলে, তোমার সাধের জতুগৃহ তায় গলে ।

নৃপূর খুলিয়া নীলবাসে সেই টিপি টিপি আসায়াওয়া
বন-মরমরে চমকি চমকি ঠায় আশাপথ চাওয়া,

বিদায়ের ক্ষণে হৃদয় বিবশ

আঁখিজলে লোণা চুষনরস,

সব স্মৃতিগুলি ফুটে আছে বৃকে রক্তিম শতদলে ।

আছে বা কেমন আহা রেবাতটে সেই তরুলতাগুলি,
হয়ত তাহারা নব অনুরাগে আমাদের গেছে ভুলি ;

জানেনা হেথায় সোণার পিঁজরে

বনের পাখীরা ছটফট করে,

পল্লবছায় নিভৃত কুলায় স্মরিতেছে পলে পলে ।

প্রেম যুগে যুগে

রাণী

তোমার আমি করব রাণী ছিল মনে,
গিয়েছিলাম—সিংহাসনের অশেষণে।

গেলাম তোমার বাঁধন ছিঁড়ি পার হয়ে বন নদী গিরি
জিজ্ঞাসিলাম মিলবে কোথ। জনে জনে ;
তোমার আমি করব বাণী ছিল মনে।

ভাবতাম আমি, তোমার ভাবেই আশ্রহারী,
‘রাজা যারা আমাব মতই মানুষ তারা,
আমার মতই কাঁদে হাসে, খায়, পরে, গায়, ভালবাসে,
আমিই তবে কেন রবো লক্ষ্মীছাড়া ?’
ছিলাম কি না তোমার প্রেমে ক্যাপার পারা।

এই ধারণার ঘুরে এলাম দেশে দেশে,
তুলোনাক পিঠে, কোনো হাতীই এসে।
খুলনাক সিংহদয়ার, উঠনাক জয় জয় কার,
‘আমুন হজুর’ বল্লোনাক উজ্জীর হেসে।
তোমার পাশে কাঙাল বেশে এলাম শেষে।

মেলোনাক রাজঘটা কেবল খুঁজে’,
এখন আমি ঘুরে ঘুরে দেখছি বুঝে ,
মেলোনাক ভিক্ষে করে কিন্তে তা হয় গায়ের জোরে,
জিন্তে তা হয় শৌর্য দিয়ে অনেক বুঝে।
মিল্লোনাক মুলুক মুলুক এলাম খুঁজে।

উল্টে বয়ং করতে ভড়ং পুঁজি পাটা
সব গেল মোর, মিটল নাক আকাঙ্ক্ষাটা ;

প্রেম হুগে হুগে

চোর ভেবে রাজপ্রহরীরা দিল আমার অনেক পীড়া,
পাগল বলেও পেলাম অনেক লাখি ঝাঁটা
নিঃশ্বাস আমি,—গেছে সব পুঁজিপাটা ।

পাইনি বলে তবু হতাশ হইনি রাণী,
একটি জ্বর দেশের আমি খবর জানি ।
তার অধিকার আমার পেতে হবে নাক কোথাও যেতে !
আমার পানে চাওলো, ভোল' বদনখানি—
সেখান আমি করব তোমায় মহারাণী ।

আমার মানস রাজ্যে বস' সিংহাসনে,
বিহার কর আমার প্রেমের কল্লবনে ।
রাজ্য, আমার জীবন জুড়ে তার তব জরকেন্দ্র উড়ে ।
কাব্য-রমা বরবে তোমা আলিঙ্গনে,
হে কল্যাণি, হওলো রাণী চিৎকুবনে ।



ষতীন্দ্রনাথ সেনগুপ্ত

নির্বাসন

মিলন-মগিন খুলিতললীন

ক্লাস্ত এ ভালবাসায়, বন্ধু,
বাঁচাও নিবিড় সজল মেদুর

নববিরহের আশায়, বন্ধু !
পাংশু গগনে পাণ্ডুর চাঁদ,
সব-সাধ-মেটা একি অবসাদ ।
জ্যোৎস্নার বালুচরে দিগ্-বাঁধ

ঢেকে দাও কালো মেঘে ;
গুরু গুরু গুরু কাঁপাইয়া বুক
বিদ্যৎ-ব্যথা শিহরি উঠুক,
শুক মুখের হান্স বরুক

ঝড়ের শঙ্কা লেগে ।
নিদ্রাঘ রজনী নীরবে দুজনে
জাগি আজ,
তোমারি চরণে জুড়ি চারি কর
নির্বাসনের নবনির্দেশ

মাগি আজ ।
আজ মেঘদূত ফিরাও উজান
পবনে,

অলকাল্লিষ্ট মিলনের ব্যথা
রামগিরিগুহাভবনে ।

পথে যেতে যেতে যাক্ সে কুড়ায়ে
মিলনমখিত ফুলের মালা

মুগ্ধের মুগ্ধে মুগ্ধে

শিখিলমৌরী অধমুদ্রষ্ট

ব্যর্থশরের মৌন জালা ।

ভিন্ন করিয়া চুখনরত

গতত্বা যত অধরপুট

সিস্ত করিয়া উদাসীন যত

অনিমেষ আঁখি পল্লবে,

, ছিন্ন করিয়া ক্লান্ত শিখিল

প্রাণান্ত ভুজবন্ধন

অকস্মাতের দম্কা হাওয়ায়

দুর্লভ করি' বল্লভে—

নবমেঘদূত ভাসিয়া চলুক

দেশে দেশে,

নিরুদ্ধদ্বার অলকা ত্যজিয়া

নিবিড় নীল নিরুদ্ধদেশে ।

দুর্লভ কর বন্ধু আমার—

দুর্লভ কর হে,

অপরিচয়ের বিস্মৃতি পার

কর অতিবল্লভারে আমার

ঘন নীলবাসে নবীন বিরহে

দুর্লভতর হে ।

সারারাত জলে সন্ধ্যার দীপ,

ছায়া প'ড়ে আছে পায়,

লগাটে ক্লান্তি কালিমার টীকা

নির্বাণ কর এ মিলন-শিখা,

দুটী হৃদয়ের দীর্ঘশ্বাসে

নিঃশেষ কর তায় ।

প্রেম যুগে যুগে

বাসিযুখে হাসি পঙ্কজতার
পঙ্কজে বড় লাগে গুরুভার,
কিরে যার যদি পঙ্কজে তার
গহিন্ তিমির তলে,
সেখা সে আঁধারে রচিবে তপন
নূতন যুগালে নূতন স্বপন,—
গোপন দুরাশা জানাই বন্ধ
চারি নয়নের জলে ।

শেষ হ'ল নিশা, আশীষ মাগিয়া
প্রভাতী প্রণাম সারিয়াছে প্রিয়া,
ভোরের বাতাসে আঁচন সারিয়া
চলি যায় শুভ'খণ,
ক্ষম গো বন্ধ এ মম প্রলাপ—
এবার মিলনে হানো অভিলাপ,
অপলাপ হ'তে বেঁচে যাক প্রেম
লভিয়া নির্বাসন ।

চোখের জল

ও-চোখে মানাবেনা চোখের জল আর ।
কাদিয়া অপমান কোরোনা বেদনার ।

নাই সে নীল নভে বোশেখী কালো মেঘ,
নাই ত দূর দূর আঘাত উদ্বেগ ।
কোথা সে শাওনীয় বাতাস পূরবীয়',
কোথা বা বিজলীর ঝলক ছলনার ?
ও-চোখে আনিওনা চোখের জল আর ।

হুঃপ্রেম যুগে যুগে

যে যুধি ঝরি পড়ি হারাল পরিমল
তারে কি সাজে আর শিশির ঢল-ঢল !
নিদাঘ নিপীড়নে যে বুক সমতল
সেখা কি ঢল-ঢলে কমল কহলার ?
ও-বুকে ফেলিও না চোখের জল আর ।

ও-মুখে হাসি তাও হবে যে উপহাস,
ধুতুরা পারে কিগো ফিরাতে মধুমাস ?
নাই সে ধূপছায়া নাই সে মেঘমায়া,
নাই সে গৌরব হাসি কি কান্নার ।
উষর ও-কপোলে বিফল জলধার ।

এখন বস আসি আসনে উদাসীন,
ঘুরায়ে চল জপে দিনের পর দিন ।
শুনোনা কারা হাসে কাঁদে ও ভালবাসে,
এখন কর শুধু জপের মালা সার !
সমুখে বহি যাক্ গজা খরধার ।

ফেলোনা ফেলোনা গো বিফল আঁখিজল
কোরো না অপমান গোপন বেদনার ।



দ্বিজেন্দ্রনারায়ণ বাগচী

কাব্য ও তুমি

আমার কাব্য তোমার সনে কোন বাঁধনে বাঁধা ?

ভাবতে গেলে নিজের লাগে ধাঁধা ।

সে যে শুধু তোমায় নিয়ে— একথাটি বলতে গিয়ে

মনের কোণে লাগে বিষম বাধা ।

যতই তুমি হও না আপন, হওনা প্রিয় প্রিয়ে,

বিশ্ব নহে শুধুই তোমায় নিয়ে ।

মধু আছে হাজার ফুলে, হাজার রূপে নয়ন ভুলে,

প্রাণ যে অমর সবার সুধা পিয়ে ।

তবু আমার গানে তোমার নিবিড় পরশ খানি,

জড়িয়ে আছে কেমনে না জানি ।

বাহির পশে মনের গেহে, তুমি কি গো করুণ স্নেহে

সরস কর বুলিয়ে শীতল পাণি ।

তুমি সে কি গো প্রেমের শ্যাম স্নিগ্ধ ছায়া দিয়ে

আবরি আছ সকল মোর হিয়ে ?

তুমি আমি

তোমার আমার জনম হল, এক নিমেষে একই ক্ষণে,

যেমন দেখা হ'ল আমার তোমার সনে ।

ধরণীর এই গর্ভ-আঁধার ছেড়ে নব জনম দৌহার

অলোক লোকের মুক্ত আলোক সমীরণে ।

তুমি ছিলে তাহার আগে তোমার অলীক স্বপন সম

আমার মান্য মত অকুট চেতন মম ।

প্রেম যুগে যুগে

দুটি প্রাণের পরশ লেগে এমনি আলো উঠল জেগে
সেই আলোতে মিলিয়ে গেল মান্নার তম ।
'আমি' সে যে শূণ্য আঁধার চেতন-বিহীন 'তুমি' বিনে,
'তুমি'র মাঝে আপনারে সে লয় যে চিনে ।
এই চেনা কি যাবে থামি ? অসীম 'তুমি' অসীম 'আমি'
দৌহার মাঝে দৌহার বিকাশ রাত্রি দিনে ।
জনম মোদের এক নিমেষে, বিকাশ সে যে একই খনে,
মরবো যখন মরবো মোরা এক মরণে ।
'আমি' 'তুমি' যদি মিলায়, লুপ্ত হবে সকল লীলাই,
কোথাও কিছু রবে না শেষ এই ভুবনে ।



হোমেন্দ্রকুমার রায়

আবেদন

দুজনে আজ একলা হলুম ! বনের দোলায় সবুজ দোলে,
একটা দুটো গানের পাখী আকাশ-বাতাস কাঁপিয়ে তোলে !
আলতা মাখা পায়ের তলায়,
দুর্বাদলের ঘুম ভেঙে যায়,
থাকলে গোপন মনের কথা, আজকে তুমি আমায় বোলো,
তার আগে ভাই একটি কথা,—ঘোমটা খোলো, ঘোমটা খোলো

* *

নদীর বুকে লুকিয়ে থাকা জলপরীদের গানের সভা,
দুই তীরে তার ফুলের আসর—জুঁই, চামেলী, পারুল, জবা !
তোমার বকের অঞ্চলেতে,
বাতাস যে চায় মূছাঁ যেতে,
নই আমিও ভালো মানুষ—এইটুকু সই সম্মুখে চোলো,
আর তো আমার সহচেনা রে—ঘোমটা খোলো, ঘোমটা খোলো !

* *

জ্যোৎস্না-রঙে ডুবিয়ে তুলি চন্দ্র কি আজ নক্সা করে,
পূর্ণিমা শোন্ বাজায় বীণা মনের ভেতর স্বপ্ন-স্বরে !
হোয়ো না ভাই জ্যাস্ত পাষণ,
অশ্রুজলে প্রেমের ভাসান
আজ দিও না ! আজকে খালি চোখের ভাষায় মাতিয়ে তোলে,
ওগো আমার ভালোবাসা !—ঘোমটা খোলো, ঘোমটা খোলো !

জীবনে

জীবনে আমি গো গেয়েছি অনেক
সুখের গান,
আমার রাগিনী ছুঁয়েচে অসীমে
তারার প্রাণ।
বীণাটি আমার সুরের স্বপন
হৃদয়ে হৃদয়ে করেছে বপন,
কখনু যে তার ছিঁড়ে গেছে তার
শোনেনি কান,
গানের সভায় ব'সে আছি আজ
নীরব তান।

* *

জীবনে আমি গো খেলেছি অনেক
প্রেমের খেলা,
প্রাণের বাগানে যে রং ফুটেচে,
করিনি হেলা ?
চোখের চাহনি, ঠোঁটের কাঁপন,
এই নিরে দিন করিয়া যাপন,
এখন দেখি গো একা ব'সে আমি—
গিয়েচে বেলা,
মরুর তটেতে ঠেকেচে আমার
আশার ভেলা।

* *

জীবনে আমি গো দেখেছি অনেক
চাঁদের হাসি,

কুসুম-শরনে ফুলেচি ধরার

আধার-কানী ।

দিল থেকে মোর খুলে গেছে খিল,

দিয়েচে দখিনা, গেয়েচে কোকিল,

জানিনা কখনু ঝ'রে গেল শীতে

কুসুম রাশি,

হাসির শাশানে বাজিছে এখন

কাদন-বাঁশী ।



কিরণধন ছোটোপাধ্যায়

সোনার কাঠি

সোনার কাঠির পরশে সখি লো,

কে আমারে আজি জাগালো !

নিমিলিত আঁখি নিলীন শরনে,

মগ্ন স্বপন-কুসুম চরণে,

মীল অঙ্গন কে আসি নরনে

লাগালো !

কে আমারে সখি জাগালো !

বকুল মালার কুসুম কণ্ঠে

কে আমারে সখি দোলালো !

সে ফুল গন্ধ সুরভি সুবাস

গারে লাগে যেন তারি নিশ্বাস,

সখিলো আমারে আকাশ বাতাস

ভোলালো !

কণ্ঠে কুসুম দোলালো !

মোর ঘৌবন-বন পুষ্পে পাতায়

সখিলো কে আজ কোটালো !

হুরে পড়ি সেই সৌরভ ভারে,

লুক ভ্রমর কানে ঝঙ্কারে,

এসে দুটি পারে বারে বারে বারে

লোটালো !

ঘৌবন মম কোটালো !



গিরিজাকুমার বসু

আহ্বান

মুখের হাসিতে আর বুকের বেদনা সই
ঢেকে কত রাখব !

জোর করে মন বেঁধে আড়ালে লুকিয়ে কেঁদে
কত কাল থাকব ?

যেদিন বিদায় নিলে মনে পড়ে বলেছিলে,
‘হৃদিনেই আসব ।’

তুমি কি ভুলিলে সই নেই মোর এক বই
ভাল যারে বাসব ।

হৃদয়ে রাখিয়া যায় পলকে হারাতে, হার !
কি দিনই সে যাপছে,

কে বুঝিবে সেই কথা তোমার বিরহ ব্যথা
কি প্রাণে সে চাপছে ।

দিবা নিশি দেখে তবু দুজন্যর কারো কড়ু
যেতো না যে ভিরাষা ।

ভুবনে কি ছিল মধু, নয়নে কি প্রেম বঁধু
মরমে সে কি আশা ।

দরশ পরশ মাগি আজ আমি নিশি জাগি
অধর কি তিলক !

হে মোর অমির, তুমি এস, তারে চুমি চুমি
কর সুখা-সিক্ত ।

আজি দিকে দিকে শ্রীতি ভরি ওঠে বন-বীথি
চম্পক-গন্ধে,

এস তুমি অহুরাগে নিখিল ভুবন জাগে
নব নীতি ছন্দে ।

সুরেন্দ্রনাথ মৈত্র

খুঁড়ি

লাটাই গুটিয়ে আস্তে আস্তে টেনে নিলে খুঁড়িটাকে
বুকের উপর ।

ক'রছিলাম কর্ কর্ কড়িঙের মত

খুঁতে খাচ্ছিলাম ঘুরপাক ।

কান্নিকওয়াল খুঁড়ি কেবল গৌৎ খেয়ে মরে,
তার উর্ষাআটা বারবার হয় কেবল অধোগামী ।

এবার ভরনা দিয়ে করলে ভারসাম্যের বিধান,

একটা ল্যাজও দিল জুড়ে ।

এ পুচ্ছটা তুচ্ছ নয়,

এতে দেয় স্থিতি-স্থাপকতা ।

হাল্কা প্রাণে একটু বোঝার ভার থাকা ভালো,
তাতে উদ্ভয়নটা সোজা পথেই চলে ।

আবার দিলে উড়িয়ে ।

এবার আমার চালচলনটা ভজোচিত,

মাতালের মতো টালমাটাল খেয়ে চলা নয়,

সিধে রাস্তায় সটাং চলেছি তোমার লাগামের বশে,

মাঝে মাঝে টেনে ধরো আবার স্মৃতি ছাড়ো,

থেকে থেকে দাও একটা হেঁচকা টান ।

... তোমার খেলাটা মন্দ নয় ।

নিজে পারোনা উড়তে,

প্রেম যুগে যুগে

কিন্তু ওড়বার সখ আছে বিলক্ষণ ।

আমার উড়ুছ প্রাণটার উপর খেলাও তোমার ওস্তাদি,

আমার উড়িয়ে চলে তোমার নভ পরিক্রমা ।

ভাবি, তুমি না থাকলে আমার গতি হ'ত কি ?

আর আমার না পেলে কেমন করে শূণ্ণে হাঁকাতে পক্ষীরাজ ?

যুগলাষয়ে হলেন অর্ধ নারীধর

তোমার ছন্দানুবর্তী হয়ে ।

প্রেম

যখনি যাও আমার চোখের আড়ালে

তখনি ত হয় এই ইঞ্জিয়লোকে তোমার মৃত্যু ।

তবু জানি তুমি আছো এই দেহলোকে,

তাই ইঞ্জিয়াতুর মন আশস্ত হয় বিরহে ।

আবার পাবো দেখা, আসবে তুমি কাছে,

এই আশায় বুক বাঁধি ।

পেলেম আবার তোমায় ভুজবন্ধে,

কিন্তু তৃপ্তি হল না ত ।

বিজ্ঞান বলে জুড়ে জুড়ে কখনো হয় না সংস্পর্শ,

নিবিড়তম চাপেও ।

অনেক পরীক্ষা গবেষণার ফলে

পণ্ডিতরা উপনীত হলেন এই সিদ্ধান্তে ।

আমার সূক্ষ্ম অনুভূতি বিজ্ঞানবিৎ,

সে সহজেই বোঝে দেহের মিলন ব্যবধানময় ।

নয়, নয়, নয়—

এই না-দিয়েই বুঝি অনধিগত হাঁ-কে

প্রেম যুগে যুগে

—আভাষে ইঙ্গিতে বিধাবিষয়ে ।

তাই প্রাণ হয় আবেগময়,
ছুটি তোমার পানে প্রাণের অন্তরীক্ষে ।
অসীমের সঙ্গে হয় প্রত্যক্ষ পরিচয়
এই অফুরন্ত গতির প্রেরণায়,
যুগপৎ উত্তরণ ও অতিক্রমণ দিয়ে ।

অতি পুরাতন কথা কিন্তু চিরনবীন
—সঙ্গমবিরহবিকলে বরমিহ বিরোহো ন সঙ্গমস্তস্তা ।
সঙ্গে সৈব তথৈক। ত্রিভুবনমপি তন্নয়ং বিরহে ॥
মিলন বিরহ উভয়ের মাঝে জানি বিরহই ভালো,
কাছে সে একেলা, নিখিল ভূবনে বিরহে যে সে ছড়ালো ।

ওগো পদাঙ্কদূতের কবি,
তোমাকে নমস্কার ।
অন্ধ অনুভূতিকে তুমি দিলে ভাষা
চিরবিরহকে করলে মিলন ঘনিষ্ঠ ।
কুজ এই প্রাণের পঞ্চল,
অহর্নিশ হচ্ছে কেবল বাষ্পীভূত,
ধুঁইয়ে ধুঁইয়ে উঠছে মেঘে
অসীম নীলিমায় আশ্রহারা হবার ভঞ্জে ।
এইত প্রেম—কুজকে উপনীত করে সীমাতীতে ।



নজরুল ইসলাম

চৈতী হাওয়া

হারিয়ে গেছ অন্ধকারে—পাইনি খুঁজে আর,

আজকে তোমার আমার মাঝে সপ্ত পারাবার

আজকে তোমার জন্মদিন—

স্মরণ বেলায় নিত্মাহীন

হাতড়ে কিরি হারিয়ে যাওয়ার অকুল অন্ধকার !

এই-সে-হেথাই হারিয়ে গেছ কুড়িয়ে পাওয়া ভার !

শূন্য ছিল নিভল দীঘির শীতল কালো জল,

কেন তুমি ফুটলে সেথা ব্যাধার নীলোৎপল ?

আঁধার দীঘির রাঙলে মুখ

নিটোল ছেঁটের ডাঙলে বুক,—

কোন্ পূজারী নিল ছিঁড়ে ? ছিল তোমার দল—

তেকেছে আজ কোন্ দেবতার কোন্ সে পাষণ্ড তল ?

অন্তধেয়ার হারামানিক-বোঝাই-করা-না’

আসছে নিতুই কিরিয়ে দেওয়ার উদয় পারের গাঁ ।

ঘাটে আমি রই ব’সে

আমার মানিক কইগো সে ?

পারাবারের ঢেউ-দোলানি হান্ধে বুকে ঘা ।

আমি খুঁজি ভিড়ের মাঝে চেনা কমল-পা ।

বইছে আবার চৈতী-হাওয়া গুম্বে ওঠে মন,

পেরেছিলাম এমনি হাওয়ায় তোমার পরশন ।

ইঞ্জেন্স ঘুণে ঘুণে

ভেমনি আবার মহরা-মউ

মৌমাছির কুকা বউ

পান ক'রে ওই ঢুলছে নেশায়, ঢুলছে মহল বন।

কুল-সৌখিনু দখিন হাওয়ার কানন উচাটন।

পড়ছে মনে টগর চাঁপা বেগ চামেলি যুঁই

মধুপ দেখে যাদের শাখা আপনি যেত লুই।

হাস্তে তুমি দুলিরে ডাল,

গোলাপ হ'রে কুটুত গাল!

ধল কমলী আউরে যেত তপ্ত ও-গাল ছুঁই!

বকুল শাখা ব্যাকুল হ'ত, টলমলাত ভুঁই!

চৈতী রাতির গাইত গজল বুলবুলিয়ার বর,

দুপুর বেলায় চবুতরায় কাঁদত কবুতর!

ভুঁই-তারকা সুন্দরী

সজনে ফুলের দল ঝরি'

ধোপা ধোপা লাজ ছড়াত দোলন ধোঁপার পর,

কাঁকাল হাওয়ার বাজত উদাস মাছরাঙাদের স্বর!

পিয়াল বনের পলাশ ফুলের পেলোশ ভরা মউ

খেত বঁধুর জড়িয়ে গলা সাঁওতালিয়া বউ!

লুকিয়ে তুমি দেখতে ভাই

বলতে, 'আমি অমনি চাই।'

ধোঁপায় দিতাম চাঁপা গুঁজে ঠোঁটে দিতাম মউ

হিজল শাখায় ডাকত পাখী "কও গো কথা বউ।"

ইন্দ্রিয় যুগে যুগে

ভাক্ত ভাহক জল পায়রা নাচ'ত ভরা বিল,
জোড়া ভুর ওড়া যেন আসমানে গাঙ'চিল !
হঠাৎ জলে রাখতে পা,
কাজলা দীঘির শিউরে গা—
কাঁটা দিয়ে উঠ'ত মৃণাল ফুটত কমল-বিল ।
ভাগর চোখে লাগ'ত তোমার সাগর দীঘির নীল !

উদাস দুপুর কখন গেছে এখন বিকাল যায়,
ঘুম জড়ালো ঘুমন্তী নদীর ঘুমুর পরা পায় !
শব্দ বাজে মন্দিরে,
সন্ধ্যা আসে বন ঘিরে,
ঝাউএর শাখায় ভেজা আঁধার কে পিঁজেকে হার !
মাঠের বাঁশী বন উদাসী ভীম-পলাশী গার !

বউল আজি বাউল হ'ল আমরা তফাতে !
আম-মুকুলের গুঁজি কাঠি দাও কি ধোঁপাতে ?
ডাবের শীতল জল দিয়ে
মুখ মাজ কি আর প্রিয়ে ?
প্রজাপতির ডানাঝরা সোনার টোপাতে
ভাঙা ভুর দাও কি জোড়া রাতুল শোভাতে ?

বউল ক'রে ফলেছে আজ ধোলো ধোলো আম,
রসের পীড়ায় টস্ টসে বুক ঝুরছে গোলাপ জাম !
কামরাঙারা রাঙ'ল ফের
পীড়ন পেতে ঐ মুখের,
স্মরণ ক'রে চিবুক তোমার, বুকের তোমার ঠাম—
জামরুলে রস ফেটে পড়ে, হায় কে দেবে দাম !

হুঁজেনে হুঁজেনে হুঁজেনে

করেছিলাম চাউনি চন্নন নন্নন হ'তে ভোর,
ভেবেছিলুম গাঁথ'ব মালা—পাইনে খুঁজে ভোর !

সেই চাহনী নীল-কমল

ভরল আমার মানস জল,
কমল-কাঁটার ঘা লেগেছে মর্ম-মূলে মোর ।
বন্ধে আমার ঢুলে আঁখির সাতনরী হার লোর ।

তরী আমার কোন্ কিনারায় পাইনে খুঁজে কুল,
স্নরগ-পারের গন্ধ পাঠায় কমলা নেবুর কুল !

পাহাড় তলীর শালবনায়

বিষের মত নীল ঘনায় !

সাঁঝ পরেছে ঐ দ্বিতীয়ার চাঁদ-ইছদী-ডুল !
হার গো আমার ভিন্ গাঁয়ে আজ পথ হয়েছে ডুল !

কোথায় তুমি কোথায় আমি চৈতে দেখা সেই,
কৈদে কিরে যায় যে চইত—তোমার দেখা নেই ।

কঠে কৈদে একটা স্বর—

কোথায় তুমি বাঁধলে স্বর ?

তেমনি ক'রে জাগ'ছ কি রাত আমার আশাতেই ?
কুড়িয়ে-পাওয়া বেলায় খুঁজি হারিয়ে-যাওয়া যেই ?

পারাপারের ঘাটে প্রিয়া রইল বেঁধে না,'

এই ভরীতে হয়তো তোমার পড়বে রাঙা পা !

আবার তোমার সুখ-ছোঁয়ায়

আকুল দোলা লাগবে নার,

এক ভরীতে বাব মোরা আর-না-হারী গাঁ,
পারাপারের ঘাটে প্রিয়া রইল বেঁধে না' ॥

অ-নামিকা

তোমাতে বন্দনা করি

স্বপ্ন সহচরী

লো আমার অনাগত প্রিয়া,

আমার পাওয়ার বুকে না-পাওয়ার তৃষ্ণা জাগানিয়া !

তোমাতে বন্দনা করি ...

হে আমার মানস-রত্নিনী,

অনন্ত-যৌবনা বালা, চিরন্তন বাসনা-সজ্জিনী !

তোমাতে বন্দনা করি...

নাম-নাহি-জানা ওগো আজো নাহি-আসা !

আমার বন্দনা লহ, লহ ভালবাসা...

গোপন চারিনী মোর, লো চির প্রেমসী !

সৃষ্টি-দিন হ'তে কাঁদ বাসনার অন্তরালে বসি'—

ধরা নাহি দিলে দেহে ।

তোমার কল্যাণ-দীপ জ্বলিল না

দীপ-নেভা বেড়া-দেওয়া গেছে ।

অসীমা ! এলেনা তুমি সীমারেখা-পারে ।

স্বপনে পাইয়া তোমা' স্বপনে হারাই বারেবারে ।

অরূপা লো ! রতি হ'য়ে এলে মনে,

সতী হ'য়ে এলে নাক ঘরে ।

প্রিয়া হ'য়ে এলে প্রেমে,

বধু হ'য়ে এলে না অধরে !

জাফা-বুকে রহিলে গোপনে তুমি শিরীন্ শরাব,

পেরানার নাহি এলে !—

“উভারো নেকাব”—

ছাঁকে মোর দুঃস্বপ্ন কামনা ।

জ্যোতিষ যুগে যুগে

সুদূরিকা ! দূরে থাক—ভালবাস নিকটে আস না ।

তুমি নহ নিভে-যাওয়া আলো, নহ শিখা ।

তুমি মরীচিকা,

তুমি জ্যোতি ।—

জন্ম জমান্তর ধরি' লোকে লোকান্তরে তোমা করিছে আরতি,

বারে বারে একই জন্ম শতবার করি ।

যেখানে দেখিছি রূপ,—করেছি বন্দনা প্রিয়া

তোমারেই 'স্মরি' ।

রূপে রূপে, অপরূপা, খুঁজেছি তোমার

পবনের যবনিকা যত তুলি তত বেড়ে যায় ।

বিরহের কান্না-ধোওয়া তৃণ হিয়া ভরি

বারে বারে উদিয়াছ ইন্দ্রধনু সমা,

হাওয়া—পরী

প্রিয়া মনোরমা ।

ধরিতে গিয়াছি—তুমি মিলায়েছ দূর দিগন্তরে ।

ব্যথা-দেওয়া রাগী মোর, এলে নাক কথা-কওয়া হ'য়ে !

চির-দূরে-থাকা ওগো চির-নাহি-আসা ।

তোমারে দেহের ভীরে পাবার দুরাশা

এহ হ'তে এহান্তরে লয়ে যায় মোরে ।

কামনার বিপুল আশ্রয়ে—

জন্ম লভি লোকে লোকান্তরে ।

উদ্বেলিত বুকে মোর অতৃপ্ত যৌবন-ক্লথা

উদগ্র কামনা,

জন্ম তাই লভি বারে বারে

না-পাওয়ার করি আরাধনা !...

যা-কিছু সুন্দর হেরি করিছি চূষন ;

যা-কিছু চূষন দিয়া করেছি সুন্দর—

সে-সবার মাঝে যেন তব হয়ষণ

হুঁপ্ৰোম হুণে হুণে

অনুভব করিয়াছি !—হুঁ রেছি অধর

ভিলোস্তমা, ভিলে ভিলে !

তোমাতে যে করেছি চুম্বন

প্রতি তরুণীর ঠোঁটে !

প্রকাশ গোপন ।

যে কেহ প্রিয়ারে তার চুম্বিয়াছে ঘুম-ভাঙা রাতে,

রাত্রি-জাগা তন্দ্রা-নাগা ঘুম-পাওয়ার প্রাতে,

সকলের সাথে আমি চুম্বিয়াছি তোমা’

সকলের ঠোঁটে যেন, হে নিখিল-প্রিয়া প্রিয়তমা !

তরু, লতা, পশু, পাখী, সকলের কামনার সাথে

আমার কামনা জাগে, আমি রমি বিশ্ব কামনাতে !

বঞ্চিত যাহারা প্রেমে, ভুঞ্জে যারা রতি ;

সকলের মাঝে আমি—সকলের প্রেমে মোর গতি !

যেদিন শ্রষ্টার বৃকে জেগেছিল আদি সৃষ্টি-কাম,

সেই দিন শ্রষ্টা সাথে তুমি এলে, আমি আসিলাম ।

আমি কাম তুমি হ’লে রতি,

তরুণ তরুণী বৃকে নিত্য তাই আমাদের অপরূপ গতি !

কী যে তুমি, কী যে নহ, কত ভাবি—কত দিকে চাই !

নামে নামে, অ-নামিকা, তোমাতে কি খুঁজিছু বৃথাই ?

বৃথাই বাসিছু ভালো ! বৃথা সবে ভালোবাসে মোরে ?

তুমি ভেবে যারে বৃকে চেপে ধরি সেই যার স’রে !

কেন হেন হয় হার, কেন লয় মনে—

যারে ভালোবাসিলাম, তার চেয়ে ভালো কেহ

বাসিছে গোপনে ।

সে বৃখি সুন্দরভর—আরো আরো মধু !

আমারি বধুর বৃকে হাস তুমি হ’রে নববধু ।

বৃকে যারে পাই, হার

প্রেম যুগে যুগে

তারি বুকে তাহারি শব্দ
নাহি-পাওয়া হয়ে তুমি কাঁদ একাকিনী,
ওগো মোর প্রিয়ার সতিনী !...

বারে বারে পাইলাম—বারে বারে মন যেন কহে—
নহে এ সে নহে !

কুহেলিকা ! কোথা তুমি ? দেখা পাব কবে ?
জন্মেছিলে, জন্মিয়াছ, কিহা জন্ম লবে ?

কথা কও, কথা কও প্রিয়া,
হে আমার যুগে-যুগে না-পাওয়ার তৃষ্ণা-জাগানিয়া ।
কহিবেনা কথা তুমি ! আজ মনে হয়,
প্রেম সত্য চিরন্তন, প্রেমের পাত্র সে বুঝি চিরন্তন নয় ।

জন্ম যার কামনার বীজে
কামনারই মাঝে সে যে বেড়ে যায় কল্লভরু নিজে ।
দিকে দিকে শাখা তার করে অভিযান,
ও যেন শুবিয়া নেবে আকাশের যত বায়ু প্রাণ ।

আকাশ ঢেকেছে তার পাখা

কামনার সবুজ বলাকা ।

প্রেম সত্য, প্রেম-পাত্র বহু—অগণন,
তাই—চাই, বুকে পাই, তবু কেন কেঁদে ওঠে মন ।

মদ সত্য, পাত্র সত্য নয়,
যে পাত্রে ঢালিয়া খাও সেই নেশা হয় ।

চির-সহচরী !

এতদিনে পরিচয় পেছ, মরি মরি !
আমারি প্রেমের মাঝে রয়েছে গোপন,
বৃথা আমি খুঁজে মরি জন্মে জন্মে করিছ রোদন ।

প্রতি রূপে, অপরূপা, ডাক তুমি,
চিনেছি তোমার,

প্রেমের দুঃখ দুঃখ

বাহারে বাসিব ভালো—সে-ই তুমি,

ধরা দেবে তার !

প্রেম এক, প্রেমিকা সে বহু,

বহু পায়ে ঢেলে পিব সেই প্রেম—

সে সুরাব্ লোহ ।

তোমারে করিব পান, অ-নামিকা, শত কামনার,

ভুলারে, গেলাসে কড়ু, কড়ু পেয়ালায় ।

ফাঙ্কনৌ

সখি পাতিস্নে শিলাতলে পদ্মপাতা,

সখি দিস্নে গোলাব-ছিটে খাস্ লো মাথা

যার অন্তরে ক্রন্দন

করে হৃদি মস্থন

তারে হরি-চন্দন

কমলী-মালা—

সখি দিস্নে লো দিস্নে লো, বড় সে জালা !

বল কেমনে নিবাই সখি বুকের আগুন !

এল খুন-মাথা তুন নিয়ে খুনেরা কাগুন !

সে যে হানে ছল্—খুনুড়ি

কেটে পড়ে ফুলকুঁড়ি

আইবড়ো আইবড়ি—

বুকে ধরে ঘুণ !

যত বিরহিনী নিম্ন-খুন—কাটা ঘায়ে চুন !

আজ লাগ-পানি পিয়ে দেখি সব-কিছু দূর !

যবে আতর বিলায় বায়ু বাতাবি নেবুর !

হ'ল মাদার অশোক ঘা'ল

ইপ্সোম ঘুণে ঘুণে

রঙন ত' নাজেহাল !

লালে লাল ডালে-ডাল

পলাশ শিমুল !

সখি তাহাদের মধু করে—মোরে বেঁধে ছল

নব সহকার-মঞ্জরী সহ ভ্রমরী !

চুমে ভোমরা নিপট, হিরা মরে গুমরি !

কঁত ঘাটে ঘাটে সই-সই

ঘট ভরে নিতি ওই

চোখে মুখে কোটে খই,—

আব-রাঙা গাল,

যত আধ-ভাঙা ইজিত তত হয় লাল !

আর সইতে পারিনে সই কুল-ঝামেলা,

প্রাতে মল্লী চাঁপা, সাঁজে বেলা চামেলা !

হের কুটলো মাধবী ছরী

ডগমগ ভরুপুরী,

পথে পথে কুলঝুরী

সজিনা কুলে—।

এত কুল দেখে কুলবালা কুল না তুলে !

সাজি' বাটা-ভরা ছাঁচি পান ব্যজনী-হাতে

করে স্বজনে বীজন কত সজনী ছাতে।

সেথা চোখে চোখে সঙ্কেত ।

কানে কথা—যাও ধেং,—

ট'লে-পড়া অঙ্কেতে

মনমথ-ঘাস !

আজ আমি ছাড়া আর সবে মন মত পায় ।

হুঁপ্বেয় যুগে যুগে

সখি মিষ্টি ও ঝাল মেশা এল একি বায় ।
এ যে বুক বত জ্বালা করে মুখ তত চার ।
 এ যে শারাবের মত নেশা
 এ গোড়া মলয় মেশা,
 ডাকে তাহে কুলনাশা
 কালামুখো পিক্ !
যেন কাবাব করিতে বোঁধে কলিজাতে শিক্ ?

এল আলো-রাধা ফাগ ভরি চাঁদের থালায়,
বরে জ্যোছনা-আবীর সারা স্ত্রাম-সুধমায় '
 যত ডালপালা নিম্খুন,
 ফুলে ফুলে কুঙ্কম,
 চুড়ি বালা রুমঝুম,
 হোরির খেলা,
গুধু নিরালার কেঁদে মরি আমি একেলা !

আজ সঙ্কেত-শঙ্কিতা বন-বীথিকায়
কত কুল-বধু ছিঁড়ে সাড়ি কুলের কাঁটায়
 সখি ভরা মোর এ দুকুল
 কাঁটাহীন গুধু ফুল !
 ফুলে এত বেঁধে ছল ?—
 ভাল ছিল হার—
সখি ছিঁড়িত দুকুল যদি কুলের কাঁটায় !

গান

কেন কাঁদে পরাণ কী বেদনার কারে কহি ।
সদা কাঁপে ভীৰু হিয়া রহি' রহি' ॥

প্রেম যুগে যুগে

সে থাকে নীল নভে আমি-নয়ন-জল-সাররে,
সাতাশ তারার সতীন-সাথে সে যে ঘুরে' মরে,
কেমনে ধরি সে চাঁদে রাহু নহি ॥
কাজল করি' যারে রাখি গো আঁখি-পাতে
স্বপনে যায় সে ধুয়ে গোপন অশ্রু-সাথে !
বুকে ভায় মালা করি' রাখিলে যায় সে চুরি,
বাঁধিলে বলয়-সাথে মলয়ায় যায় সে উড়ি'
কি দিয়ে সে উদাসীর মন মোহি' ॥

এ মোর অহঙ্কার

নাই বা পেলাম আমার গলায় তোমার গলার হার,
তোমায় আমি করব সৃজন—এ মোর অহঙ্কার !

এমনি-চোখের দৃষ্টি দিয়া

তোমায় যারা দেখল প্রিয়া,

তাদের কাছে তুমি তুমিই । আমার স্বপনে
তুমি নিখিল-রূপের বাণী—মানস-আসনে !—

সবাই যখন তোমায় ঘিরে করবে কলরব,
আমি দূরে ধেয়ান-লোকে রচব তোমার স্তব ।

রচব সুরধুনী-তীরে

আমার সুরের উর্বশীয়ে,

নিখিল-কণ্ঠে দুলবে তুমি গানের কণ্ঠ-হার—
কবির প্রিয়া অশ্রু-মতী গভীর বেদনার ।

যে দিন আমি থাকুবনাক থাকবে আমার গান,
বলবে সবাই, “কে সে কবির কাঁদিয়েছিল প্রাণ ?”

আকাশ-ভরা হাজার তারা

রইবে চেয়ে তন্দ্রাহারা,

ইপ্সেচ মুগে মুগে

সখার সাথে জাগবে রাতে, চাইবে আকাশে,
আমার গানে পড়বে মনে আমার আভাসে !

বুকের তলা করবে ব্যথা, বলবে কাঁদিয়া,
“বন্ধু ! সে কে তোমার গানের মানসী প্রিয়া ?”

হাসবে সবাই, গাইবে গীতি, —

তুমি নয়ন-জলে তিতি’

নতুন ক’রে আমার গানে আমার কবিতায়
গহীন নিরাশাতে ব’সে খুঁজবে আপনায় !

রাখতে যে দিন নারবে ধরা তোমায় ধরিয়া,
ওরা সবাই ভুলবে তোমায় দুদিন স্মরিয়া,

আমার গানের অশ্রুজলে

আমার বাণীর পদ্মদলে

ভুলবে তুমি চিরন্তনী চির-নবীনা !

রইবে শুধু বাণী, সেদিন রইবে না বীণা !

নাই বা পেলাম কণ্ঠে আমার তোমার কণ্ঠহার,
তোমায় আমি করব সৃজন এ মোর অহঙ্কার !

এই ত আমার চোখের জলে,

আমার গানের সুরের ছলে,

কাব্যে আমার, আমার ভাষায়, আমার বেদনায়,
নিত্যকালের প্রিয়া আমায় ডাকছ ইশারায় !...

চাইনা তোমায় স্বর্গে নিতে, চাই এ ধূলাতে
তোমায় পায়ে স্বর্গ এনে ভুবন ভূলাতে ।

উদ্দেশ্য তোমার—তুমি দেবী,

কি হবে মোর সে রূপ সেবি’ ?

চাইনা দেবীর দয়া, যাচি প্রিয়ার আশ্রয়ল,
একটু দুখে অভিমানে নয়ন টলমল !

ইন্ডোম ঘুণে ঘুণে

যেমন ক'রে খেলতে তুমি কিশোর বয়সে—

মাটির মেয়ের দিতে বিয়ে মনের হরষে ।

বালু দিয়ে গড়তে গেহ,

জাগত বুকে মাটির স্নেহ,

ছিলনা ত স্বর্গে তখন সূর্য, তারা, চাঁদ,

ভেমনি করে খেলবে আবার পাতবে মারা-কাদ !

মাটির প্রদীপ জ্বালবে তুমি মাটির কুটারে,

খুলির রঙে করবে সোনা ধূলি-মুঠিরে ।

আধখানা চাঁদ আকাশ পরে

উঠবে যবে গরব-ভরে

তুমি বাকি আধখানা চাঁদ হাসবে ধরাতে,

তড়িৎ ছিঁড়ে পড়বে তোমার খোঁপায় জড়াতে !

তুমি আমার বকুল বৃদ্ধি—মাটির তারা-ফুল,

ঈদের প্রথম চাঁদ গো তোমার কানের পার্শ্ব-দুল ।

কুসুমী রাঙা সাড়িখানি

চৈতী-সাঁঝে পরবে রাণী,

আকাশ গাঙে জাগবে জোয়ার রঙের রাঙা বান,

তোরণ-দ্বারে বাজবে করুণ বারোয়' মূলতান ।

আমার রচা গানে তোমার সেই বেলা-শেষে

এমনি সুরে চাইবে কেহ পরদেশী এসে !

রঙীন সাঁঝে ঐ আঙিনায়

চাইবে যারা, তাদের চাওয়ার

আমার চাওয়া রইবে গোপন !—এ মোর অভিমান

ষাচবে যারা তোমায়—রচি তাদের তরে গান ।

প্রেম যুগে যুগে

নাই বা দিলে ধরা আমার ধরার আভিনায়,
তোমায় জিনে গেলাম সুরের স্বরস্বর-সভায় !
তোমার রূপে আমার ভুবন
আলোয় আলোয় হ'ল মগন !
কাজ কি জেনে—কাহার আশায় গাঁথ'ছ ফুল-হার,
আমি তোমার গাঁথ'ছি মালা এ মোর অহকার !



সুধীরকুমার চৌধুরী

পথধূলি

স্মৃতির এ পথে পথে কারা আজি কেঁদে কেঁদে ফেরে,
কেঁদে ফেরে অভিমানে । অতীত-সমাধি-ভল ছেড়ে
পিপাসায় দিশাহারা অন্ধ কোটি আত্মার মতন
ক্রন্দনে ভরিয়া তুলি' আমার উৎসব-নিকেতন
কিরিয়া চলিতে চায় জীবনের এই পথ দিয়া,
যে-পথে বারেক ফিরে কি ভেবে চাহিয়া গেলে প্রিয়া !

কেঁদে কেঁদে আমার শৈশব,
কহিছে সে, “হায়, হায়, একেবারে বুখা হল সব
অকারণ হাসা-কাঁদা, অকাজের অযুত সঞ্চয়,
তোমার প্রিয়ার সনে না ঘটিল পরিচয় ।

লহ মোরে, ফিরে লহ । পুনরায় বসি' সারাবেলা
মোর যত নামহীন, আপনি-সৃজন-করা খেলা
শুরু করি ল'য়ে পথধূলি,
ধূলিমুঠি সোনা হোক ।”

কৈশোর যে বলে, “গেছ তুলি’
একেবারে আমারে কি ? ব্যর্থ আমি ছিলাম এতকাল,
প্রিয়া বিনা কাটায়েছি বুখা কাজে সাঁঝ ও সকাল,
বুখা মাঠে ছুটিয়াছি, ছড়ায়েছি বুখা কল-হাসি ।
কৌতুক, দুঃস্বপ্না, তরুছায়ে বিরামের বাণী,

প্রেম যুগে যুগে

সাথে ব'সে দোল খাওয়া বাতাসের অলস বীজনে,
আধ খাওয়া কালোজাম ছুঁড়ে মারা পথচারীজনে,
সকল কিয়ামে লও প্রিয়ার প্রসাদ ভাগ দিয়া,
নহে তারা ব্যর্থ হবে ।"

আরও কারা কিরিছে কাঁদিয়া,
সবাকারে নাহি চিনি, শুধু মুখ মনে আছে আগি ;
চলিতে পথের পরে দেখা হ'ল চকিতের লাগি',
তখন ছিল না প্রিয়া ।

অনাবৃত সবুজ প্রান্তরে
বাসের ফুলের হাসি দস্তপাঁতি মেলি' ধরে ধরে ;
খাড়া উঁচু দুই-তীর তার মাঝে ফেনোর্মি-মুখর
ধরগতি নদীস্রোত ; পর্বত সঙ্কট ভয়ঙ্কর ;
ধূ ধূ নীল আকাশের অসীমায় শুধু পথহারা
ছোট একফালি মেঘ ; রবি-চন্দ্র-তারা
ঋতু ঋতু অয়নে অয়নে ; কত দীঘি-সরোবর তীর,
স্তম্ভ তরুছায়াতল, সমীরণ-পরশ-অধির
কত শত বেণুকুঞ্জ । বর্ণ-গন্ধ-গান-হাসিরাশি,
যাহা কিছু লাগে ভাল, যা-কিছুরে আমি ভালবাসি,
জীবনের পথে পথে যাদের এসেছি ভালবেসে,
আজিকে সকলে তারা মোর ভালবাসা সনে মেশে ।

মনে হয়, এই প্রেম, এ শুধু আমারই প্রেম নহে,
বুকে তার কল্লোলিয়া বহে
অগণিত নদনদী, কেটে পড়ে গিরি-প্রশ্রবণ,
ওঠে রবি, কোটে ফুল, গাহে পাখী, শিহরে পবন,

হুগোয় যুগে যুগে

বড় ক্ষত আসে যার । পড়িয়াছে ধরা
মোর প্রেমে শোভাময়ী এ সারা বিপুল বনুজরা
লয়ে তার সব প্রেম । যৌবনের তপোবনে জাগি'
আছে চিরকাল মোর তপোবন-ঈশ্বরীর লাগি',
আমার জগৎ জাগে, দাগেন আমার ভগবান ।

সারা দিনমান

আপনারে কত ছলে ভূলায়ে রেখেছি নানা মতে,
ওরা কেউ ভোলে না যে । ভিড় ক'রে ব'সে থাকে পথে
চেয়ে স্নহুরের পানে, লয়ে দুটি জলভরা আঁখি,
যে পথে গিয়েছে প্রিয়া একটি চোখের চাওয়া রাখি' ।



সুরেশচন্দ্র চক্রবর্তী

রমণী

* *

উর্ধ্ব হ'তে উর্ধ্বলোকে—আরো উর্ধ্বলোকে
লয়ে চলো হে কল্যাণি ! আঁখির আলোকে,
ঐবার হেলনে, কৃষ্ণ কুন্তলের দোলে,
কিঙ্কণের কঙ্কণের ঠিনি ঠিনি বোলে
স্বপ্ন রচি' আঁখি আগে দূর অজানার
ভরি' দাও দীন বন্ধ ;—ভোগ কামনার
অন্ত হোক এ-পৃথিবীর ; নৃপূরের তালে
দূর দিগন্তের গায়ে নভ-ভালে-ভালে
স্পষ্ট করো জীবনের পরম বিরহ
সুপ্ত জন্ম জন্মান্তর ; দীন অহরহ
যেই জন পরি' ছিল ধরার বন্ধন
চিন্তে তার ভরি' দিয়া চরম স্পন্দন
হে কল্যাণি ! তব দুটি আঁখির আলোকে
লয়ে চলো উর্ধ্ব হ'তে আরো উর্ধ্বলোকে ।

* *

বিজ্রোহের কণ্ঠে আজি করি অস্বীকার,
নহ নহ নহ তুমি কাম—কামনার
হে রমণি ! বন্ধ-ঘেরা সৌন্দর্য নিবিড়
নহে নহে নহে কভু দূরন্ত ভোগীর
সুপ্ত পশু জাগাইতে ; বলয়-নিষ্কণ
আজি মোর চক্ষে আনে সূদূর স্বপন

প্রথম যুগে যুগে

যেন কোন্ অতি দূর দূর অতীতের
বিস্মৃত সঙ্গীত সনে ; আঁধারের ঘের
মোর রুদ্ধ বক্ষ হ'তে ঐবার হেলন,
চূর্ণিত কুন্তল, তব বাহুর দোলন
নিমেষে খসায় নেয়, মোর মর্গতল
অনন্তের গীত শোনে ধরি' তব ছল—
বিজ্ঞোহীর কর্ণে তাই করি অস্বীকার
নহ নহ হে রমণি ! কাম-কামনার ।

* *

তোমার দেহের স্পষ্ট ললিত ভঙ্গিমা
চক্ষে মোর লুপ্ত করে ধরিত্রীর সীমা
যাদু করি ! বক্ষ 'পরে দোলা স্বর্ণহার
কোথা মোরে দেয় দোলা আকাশের পার
কোন্ তারা-দীপ্ত লোকে ; আষাঢ়-গগনে
আমার মিলন জাগে পুঞ্জ মেঘ সনে
তোমার আঁখির দুটি কৃষ্ণ তারকায়
আষাঢ়ের মেঘ সম ; বসন্ত-সন্ধ্যায়
তোমার তনুর দীপ্ত বরণ-উচ্ছ্বাসে
আমি মোরে পাই মুক্ত অনন্ত আকাশে
সাপ্র কৌমুদীতে ভরা ; কুন্তলের ত্রাণ
সিদ্ধ সম করি' তোলে মোর এ পরাণ ;—
যাদু করি ! তব সর্ব তনুর তনিমা
চক্ষে মোর মোছে স্থল ধরিত্রীর সীমা ।

* *

আরো কি যে চাই—আমি আরো কি যে চাই,
তোমাতে নেহারি' বুকে স্পষ্ট ক'রে পাই

হুঃপ্রেম যুগে যুগে

হে রমণি ! তব প্রতি অঙ্গের রেখায়
মূর্তিমান হ'য়ে যেন কার তুলিকায়
সমাপ্তি-বিহীন এক অবিরাম সুর
নীরবে ঝঙ্কারে ; দূর—দূর—অতিদূর
তোমার লাবণী যেন অসীমে মিশায়
প্রসারিত দিকে দিকে আকাশের গায়ে
কত যেন অতীতের কত ভবিষ্যৎ
আলিঙ্গনি' ধরি' ; তাই মোর মনোরথ
পরমের বেদনায় চরম চঞ্চল
প্রতি ক্ষণে ছিন্ন করে ধরার শৃঙ্খল ;—
হে রমণি ! যে-সঙ্গীত বক্ষে নাহি ফোটে
তোমার ইঙ্গিতে চোখে স্পষ্ট হ'য়ে ওঠে ।



সাবিত্রীপ্রসন্ন চাটোপাধ্যায়

মনের মাধুরী

তোমার শাড়ী কি ময়ূরকণ্ঠী ? এখন রাত্রি কত ?
একাদশী তিথি, জ্যোৎস্না নেমেছে, হোথায় একেলা চাঁদ ;
তনুদেহতটে আলোর জোয়ার, নয়ন তন্দ্রাহত
কাহারে ধরিতে বিরল ভবনে পেতেছ রূপের ফাঁদ ?

অলস নয়নে গুয়ে আছ তুমি, অনলস মোর আঁখি
দেহ-যমুনায় গাহন করিয়া বাড়িছে তৃষ্ণা তার
অতলে লুকায়ে রেখেছ তোমার গোপন কথারে নাকি
মুদিত কমল মেলিবে না দল সুগন্ধে আপনার ?

ঘুমাইলে নাকি ?— অথবা ছলনা ; আসিতে বলিয়া মোরে
ফিরাবার ছলে রাখিবে জাগায়ে কহিতে দিবে না কথা,
মালতীর মালা খুলিয়া কখন বাঁধিয়াছ বাহু-ডোরে
আমা হ'তে দূরে লতায় পড়েছে—আমার কল্প-লতা !

কোন ফুল তুমি পায়ে দলে যাও, কোন ফুল রাখ বুকে
আমারে কখনও বলেছ কি তুমি ? আজ দেখি তব গলে
নানান ফুলের একখানি মালা ঢুলিছে সকৌতুকে,
প্রভাত বেগার রক্তকরবী লুটায় চরণতলে ।

অলকে শোভিছে চম্পক কলি, কর্ণে কর্ণিকার
মণিবন্ধে ও রাজা রাণী ঢাকা বন-মল্লিকা ফুলে,

প্রেম যুগে যুগে

বুকের বসনে লুকায়ে রেখেছ সবতনে ফুলহার
ও কি ও আমার ? তাইত সজানী, একেবারে গেছি ভুলে ।

কপালের টিপ্ জল্জল্ করে—রাঙা টিপ্ যদি পর
তারার মতন ফুটিয়া থাকিবে ও বাঁকা চাঁদের গায়,
সেই ত আমার ভাল লাগে সখী, হবে সুন্দরতর
মনের মাধুরী রচিবে স্বপন গগনের কিনারায় !

তনুদেহ

হোক সে মিথ্যা তবু হাসিমুখে করিয়াছ চুম্বন
আগে ত জানিনা তোমার দেহের এতখানি উষ্ণতা,
ছুঁ'বাহু বাড়ায়ে নিজে দিলে তুমি নিবিড় আলিঙ্গন
তোমার পরশে দূরে চলে গেল মনের বিষণ্ণতা ।

শিরায় শিরায় ঢেউ খেলে গেল আল্পেষ চুম্বনে
সেই ভালো তবু তোমাতে পেলাম নীরব নিশীথ রাতে,
মিথ্যা হোক সে তবু কে ভুলিবে সেই সে পরম ক্ষণে
প্রেম যদি হয় মিথ্যা আমার কি বা আসে যায় তা'তে ?

তোমাতে পেলাম নিবিড় করিয়া আমার বুকের কাছে
হোক ক্ষণকাল, সেই মুহূর্ত প্রেম থেকে ঢের বড়,
যা দিলে না তুমি, দিতে যা পার না, কি তার মূল্য আছে
যদি পার তুমি মিথ্যা মায়ায় এমনি স্বর্গ গড় ।

প্রেম নিয়ে খেলা অনেক খেলেছ, জিতেছ অনেক বার,
হাজারও রঙের রঙীন ফানুস উড়েছে আকাশে মোর,
দম্কা হাওয়ায় ছিঁড়েখুঁড়ে গেছে, নিদ্রায় বঞ্চনার
জের টেনে গেছি, হিসাব মিলাতে হয়ে গেছে বাজি ভোর ।

প্রেম যুগে যুগে

সত্যের সাথে লড়াই চলে না, কি হবে সত্য নিয়ে
কি হবে জানিয়া মনের খবর—কে জানে সত্য কিনা,
মিথ্যারে পাই হাতের গোড়ায় কাজ চলে তাই দিয়ে
কেয়ার করি না আড়ালে আমায় যদিই বা কর ঘৃণা ।

কোনটা সত্য কোনটা মিথ্যা কে তার খবর রাখে
প্রেমের বৈশাতি সেও রাতারাতি হয়ে যায় খাঁটি সোনা,
যারে চাই তার মনের খবর পড়িলে দুর্বিপাকে
ঠিক পাওয়া যায়, উত্তলা রাতের প্রহর যায়না গোনা ।

যাহা চাই যদি পেয়ে থাকি তাই, আর কি রহিল বাকি
যারে চাই তারে নাইবা পেলাম, মিথ্যা সে মোর কাছে,
স্বপ্ন-বিলাসে বৃথা আশ্বাসে নিজেকে দিব না ফাঁকি
মন্দিরে রেখে পূজার মর্ম ঢের মোর জানা আছে ।

আমি যা পেয়েছি তাতেই আমি যে পরম ভাগ্য মানি
দেহটারে আমি দেহ বলে জানি, মনটারে বলি মন,
মিথ্যা সে নয় দু'টি বাহু দিয়ে আনারে নিলে যে টানি
তুষিত জীবনে চিরবাঞ্ছিত সেই ত পরম ক্ষণ ।



নারেন্দ্র দেব

চিরন্তন

কাব্যলোকে ছিলাম আমি ছন্দগানের সুরে, আপন মনে সকল ভুলে একা,
একটি দিনও হয়নি মনে আসবে সেদিন ফিরে, যেদিন আবার তোমার পাবো দেখা।
আমার মনের গোপন কোণে তরুণ প্রেমের রঙে একটি ছবিই ছিল কেবল আঁকা
ভোলায়নিকো আমাকে আর এমন করে সখি, কাকর অমন ডাগর নয়ন বাঁকা।
উদয় হলে আমার চোখে তুমিই প্রথম নারী, এই ধরণীর আদিম উষার সম
সকল যুগের সঙ্গিনী গো, অতীত কালের কোন অবিস্মৃত পূর্ব স্মৃতি মম !
স্বপ্ন লোকের সুন্দরী কি সজীব হয়ে এলে, ধ্যানের দেবী, আরাধনার ধন ?
মূর্তি ধরে এলে কি আজ আমার মানস-প্রিয়, বাঞ্ছিত জন হিয়ার চিরন্তন ?
এক নিমিষের নয়নপাতে নিলেম চিনে মোরা পরস্পরে আসছি ভালোবেসে—
জন্ম-জন্ম-লক্ষ-কোটি-অযুত-জীবন ধরে-স্বর্গ-মর্ত্য-সপ্তলোকের দেশে।

আজকে শুধু পড়ছে মনে তোমার আমার যত হারিয়ে ফেলা অতীত ইতিহাস,
কোন গগনের কোন সে গ্রহে কোন কপেতে কবে তোমায় আমার করেছিলাম বাস।
প্রলয় জলে মগ্ন ছিল বিশ্বজগত যবে সৌরভুবন সৃষ্টি হবার আগে,
কোন অতলের গভীরতলে প্রবালদলে ছিন্তে তোমায় আমার জড়িয়ে অনুরাগে !
সেই সাগরের শুষ্কগড়ে সেদিন যবে তুমি শূণ্য ছিলে মুক্তামুকুট পরি,
আমিই তোমায় আগলে ছিলাম বক্ষে আমার চেপে অষ্টবাহুর আলিঙ্গনে ধরি।
তোমার আমার প্রেমের বাণী প্রচার করে আজও মীনধ্বজের রথের কেতনখানি,
মৎস্যপুরীর আবির্ভাবের অনেক-অনেক-আগে আমরা ছিলাম শ্রোতৃমণির প্রাণী।
তোমার জলে কৌতূহলে কাঁপতো আমার ছায়া, ঢেউয়ের তালে মনের নাচনাচি,
অভেদ হয়ে যেতেম দোহে, বজ্রা বেগে যবে মৃত্যু এসে টানতো কাছাকাছি।

উঠলে ফুটে যেদিন আবার অমল কমল রূপে, ভ্রমর হয়ে এলাম উড়ে আমি,
অগ্নির সনে কলির মিলন—শেষ ছিল না তার, আলিঙ্গনে মগ্ন দিবস যামী।

বনস্পতি ছিলাম আমি তুমিই আমার লতা, অরণ্যানীর ইন্দ্র এবং শচী,
পল্লবিত শাখীর সাথে পাখীর জীবন মোরা কাটিয়ে দিছি নীড় দু'জনে রচি।
কোন প্রাসাদের সৌধশিরে ঘুলঘুলিটির কঁাকে, হয়ত যুগল কপোত হয়ে দৌঁছে—
শেষ করেছি সুখের জীবন প্রেমের কুঞ্জন গানে, দাম্পত্যের মধুর মিলন মোহে।
চকোর হয়ে চাঁদের সুধা পান করেছি কতো জ্যোৎস্না রাতে তোমার সাথে প্রিয়ে,
রৌদ্র প্রখর দীর্ঘ দিবস, ঝিল্লীমুখর নিশি—কী আনন্দের গেছে তোমায় নিয়ে।
মরাল গ্রীবা হেলিয়ে দু'জন হংসমিথুন মোরা কোন অজানা সুদূর অতীত কালে
সাঁতরে ছিলাম পাশাপাশিই মানস হৃদের বুকে, চঞ্চুপুটে জড়িয়ে মৃণাল জালে।
বর্ষাসজল জীবনধারায় আসতে তুমিই নেমে, চাতক হয়ে মিটিয়ে নিতেম তৃষা,
কোন ফাগুনের মন্দির রাতে বিধুর পিকের ডাকে মোর কোয়েলা হারিয়েছিলে দিশা।
রাজপুরীতে ছিলাম যবে ভবনশিখী দৌঁছে, নাচিয়ে যেত সাতমহলের রাণী,
কোন নৃপতির সভায় বসে সোনার খাঁচায় মোরা শুনিয়েছিলাম গুপ্তসারীদের বাণী।
স্মরণ আছে তোমার দুটি হরিণ আঁখির টানে লুক মৃগ মুগ্ধ হতেম বনে,
ঈর্ষা অনল বর্ষে যেত সেই অমুরাগ হেরি আশ্রমী সব ঋষির নয়ন কোণে।

আলোক হয়ে যেদিন আমি ভুবন ভরেছি, তুমিই ছিলে আমার পাশে ছায়া;
ওগো আমার নিখরিসী এই সাগরের বুকে আসতে ছুটে মিশিয়ে দিতে কায়।
সজল কালো মেঘের বুকে ঝাঁপিয়ে পড়ে হেসে ক্ষণিক তুমি খেলতে ক্ষণপ্রভা,
তোমার প্রেমে দীপ্ত হয়ে উঠতো নিমেষ তরে বজ্রাহত আঁধার রাতের সভা।
লুকিয়েছিলে যেদিন তুমি পুষ্পরেণুর মাঝে, হাওয়ার মতোই আকুল হয়ে এসে
আমিই সেদিন উড়িয়ে পরাগ বেড়িয়েছিলাম কতো পাগল হয়ে ফুলের দেশে দেশে
জন্মেছিলাম এই নিখিলের আদিম উপবনে আমরা দুজন প্রথম নরনারী,
ক্ষুধায় খেয়ে ফলের সুধা কাটিয়েছিলাম দিন, পর্ণপুটে পান করেছি বারি।
ছিলনা এই গৃহের বালাই, গুহার বুকেই নুখে ছিলাম দৌঁছে মুক্ত বিবসন,
সভ্যতার এই নাগপাশেতে হইনি বিড়ম্বিত, পাপের পরশ পায়নি দেহমন।

ঘুরলো ক্রমে কালের চাকা, ঘটল রূপান্তর, তোমায় নিয়ে চললো হানাহানি।
পৌরুষে যার লুটিয়ে যেতো বীৰ্যবানের মান তার ধরেতেই আসতে হ'য়ে রাণী।

হরণ করে তোমার আমি বরণ করেছি তুচ্ছ করে মরণ শতবার
তোমার পায়েই লুটিয়ে দিয়ে আমার সকল ধন শেষ করেছি ভিক্ষা শুধু সার।
লড়তে গেছি তোমার লাগি দ্বন্দ্ব-যুদ্ধ কত, পাইনি বলে ত্যাগ করেছি প্রাণ,
কিন্তু হয়ে উদাস কবি বক্ষে লয়ে বীণা শুনিয়েছিলাম ব্যর্থ প্রেমের গান।
তপস্বীতে মগ্ন যবে মুক্তিসাধক আমি, অঙ্গরী লো ভাঙিয়েছো মোর ধ্যান,
দুঃখ অসীম সইলে সখি শকুন্তলার মতো হারিয়ে ফেলে আমার অভিজ্ঞান।
সে এক যুগে যখন ছিলে রাজার মেয়ে তুমি, সভায় হ'তে আপনি স্বয়ম্বর,
আমার গলেই পড়তো তোমার বরণমালাখানি পরস্পরের বক্ষে দিতেম ধরা।

কোননগরীর নাট্যশালার শ্রেষ্ঠা ছিলে নটী বিশ্বভুবন কটাক্ষে যার হত ;
নৃত্য হেরি ওই চরণের ভৃত্য হবার লাগি চিত্ত আমার কাঁদতো অবিরত ;
গাঁয়ের শেষে নদীর কূলে অশথ ছায়ে ঘেরা কোন দুখিনীর কুঁড়েয় ছিলে মেয়ে,
নিত্য প্রাতে স্নানের শেষে করতে শিবের পূজা অবাধ হতেম তোমার পানে চেয়ে।
চন্দনময় কপালখানি, পরনে লাল চেলি, সিঁথেয় সিঁদুর, আগতা দুটি পায়,
হাত ধরে মোর আসতে প্রিয়ে সন্তোষধুর বেশে, উলুর রোলে শঙ্খমুখর গায়।

কোন বণিকের স্নেহের মণি ননির পুতুল তুমি, বল্মলাতো অঙ্গে অলঙ্কার,
তোমার রূপের আকর্ষণেই 'ময়ূরপঙ্কজী' মোর ভিড়তো এসে বন্দরেতে তার।
সপ্তডিঙা সওদাগরের সাগরশায়ী শুনে মর্মান্বিতা তীব্র শোকের ভারে—
হয়ত গিয়ে শ্রেষ্ঠীয়েয়ে ভিক্ষু নারীর বেশে শরণ নিতে সজ্জারামের দ্বারে।
ভাসিয়ে ভেলা স্রোতের জলে তুমিই অভাগিনী মৃত্যুশীতল স্বামীর দেহ লয়ে
সেইযে পতির সঞ্জীবনে করলে অভিযান—কীর্তি তব ফিরছে অমর হয়ে।

শিল্পী ছিলাম যখন আমি শিপ্রা নদীর কূলে, উজ্জয়িনীর তরুণ চিত্রকর
দীপ্ত ক'রে রাখতে আমার শিল্প-ভবনখানি, সরস করে তুলতে অবসর।
তোমার মুখের ফুটতো আদল আমার তুলির টানে, তোমার হাসির করতো স্বরূপ চুরি,
পাষণ-ভেদী যন্ত্রে আমার তবী তোমার তনু মূর্তি ধরে আসতো সদাই ঘুরি।

প্রেম যুগে যুগে

রং দিয়েছো কর্নাতে, সুর দিয়েছো গানে, তোমার বাগীই বাজতো জানি প্রাণে,
ভরিয়ে দিতে আমার জগৎ নিত্য নূতন রূপে, সৃষ্টি আমার পূর্ণ তোমার দানে।
নীলনদের ওই উপকূলে পীরামিডের দেশে যখন ছিলে মিশরমণি তুমি,
সাগরসীমা সিংহাসনের সব গরিমা ভুলে ধন্য হতেম তোমার চরণ চুমি।
মরুর শব্দী কোন রূপসী জিপসী মেয়ে তুমি, ছিলে সে কোন আঁধার তাঁবুর আলো,
ক্ষিপ্ত হয়ে ভীত জালায় দৌড়েছিলেম কত দেশবিদেশে তোমায় বেসে ভালো;
বজ্রমুঠির তীক্ষ্ণ ছুরি রক্ততৃষায় মেতে বিঁধতো গিয়ে প্রতিদ্বন্দ্বী বুকে,
দুঃসাহসের খিলাত দিতে নওজোয়ানের চিতে আমার ঘোড়ায় উঠতে তুমি স্নেহে।
কাক্সীমূলক আফ্রিকাতে গহন বনের ধারে মন হারাতেম কোঁকড়া কালো চুলে,
হাবশি গাঁয়ের খেজুরঝাড়ে নির্জনতায় ভুলে হৃদয় আমার উঠতো কেমন দুলে।
কোন ইরানের গুলিস্তানে বলবুলিদের শিসে কণ্ঠ তোমার গাইত গজল গান,
হায় গো সাকি তোমায় ডাকি আজান নামাজ ঠেলে আকুল হয়ে উঠতো আমার প্রাণ।

হয়ত ছিলে বেদৌরালো চীনকপসীর সেরা, উড়িয়ে তোমায় এনেছিলেম কাছে,
কোন খলিকের বেগম ছিলে হারেম উজল করা বাদশাজাদা ফিরতো পাছে পাছে।
সীমান্তে কোন অশাস্ত এক পাহাড়তলীর মেয়ে চোখের কোণে বারুদ যেন ভরা,
বল্‌সে দিতে পাঠঠা কত পাঠান ছেলের দিল, বেছ'স তারা আপনি দিত ধরা!
কোন হামামের হেনার জলে তোমার সনে খেলা শিখিল ক'রে বোরুখা কোমরবন্দ,
তোমার গালের তিলের তরে বিলিয়ে দিছি আমি খাশ বোখারা সাধের সামরখন্দ,
হাওয়াই দ্বীপের হাউই ছিলে অগ্নিশিখার ফুল, নগ্ন-উরস বলীদ্বীপের বালা,
ঘুরছি আজও তোমার পিছু ঘুরি হাওয়ার মতো কী আকাঙ্ক্ষার আগুণ বুকে জ্বালা।

পড়ছে মনে ইন্দুনভী, মন্দার হার ছুঁয়ে পালিয়েছিলে হঠাৎ মরণ পারে;
তোমার শোকে বিলাপ করে কেঁদেছি হায় কতো, বি'ভল হ'য়ে নূর সরযূর ধারে।
কিরিয়ে আমার আনলে তুমি যমের মুঠি খুলি, সাবিত্রীগো, তোমার প্রেমের বরে,
আমার অপমানের ভরে ত্যাগ করেছে তবু পতিপ্রাণা, দক্ষরাজের ঘরে।

প্রেম যুগে যুগে

শোকাক্ত সেই রুহুর ব্যথা প্রেমদ্বার প্রেমে দেখছি আজও বন্ধে আমার রাজে,
তপস্বিনী মহাশ্বেতার দীর্ঘবাসের তাপ, যক্ষপ্রিয়র অশ্রু তোমার মাঝে ।
কোন শরতের শুক্লারাতে আমার বাঁশী বেজে ভুলিয়েছিল তোমার সখি প্রাণ,
কালিন্দী জল আনতে এসে আমার বেসে ভালো দিয়েছ রাই ভাসিয়ে কুলমান !
হাস্তমুখে বাঁপ দিয়েছো আমার মাথে তুমি ঝঙ্কা-উতল জীবন-স্রোতে প্রিয়ে,
অকূলে কূল মিলিয়েছো, বা, তুফান ঘায়ে কভু তলিয়ে গেছি হয়ত তোমায় নিয়ে

.

পেয়েছিলেম বারে বারেই হারিয়েছিলেম ফেট, বন্ধে লেখা স্মৃতির রেখা তার,
নানান রূপে নানান ভাবে আসা-যাওয়ার মাঝে তোমার আমার প্রেমের অভিসার!
জীবন ইতিহাসের প্রতি ছিন্ন নূতন পাতে দেখছি আঁকা তোমার পদ রেখা,
তোমায় ঘিরে ধ্বংস প্রলয় সৃষ্টি স্থিতি প্রিয়ে, কাব্যকলার জন্মলিপি লেখা !
যুদ্ধ সারা বিশ্ব আজও দেখছে অবাক হয়ে তোমার প্রতি আমার অনুরাগ—
কল্লান্ত কালের স্মৃতি ক'জন বহে রাগি ? প্রেমিক শুধুই ভোলে না তার দাগ ।



রাধারানী দেবী

অনুচ্চারিত

তুমি বল নাই বন্ধু এ জীবনে কভু'কোন দিন
বন্ধের নিতলে তব কোন্ সিদ্ধু আকুলিয়া উঠে !
কী স্নেহে বাজিছে তব অন্তরের অপ্রকাশ বীন
মর্মের মাগধে কোন কামনা কুসুমলতা ফুটে !—
নয়নে প্রার্থনা নাই, অধরে ছিল না কোন ভাষা
উদাসীর বাঁশি হাতে চলেছিলে পথে চিরদিন,—
আশার নগর প্রান্তে বাঁধো নাই ক্ষণ তরে বাসা,
তোমার বৈরাগী মন ত্যাগের গৈরিকে স্বপ্ন লীন ।

প্রশান্ত মর্মের তব নিস্তরঙ্গ মমতা ধারায়
ভীরু বন কুসুমের সলাজ কোমল গন্ধ—শ্বাস
কেমনে আনিল বহি এ পাষণ-প্রাচীর কারায়,
নীরন্ধু অঁধার কক্ষে এলো মুক্ত আলোক-আভাস ।

কে জানিত লীলাচ্ছলে বসন্তের দূরন্ত বাতাস
জ্বালাইবে পুষ্পশিখা গিরিশৃঙ্গে তুমার ভাঙ্গিয়া,
কে জানিত যোগমগ্ন ধূর্জটিরো ধ্যানের আকাশ
কিশোরী উমার স্বপ্নে প্রেমরূপে উঠিবে রাঙিয়া ।

সুদূরের প্রেম

ওগো পাখি ! ওগো আকাশ বিহারী পাখি !

আমি মৌণ-বালা পাথর-পাতালে থাকি

এই সরোবরে কমল বনের' পরে

তুমি আসো নিতি মধু সেবনের তরে ;

প্রেম যুগে যুগে

পঙ্কজ-রস-আস্বাদনের তিয়াষা-তৃপ্তি ক্ষণে
পুলকিত কল-কাকলী-কণ্ঠে গাহো যবে নিজমনে,
নিতল জলের তলে
সেই সংগীত সুধাধারে মোর মুগ্ধ-পরাণ গলে ।

তোমার করুণ কোমল কৃজন ধ্বনি
জললোকে যবে বেজে ওঠে রণরণি'
শ্রাম-শৈবাল কানন বিহার ত্যেজে
রজত উজল বরণে অঙ্গ মেজে
আমি উঠি ভেসে সরসী বক্ষে নীল গগনের নিচে ;
সূর্য চন্দ্র যেথা ছুটে সদা নিশা ও দিবার পিছে ।
চাহি সে পৃথিবী পানে
হৃদয় আমার খেয়ে যেতে চায় আকাশের ওই খানে ।
ওগো নভোচারি ! তুমি বুঝিবে না জানি
মীন-মেয়েটির মৌন এ' প্রেম-বাণী !

বুঝিবে কি তুমি মোর নির্বাক ভাষা ?
বারি-বালিকার বিরাট বিপুল আশা ?
অতলের তলে লয়েছে জনম, পাতাল বাসিনী সেবা,
তাহার অতল গভীর প্রেমের মর্ম জানিবে কেবা ?
তোমাতে বাসিয়া ভালো
আপন প্রাণের আঁধার-গুহায় পেয়েছি নূতন-আলো ।

কণ্ঠে তোমার মুক্তির গীত বাজে !

মুক্তির হাওয়া তোমার প্রেমেরো মাঝে ।

উদার ব্যাপ্তি জীবনে তোমার মিশা,—
—আমি জলবালা, পাব কি তাহার দিশা ?

প্রেম যুগে যুগে

নাহি চিনি আমি অসীম উর্ধ্বে উজ্জল মেঘলোক,
তবু চাহে প্রাণ তোমারি সঙ্গে নিবিড় মিলন হোক ।

—জানি তা হবার নয় ;

—তোমারি ভাবনা ভালো-লাগা মোর এই হোক অক্ষয় ।

যদিও ভিন্ন উভয়ের এ নিখিল,

তোমাতে আমাতে আছে তবু কিছু মিল !

বায়ুর পাথারে নীর পারাবারে দৌছে

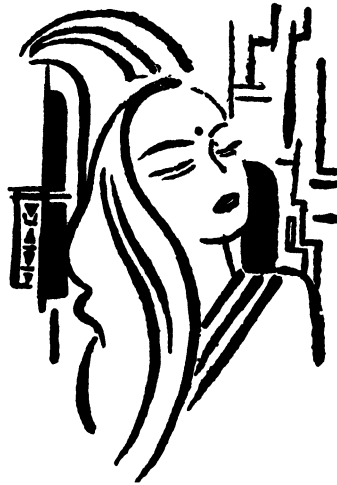
সুখে যাপি' কাল সমুদ্রগের মোহে ।

পর্বত মরু বনরাজি ভরা ধরা রহে মাঝখানে,

তাই আমাদের প্রকৃতির মিল প্রকৃতিও নাহি জানে ।

না হোক বাহিরে মিল,—

মনে মনে থাক্ তোমাতে-আমাতে মানস মিলন-লীলা ॥



অপরাজিতা দেবী

মুখরা

বেশ করেছি, খুব,—তোমার তাতে কি ?
দেখতে তোমার দেবোইনাকো আমার হাতে কি !
মুঠোর ভিতর যাই থাক্ তা' জানতে দেবোনা !
ধমকে আমার চমকে দেবে একটু ভেবো না ।
বেশ কোরবো ড্রয়ার খুলে কোরবো চুরি সব !
পেন পেনসিল ডায়রি এই ভা-রি-তো বৈভব ।
বেশ করছি,—করছি চুরি,—পুলিশ ডাকো গে !
শাস্তি দেবার প্রেস্‌কুপ্‌সন্ কোরতে থাকো গে' ।
ঘাঁটিবো আমি যখন তখন তোমার খাতা বই !
দাও না কোরে ডাইভোস' কেস্ কিংবা তালাক-সই !
...আলবৎ ! ফের বলবো আবার বর নয় বর্বর !
যখন-তখন জবর জবাব করবো মুখের পর ।
ইঃ হ ! ভারি তো ! পরম গুরু ! উকারটা দাও বাদ !
গরুই বটে ! নৈলে কি হয় গুরু'র পদের সাধ ?—
...কোরবে বিয়ে আবার ?—উর্‌র্‌ ! কোরতে পারো কই ?
তোমার কাছে মানবো যে হার এমন মেয়েই নই,
—এভার রেডি, সতীন নিতে ! আজ্‌ই আনো,—যাও !
বরণ করে তুলতে বুলো,—বহুৎ রাজী তাও ।

তোমায় নিয়ে ঝগড়া করি একলা এখন রোজ !
দোসর পেলে বাড়বে যে জোর, তার কি রাখো খোঁজ ?
দুই সতীনে দু'পাশ থেকে বাক্য-বুলেট-শেল

হানুবো যখন ঐ বুকেতে, হার্টটি হবেই ফেল্।
একটি মুখের মেশিন গানে ডাকছো ত্রাহি ডাক্,
ডবল্ হলে তখন হুঁ হুঁ, - কাজ নেই আর, থাক্ !

* *

হার মানছো ? · আচ্ছা তবে নাক মলে চাও মাপ্ !
কবুল করো, — আর কখনও কোরবে না এই পাপ্ !
কোরবো চুরি যা—খুসি তাই, বলবে না আর কিছু !
দেখবো তোমার ডায়ার খুলে, লাগবে না আর পিছু ?

* *

উ—হ—মুঠোয় কি রেখেছি, —দেখতে দেবোনা !
আদর কোরে ভুলিয়ে দেবে মোটেই ভেবোনা !
কী নিয়েছি !...হাত্ ড়ে দেখ মের্জায়ের ঐ জেব !
—পালাই এবার, —সেলাম তবে, —পরম গুরু'-দেব !—

বাদল-বিলাস

তেতলার ছাদে যুঁই ফুল যে গো, ফুটেছে টবে !
আজ আমাদের সিনেমায় যাওয়া কি করে হবে ?
চ্যেয়ার রিজার্ভ্ হয়ে গেছে ?... যাক্ !
মোটর তৈয়ারী ?...দাঁড়িয়েই থাক্ !
আজ যে আমার সাধের ছাদের ছোট্ট বাগানে ফুটেছে ফুল !
মেঘ-ঢল ঢল শ্রাবণ সন্ধ্যা মনকে করেছে আবেগাকুল !

দাস-দাসীদের ছুটি দিছি আজ, গিয়েছে চ'লে !
সমাগত সবে করেছি বিদায় অনেক ছলে !
নিরালা আলয়ে শুধু দুই জনে
কাটাব এ সঁাঝ বড় সাধ মনে ;

ইন্ডিয়ান যুগে যুগে

ওগো চলো ছাদে মেঘের তলায়, লাগছেন! ভালো

ঘরের কোণ ;

মেঘ ছায়া-আঁকা শাড়ীটি পরেছি, বাদল বাতাসে উতলা মন ।

থাক্—তুলোনা গো উড়ুক আঁচল পূবালী-বাস্নে !

আশমানী রং রেশমী-সেমিজ দিয়েছি গায়ে ।

ফিন্ ফিনে ফিক্ ভুঁই চাঁপা ফুলে

কিরীট গড়েছি কবরীর চূলে,

বেলির কুঁড়িতে শেলি গেঁথে আমি কণ্ঠে পরেছি কণ্ঠি করি,

কদম কেয়ায় তোড়া বেঁধে আজ ফুলদানগুলি রেখেছি ভরি

না—নাগো, আজকে বেড়াতে যাবোনা । ছাদেতে চলো ।

ড্রয়িং রুমেতে পিয়ানো বাজাবো ।...ধ্যৎ ! কী বলো !

কাজল মেঘের চাঁদোয়ার তলে

চলো বসি গিয়ে দুজনে বিরলে,

হাতে হাত খুয়ে গায়ে গা'টি ছুঁয়ে বাক্য বিহীন নীরব রবো !

গুরু-গুরু ধ্বনি উঠিলে অমনি তোমার বুকেতে শরণ লবো ।

চরাচর ছেয়ে শ্রাবণ এসেছে ঘনানুরাগে !

আজ সহরের কৃত্রিম মুখ ভালো না লাগে !

‘ফ্যানের বাতাস, গ্রীচেরিয়া পাম্’

সাজানো—বাড়িটি নয়না ভিরাম !

আজ্ থাক্ ! ওগো, চলো চলে যাই, আমাদের সেই

পল্লীবাসে ।

নীল আকাশের ললাট সেখানে নুয়েছে মাঠের শ্রামল ঘাসে !

হুগোয় যুগে যুগে

কূলে কূলে ভরা দীঘির দীঘল বকুল গাছে
এখনো হয়তো সেই দোলনাটি টাঙানো আছে !
যে কাজরী-গান হেথা শুনিবারে
কতো অনুনয় করেছে আমারে,
ঝিল্লীমুখর-পল্লী-প্রদোষে আপনি সে গান শোনাব নিতি,
দোলান্ন দুলিব, ভুলিব ভুবন,- -গাবো গুঞ্জরী' বুলন-গীতি

ঘন কালোমেঘ পুঞ্জ পুঞ্জ ঘনায় মরি !
গুরু-গুরু তার গভীর আবেগ গগন ভরি !
এসো বাতায়নে বসি পাশাপাশি,
আজ হৃ'জনার মন যাক্ ভাসি'
মানসের তীরে বলাকার মতো । 'মেঘদূত' পড়ে শোনাও তুমি
যক্ষের ব্যথা বক্ষে বাজুক । হোক গৃহ মোর অলকা-ভূমি ।



দিলীপকুমার রায়

প্রগ্ন

(উদ্ভবের প্রতি)

কীর্তন

মথুরার মণি শ্রামলের দীনা

গোপীদের কথা মনে কি পড়ে ?

যারা ছিল তার চরণ নিলীনা,

ভুলিত ভুবন বাঁশির স্বরে ?—

প্রিয় পরিজন সুখ সাধ যারা

আসিত ছাড়িয়া তাহারি তরে,

গৃহ থেকে যারা ছিল গৃহহারা—

তাদের ভুলেও মনে কি পড়ে ?

বলো ওগো সখা, বলো তারি কথা,

আমাদের কথা বোলোনা তারে ;

কী হবে বলিয়া ?—ফুল-ঝরা ব্যথা

ফুল-ফোটা কবে বৃষ্টিতে পারে !

অবলার বলো কী আছে দিবার

রূপ তো শিশির বালুকাচরে !

নয়ন-নদীর ঢেউগুলি তার

চরণ সিঁছু খুঁজিয়া মরে ।

বৃন্দাবনের আছে হার শুধু

যমুনা—সেও তো ব্যথায় কালো ;

প্রেম যুগে যুগে

স্বজের বাসর রাস রস শুধু
রচিত তাহার মায়াবী আলো ।

সে রঙিন মায়া মথুরায় শুনি
নব নব প্রেমে নিতি নিব্বরে
পেয়ে নব-উচ্ছল সুরধুনী
সুরহারাদের মনে কি পড়ে ?

যার আছে ধন ধনী নাম তারি,
শক্তি যাহার সেই তো বলী ;
আমাদের শুধু আছে আঁখি বারি
নহিও আমরা কথা-কুশলী ।

নাই কিছু, তবু যারা দিতে চায়
অকারণে মন কেমন করে—
হেন গোপীদের আজি মথুরায়
বাবেকও তাহার মনে কি পড়ে ?

প্রাণ চায় দিতে কূলেরে বিদায়,
কেন চায়—বলো কেহ কি জানে ?
যে-নিষ্ঠুর চিরতরে ছেড়ে যায়
তারি পানে ধায় কিসের টানে ?

পলকে যে ভোলে কেন তারে তবু
পারি না ভুলিতে পলক তরে ?
সে চির-উদাসী জানি—বলো তবু
গোপীদের তার মনে কি পড়ে ?

প্রমথ বিম্বী

বসন্তসেনা

একদিন গৃহপাশে ক্ষণকাল তরে
হ'য়েছিলে কেনা
আজিও সে স্মৃতি জাগে বিশ্বের অন্তরে,
হে বসন্তসেনা !

সেদিনের মালিকার ঝ'রে গেছে ফুল
চাঁপা, যুথী, হেনা
নূতন বাঁধন লাগি, অন্তর আকুল,
হে বসন্তসেনা !

ক্ষণ ইন্দ্রধনুসম যে চুষন খানি
থরে, থরে, থরে
উঠেছিল বিকশিয়া হে গবিতা রাণী
তোমার অধরে—

চির যৌবনের নভে আজো জাগে সেই
আকাশ-কুসুম,
তাহারে রাঙারে দিতে আনিয়াছি এই
স্বপ্নের কুকুম ।

জ্যোৎস্নালুপ্ত বসতির ল্পথশয্যাপরে
অর্ধজ্ঞানগতা,
প্রমোদ অধীর দুটি ভঙ্গুর-অধরে
কত বৃথা কথা ।

হৃদয়ে যুগে যুগে

ক্ষিপুবন্ধ আন্দোলনে আর্ত আকুলতা
আন্তন-বন্ধুর
তোমার বন্ধের পরে—কোথায় গেল তা
—গেল কোন্ দূর ?

শিয়রে কনকপাত্রে বৃদ্ধ-উজ্জল
মস্ত-ফেনিলতা ;
পরম বল্লভ করে প্রায় ল্পথ হ'ল
তব বেণীলতা ।

ইন্দ্রিয়ের বাধা টুটি নর্মে প্রবেশের
সেই যে সন্ধান,
সীমার দিগন্ত ভাঙি অক্ষু দেশের
এই যে সন্ধান ।

কোথা বলো শেষ তার কোথা অন্ত হায়,
কোথা সমাধান ?
দেহের অর্গল ভাঙি দম্যদল প্রায়
প্রাণ চাহে প্রাণ !

কে দেখেছে ভেদ করি মাংসের জঞ্জাল
রহস্ত আশ্রয়,
মুক্ত সে যে অকলঙ্ক শাগিত বিশাল
নগ্ন তরবার ।

কার সুললিত ওই স্বর্ণ কোষখান
জানি মধু ময়,
কেহ না লভিল হায়, এই যে কৃপাণ
তার পরিচয় !

প্রেম যুগে যুগে

দেহের খিলান তলে ব্যগ্র দুই চোখে
চলি হাতড়িয়া
জানি একদিন চক্ষু হঠাৎ আলোকে
যাবে ঝলসিয়া ।

আস্রার বিদ্যৎ-দীপ্ত সে রহস্যখান
আজিও অচেনা
আছে আশ। একদিন পাইব সন্ধান,
হে বসন্তসেনা ॥

চার্বাক

বাইশ বসন্ত-বোনা এই জীবনের
শিশির-উজ্জল ফুলে গাঁথা মালাটিরে
কারে সমর্পিব ছিল ভাবনা মনের,
হেন কালে তব নাম মনে এল ধীরে ।
কিশোর চার্বাক
অথই বিস্ময়ে তাই তাকাইলু ফিরে ।

শাস্ত্র যবে শাস্ত্র হাতে দাঁড়াইল উঠে
তুমি তারে স্মিত হাস্তে করেছ আহ্বান
তোমার রোষাগ্নি বাণ পড়িয়াছে লুটে
তীক্ষ্ণ অবজায় বিধি সংহিতার প্রাণ ।
মুখ পণ্ডিতেরা
রাজ্যপ্রসূরে রাখিয়াছে আপনার মান ।

মুগ্ধের যুগে যুগে

শ্লিষ্ট উপেক্ষায় ভরা তব হাশুখানি
সুমেধের আশ্রয় নভে অরোরার মতো
তুষারের হিম বৃকে জ্বালাইয়া বাণী
গুহার আধারে শুভ্র দেখায়েছে পথ
যাহারে ধরিয়।
একমাত্র যেতে পারে মন্ত মনোরথ ।

ক্ষুদ্র এই জীবনের দশ দিকে হেরি
সতত কাঁপিছে এক মহা অন্ধকার—
লক্ষশাস্ত্র দীপ শিখা চারি পাশ ঘেরি
পারিল না টুটিবারে মোহবন্ধ তার ।
তুমি এসে ধীরে
হাস্ত দীপে করি দিলে আলোক সঞ্চার ।

যুগযুগান্তর-জমা পথ পার্শ্বে ওই
তত্ত্বমন্ত্র সংহিতার শাস্ত্ররাশি যত
শুকায়ে হ'য়েছে যেন কাগজের খই
আগুন লাগায়ে দাও, সব হোক গত ।
দিক্ মৃদু আলো—
জলিয়া মরুক এবে জ্বালায়েছে যতো ।

তুমি তো চলনি কবি পুঁথিপন্থী পথে
অহোরাত্রি জোগাইয়া শাস্ত্রের মজুরি
আমরা চলিব সবে আপনার মতে,
যায় যদি নিয়ে যাক্ বিবাদের পুরী,
উপদেশ যদি
কারো কাছে চেয়ে নিই সে-ও ঘৃণ্য চুরি ।

উপেক্ষিত যুগে যুগে

কল্পিতে মনে মনে প্রার্থাসন দিয়ে
প্রত্যক্ষেরে অবিশ্বাস পারি না করিতে,
সম্মুখের সরোবরে অবস্থ ভাবিয়ে
কল্পনায় কুন্ত মোর পারি না ভরিতে,
চোখে দেখি যাহা
তারাই লেগেছে মোর হৃদয় হরিতে ।

কাননের প্রান্তে এসে নবীন ফাল্গুন
আমের মুকুলে ফুলে উকি দিয়ে যায়,
ক্ষয় হীন ধরণীর যৌবনের তুণ
মোর দ্বারে আসিবে সে একবার, হায় !
তাই ব্যগ্র করে
বাসনা-শৃঙ্খল দ্বিই তার দুটি পায় ।

আমার এ দেহ হবে ক্ষীণ হ'তে ক্ষীণ
আমার অধর হবে মধু রস হারা,
তখনো কাঁদিয়ে চিন্তা পিপাসায় দীন,
আঙুলে গলিরা যাবে সব জলধারা ।
আমারি যৌবন
একবার দ্বারে শুধু দিয়ে যাবে সাড়া ।

তাই আরো ব্যগ্র করে উন্মুখ অধরে
পিপাসায় সরোবর মরিভেছি খুঁজি,
দোষ যদি নাহি থাকে পূর্ণ সরোবরে
কেন তাহা পানে দোষ—নাহি পাই বুঝি ।
হে যুবা নির্ভীক,
কর এর সমাধান শুভ সোজামুজি ।

সুপ্রভাত মুগে মুগে

মানুষের তনু ভোগে নাহি কোন পাপ
এ বিশ্বে একটি কথা বুঝেছি অন্ততঃ,
এই দেহ পরে আছে, বিধাতার ছাপ,
নহিলে এ দেহ হেন সুন্দর কি হত !
বলুক যে যাহা,
আমি এই দেহ স্বপ্নে আছি তন্দ্রাহত ।

বিধাতার তাত্ত্বলিপি আতাত্ত্ব অধরে
এনেছ বহন করি তনুতীর্ণা নারী
রহস্ত-লোলুপ তাই দ্রুতি চক্ষু ভ'রে
নির্নিমেষ চেয়ে আছি, বুঝিতে না পারি ।
হে চারু চার্বাক্
উদঘাটিয়া দাও তারে আলোকে সঞ্চারি ।

সেদিন ফাস্কুন প্রাতে বন দীঘি জলে
কূলে কূলে ক্লৌণ শ্যাম শেহলা শুকায়,
আজিকে ফাস্কুনে এই শাল বীথি তলে
মরণ-অলস পাতা ঝরে প'ড়ে হয়—
অমর চার্বাক্,
ক্লৌণ এই কর্ত্ত তব কানে কি পৌছায় ?



সজনীকান্ত দাশ

বিলম্বিনী

বহু বিলম্বে আসিয়াছ তুমি, তবু আসিয়াছ এই তো ভালো ;
তৈলবিহীন প্রদীপে দেখ তো জ্বলে কি না জ্বলে নতুন আলো ।
স্তিমিত হয়েছে যৌবন শিখা—মনের খবর লয় না কেহ,
আমি শুধু জানি অন্তর-তাপে হয় কি না হয় তাপিত দেহ ।
তুমি জ্বলিতেছ আপনার তেজে, ভস্ম ঠেলিয়া আগুন-জ্বালা
পাবে কি দেখিতে—চারিদিকে তব জ্বলিছে আরতি-দীপের মালা !

শব্দ ঘন্টা সঘনে বাজে,
জোনাকির আলো কে পায় দেখিতে সহস্রশিখা মশাল মাঝে !

বহুদিন হ'ল ক্যারাতান সাথে মরু-অভিযানে যাত্রা করি,
শত ওয়েসিস পার হয়ে শেষে মরু-মরীচিকা-চিহ্ন ধরি—
ঝড়ে ও অঁধিতে, বালু-ঝটিকায় পৌঁছিনু যেথা ভগ্ন দেহে—
মরুর প্রান্তে নহে গ্রামখানি, টানিছে না কেহ স্নিগ্ধ স্নেহে ;
জলকণাহীন পাদপবিরল দক্ষ পথের অভিজ্ঞতা
স্বপ্ন শুধু ; উদার আকাশ, কেহ নাই পাশে কহিতে কথা—
করণার মত রজনী নামে,
রহি রহি শুধু পেতেছি শুনিতে ডাকে সারমেয় ডাহিনে বামে ।

তুমি আসিয়াছ ভালই করেছে, কাছে এসে ব'স, তিমির-রাতি
যাপিতে হইবে হাতে হাত রেখে,—দেহ-দীপাধারে জ্বলো না বাতি,
আঁধি-তারকার অগ্নিশিখায় দিও না জ্বলিতে তীব্র তেজে,
ঝিঁঝিঁর ঝাঁঝের তাও ধেমে যাবে বিরামবিহীন খানিক বেজে ;

প্রেম যুগে যুগে

শুধু হাতে হাত, নিবিড় তিমিরে পড়িতে পাব না মুখের ভাষা,
তুমি না জানিবে আশঙ্কা মম, আমি জানিব না তোমার আশা ;
রাত্রি গড়াবে প্রভাত পানে,
তব্বা যদিই নেমে আসে চোখে টুটিবে তব্বা পাখীর গানে ।

পিছন ফিবিয়া খুঁজো না কিছুই, হাতে যাহা ঠেকে তাহাই লহ,
আমার অভীত ভবিষ্যতের তুমি হইও না বার্তাবহ ।
সন্ধ্যা-উষায় আজো ক্ষরে মধু, নদীতরঙ্গে সূর্য হাসে,
শুক ফুলের মধু-পান-লোভে আজো প্রজাপতি উড়িয়া আসে,—
তুমি আসিয়াছ ভালই করেছ, এ ধরণীতল নবীন আজো,
পথের ধূলায় আমি সাজিয়াছি, ফুল পরিমলে তুমিও সাজো ।
এস কাছে এস বিলম্বিনী,
নূতন বঁধুরে যদি চিনে থাক পুরানো বধুরে আমিও চিনি ।

বেলা ব'য়ে যায়, অাঙিনায় ছায়া পড়িয়াছে দেখ দীর্ঘ হয়ে,
দিনের আলোয় মনের আঁধার এখনো হয়তো আসিবে ক্ষয়ে ;
তুমি গাবে গান, আমি তব নাম আখর গনিয়া ছন্দে গাঁথি,
চকিতে চাহিয়া দেখিব আকাশে উড়ে চলিয়াছে বকের পাঁতি ।
ভৈরবী তব পূরবী হইয়া বাজিয়া উঠিবে ছন্দে মম,
দিনের সূর্য নিবে যায় যদি, রাতের চন্দ্র হরিবে তম ।

আশা-আশঙ্কা জ্যোৎস্নারাত্রে
এক হয়ে ঝরি রক্তধারায় নিদ দিবে আনি আঁখির পাতে ।

আর বিলম্ব করিও না, যদি আসিয়াছ এস নিকটে আরো,
কাল-নদীজল বহে ক্ষুরধার, তুমি বিলম্ব করিতে পার ;
আমার আকাশে রোজ্জীতল মেঘে মেঘে রঙ দিতেছে এঁকে,
দীপ্তি তোমার প্রখর ঠেকিলে গুঠনে দিব মুখটি ঢেকে,

প্রথম যুগে যুগে

দিবা-চপলতা রাতের কবিরে যদি বা মুখর করিয়া তোলে—
অসহ হবে না, জানি যৌবন ভুলিবার যাহা সহজে তোলে ।

দিবা-অবসান যখন হবে,
জানি ঘুচে যাবে ব্যবধান বাধা তিমির-তীর্থ-মহোৎসবে ।

গোধূলিগন এখনো আসে নি, প্রহরখানেক রয়েছে বাকি,
তব সিঁথিমূলে সিন্দূররেখা অন্তঃসূর্য্য দিবে কি আঁকি !
কণ্ঠে পরিবে সঙ্ক্যামালতী অথবা রজনীগন্ধা-মালা ।
প্রভাতের ফুল আমার তো নহে, পার যদি এনো ভরিয়া ডালা ।
মন-বিনিময় হয় যদি তবে ফুল-বিনিময় হবেই জনি,
দিনের দীপ্তি মোর পূজাঘরে শোভিবে আরতি-দীপের দানি ।
স্নিগ্ধ তিমির ভাল না লাগে,
ঘুমায়ে পড়িও—শশীহীন নভে জেনো অতল তারকা জাগে ।

ভুলের খেলালে যদি এসে থাক, ভুল ক'রে এস নিকটে আরো,
কোনো ভয় নাই, পূবের আকাশে সঙ্ক্যাতিমির হতেছে গাঢ়,
আলোর পাখীরা ব্যাকুল পাখায় একে একে হের ফিরিছে নীড়ে,
রবি ডুবে যায় সমুদ্রবুকে, নিশি মনোহর জাগিছে ধীরে,
মিলনের বাঁশি বাজিবে গগনে, বাহুপাশ হবে নিবিড়তর,
সঙ্ক্যামালতীমালা পর গলে, রজনীগন্ধা খোঁপায় পর ।

আরো কাছে এস বিলম্বিনী,
কেটে গেল দিন পরিচয়হীন, নিশীথ-তিমিরে লইব চিনি ।

ব্রান্তি

ভুমি ভুল করিয়াছ সখী,
আমি ভুলি নাই,
মধ্যাহ্নের খররোদ্রে কাঁপিছে প্রান্তর-বায়ু
মরীচিকা তাই ।

ইন্ডোম ঘুণে ঘুণে

গুঁড় ধূলি পত্র পথে ঘূর্ণাবেগে ধরে ফণা

আকাশ পাণ্ডুর,

নেহারি আপন চোখে সেথা শ্রাম স্নগম্ভীর

নীরদ মেঘুর ।

বসিয়া বনানীছায়ে তাপদঙ্ক ধরণীরে

ছায়াচ্ছন্ন ভাবি—

বর্ষণ কামনা কর । আমি নিঃশ্ব রিক্ত হায়—

শ্মশান-বৈরাগী ।

আশ্রয় কুটির হেরি তীক্ষ্ণ তীব্র রোজে বসি’

ভয়ে শিহরাই—

তুমি ভুল করিয়াছ সখী,

আমি ভুলি নাই ।

তুমি ভুল করিয়াছ সখী,

আমি ভুলি নাই—

দেখিয়াছ অগ্নিকণা ক্ষণে ক্ষণে হানে দীপ্তি,

দেখ নাই ছাই !

আমার নয়নে তুমি ভুল ক’রে দেখিয়াছ

স্বপ্ন-মদালস—

চির-পথিকের ক্লান্তি, সে নহে স্বপন, সখী—

দেহ যে বিবশ !

স্বপনে পরশ লভি’ বাহির হইয়াছি পথে,

পথিক বিহ্বল—

হয়তো গনের ভুলে কখনো হইয়াছে আঁখি

ঈষৎ সজল ;

হৃৎপ্রেম যুগে যুগে

হরতো চকিতে কড় নরনের জল মুছে
পিছু ফিরে চাই—

তুমি ভুল করিয়াছ সখী,
আমি ভুলি নাই ।

তুমি ভুল করিয়াছ সখী,
আমি ভুলি নাই ;

জননীর স্নেহাঞ্চল গাঢ় হয়, মন তত
বলে, যাই যাই ।

আমি যাব, বাহুবন্ধ হইলে নিষ্ফল, সখী,
ব্যর্থ অভিমান ;

জীবন-বীণায় মম কাঁপিতেছে তীব্রসুরে
মৃত্যু-তন্ত্রীখান ।

সে সুর শোনেনি কেহ শুনেছে আমারই মন,
হয়েছি ব্যাকুল ।

অজানা সাগর মাঝে তত ভেসে যেতে চাই
যত দেখি কুল—

ব্যবধান তত বাড়ে তোমারে বন্ধেতে মোর
যতখানি পাই—

তুমি ভুল করিয়াছ সখী,
আমি ভুলি নাই ।

তুমি ভুল করিয়াছ সখী,
আমি ভুলি নাই—

পথিক জীবনে সখী, সবই মিথ্যা, সত্য শুধু
পথ চলাটাই ।

প্রেম ঘুণে ঘুণে

প্রান্তরে বকুল-ছায়া সত্য নয়, নহে সত্য

মেঘের গর্জন—

আঁধারে বিদ্যৎ-প্রভা তাও ক্ষণিকের সখী,

পথ চিরন্তন ।

মরুভূমে আঁধি নামে আঁধারিমা চারিদিক

আঁধি যায় সরি,'

বালু পথ চিরদিন ধু ধু করে, চলে পান্থ—

তারই রেখা ধরি' ।

প্রেমের প্রদীপশিখা যত অচপল হোক—

সে তো আলেয়াই—

তুমি ভুল করিয়াছ সখী,

আমি ভুলি নাই ।



জীবনানন্দ দাশ

বনলতা সেন

হাজার বছর ধরে' আমি পথ হাঁটিতেছি পৃথিবীর পথে,
সিংহল সমুদ্র থেকে নিশীথের অন্ধকারে মালয় সাগরে
অনেক ঘুরেছি আমি ; বিশ্বিসার অশোকের ধূসর জগতে
সেখানে ছিলাম আমি ; আরো দূর অন্ধকারে বিদর্ভ নগরে ;
আমি ক্লান্ত প্রাণ এক, চারিদিকে জীবনের সমুদ্র সফেন,
আমারে দুদণ্ড শাস্তি দিয়েছিল নাটোরের বনলতা সেন ।

চুল তার কবেকার অন্ধকার বিদিশার নিশা,
মুখ তার শ্রাবস্তীর কারুকার্য ; অতি দূর সমুদ্রের পর
হাল ভেঙে যে নাবিক হারিয়েছে দিশা
সবুজ ঘাসের দেশ যখন সে চোখে দেখে দারুচিনি-দ্বীপের ভিতর,
তেমন দেখেছি তারে অন্ধকারে ; বলেছে সে, 'এতদিন কোথায় ছিলেন ?
পাখীর নীড়ের মত চোখ তুলে নাটোরের বনলতা সেন ।

সমস্ত দিনের শেষে শিশিরের শব্দের মতন
সন্ধ্যা আসে ; ডানার রৌদ্রের গন্ধ মুছে ফেলে চিল ;
পৃথিবীর সব রং নিভে গেলে পাণ্ডুলিপি করে আয়োজন
তখন গল্পের তরে জোনাকির রঙে ঝিলমিল ;
সব পাখী ঘরে আসে—সব নদী,—ফুরায় এ-জীবনের সব লেন দেন ,
থাকে শুধু অন্ধকার, মুখোমুখি বসিবার বনলতা সেন ।

সহজ

আমার এ গান
কোনোদিন শুনিবে না তুমি এসে,—
আজ রাত্রে আমার আহ্বান
ভেসে' যাবে পথের বাতাসে,—
তবুও হৃদয়ে গান আসে !
ডাকিবার ভাষা
তবুও ভুলি না আমি,—
তবু ভালোবাসা
জেগে' থাকে প্রাণে !
পৃথিবীর কানে
নক্ষত্রের কানে
তবু গাই গান !
কোনোদিন শুনিবে না তুমি তাহা,—জানি আমি—
আজ রাত্রে আমার আহ্বান
ভেসে' যাবে পথের বাতাসে,—
তবুও হৃদয়ে গান আসে !

তুমি জল,—তুমি ঢেউ,—সমুদ্রের ঢেউয়ের মতন
তোমার দেহের বেগ,—তোমার সহজ মন
ভেসে' যায় সাগরের জলের আবেগে ।
কোন্ ঢেউ তার বুকে গিয়েছিল লেগে' •
কোন্ অন্ধকারে
জানে না সে !—কোন্ ঢেউ তারে
অন্ধকারে খুঁজিছে কেবল
জানে না সে !—রাত্রির সিঁদুর জল,

হৃদয় প্রেম যুগে যুগে

রাত্রির সিন্ধুর ঢেউ

তুমি এক ! তোমাতে কে ভালোবাসে !—তোমাতে কি কেউ
বুকে ক'রে রাখে !

জলের আবেগে তুমি চ'লে যাও,—

জলের উচ্ছ্বাসে পিছে ধু ধু জল তোমাতে যে ডাকে !

তুমি শুধু একদিন,—এক রজনীর !

—মানুষের—মানুষীর ভিড়

তোমাতে ডাকিয়া নয় নূরে,—কত নূরে !

কোনু সমুদ্রের পারে,—বনে—মাঠে—কিন্ধা যে আকাশ জুড়ে'
উদ্ধার আনেনা শুধু ভাসে !—

কিন্ধা যে আকাশে

কাল্পের মত বাঁকা চাঁদ

জেগে' ওঠে,—ডুবে যায়, তোমার প্রাণের সাধ

তাহাদের তরে !

যেখানে গাছের শাখা নড়ে

শীত রাতে,—মরার হাতের শাদা হাড়ের মতন !—

যেইখানে বন

আদিম রাত্রির জাগ

বুকে ল'রে অন্ধকারে গাহিতেছে গান '—

তুমি সেইখানে !

নিঃসঙ্গ বুকের গানে

নিশীথের বাতাসের মত

একদিন এসেছিলে,—

দিরেছিলে এক রাত্রি দিতে পারে যত !



হেমচন্দ্র বাগচী

গোপন

আমার গোপন প্রেম রাখিব গোপনে
শুশীতল তরু কুঞ্জে তৃণগুন্ডাছায়,
তরুণী কিশোরী সম আনত নয়নে
রহিবে সে দীর্ঘ রাত্রি মিলন-সজ্জায় ।
যদি বায়ু বহে যায় বসন্তের দিনে
উড়িয়ে মুকুল-গন্ধ সুমন্দ মন্থর,
যদি কোন অজানিতা ফেলে তা'রে চিনে
তথাপি কি কাঁপিবে না আমার অন্তর ?
আমার কৈশোর প্রেম রাখিব গোপনে
নিভৃত নির্ঝর ধারে কাশবন মাঝে,
তরুণী কিশোরী সম আনত নয়নে
রহিবে সে দীর্ঘ রাত্রি বিরহের সাজে ।
গীতিহীন বনভূমি নিস্তব্ধ নির্জন,
আমার কৈশোর প্রেম রহিবে গোপন ॥

সাঁওতালি বালা

ওগো সাঁওতালি বালা, '
আজি তোর সাথে শীতের এ রাতে
বদল হউক্ মালা ।
ঘনায় এসেছে সাঁঝের আঁধার
ঘন কুলাশায় ঢাকা চারিধার ।

প্রেম যুগে যুগে

পাহাড়তলির ঝাঁউবনে হেরি
শুধুই জোনাক জ্বালা ।
এই অবসরে তোর সাথে মোর
বদল হউক মালা ।

*

আজি গৃহহীন পরবাসী আমি
ওরে সাঁওতালি বালা,
এই নিশীথের কালো পর্দার
আড়ালে সাজাও ডালা ।
বিবাহের আজি কর আয়োজন
বিরহের নাহি কোন প্রয়োজন
বেদনারে আজি সঙ্গীত করি'
জানা'ব মরমজ্বালা,
ওগো সাঁওতালি বালা !

*

রজনীর সাথে র'বে মিশে তুমি
তমাগে যেমন কালা,
অঁধিয়ান্ন ভ'রে যা'বে দশদিক
জলিবে না মৃদু আলা ।
ঘন কুয়াশায় ঘিরিবে তোমায়
আলোকের রেখা র'বে না কোথায় ।
মরণ-আহত শীতল ওষ্ঠে
চুমিও চুমিও বালা,
দু'খানি বাহুর গাঢ় বেষ্টনে
জুড়াব হৃদয় জ্বালা ।
ওগো সাঁওতালি বালা ।

বনফুল

আসিব ফিরিয়া

ঝঙ্কাসম তব দ্বারে হানা দিতে আজি আসিয়াছি,
অকস্মাৎ প্রাণ-ভরে অকারণে ভালবাসিয়াছি,
আপনার আচরণে শতবার কত শাসিয়াছি,

তবু ভাসিয়াছি !

ভাসিয়াছি আজি আমি সীমাহারা মহাপরাবারে,
অতল সে কালোজলে নিঃশেষে নিজেরে হারাবারে,
আপনারে বন্দী রাখি হিসাবের ক্ষুদ্র কারাগারে

সখী, যারা পারে

নিষ্কিতে ওজন করি করিতে প্রণয় নিবেদন,
আমি তাহাদের নহি।—মোর নহে ক্ষীণ আবেদন।

চিরকাল যুগে যুগে গুণী দেওয়া শাস্তি নিকেতন,
করি উচ্ছেদন—

মর্মান্তিক তীব্র দাহ—এ পথের পাথের আমার,
তাই বলে ভাবিছ কি ঝরাইব নয়ন-আসার।

পুরুষ কাঁদে না কভু—চিরকাল এক দাবি তার,
‘তুমি যে আমার’—

আমার আমারই তুমি—এ জীবনে নাই বা পেলাম,
স্পষ্টভাবে দাবিটুকু শুধু আজ জানাতে এলাম !
বেদনার বিষভাণ্ড নিজ হস্তে তুলিয়া খেলাম,
মরিয়া গেলাম !

নিষ্কৃতি পেলেনা জেনো—চিরকাল রহিব ঘিরিয়া,
চন্দ্রালোকে, বর্ষারাতে দেখা দিব মরম চিরিয়া,
দিবারাত্রি জীবনের ছোট বড় শত কাক দিয়া

আসিব ফিরিয়া।

নিষ্ঠাহীন

ভুল'বে কাহার কথা কি ভাবে,
 নিজেই আমি জানি না তার খবর ;
 কোন্ শিখাটি মন যে কবে নিভাবে,
 কখন খোঁড়া হবে যে কার কবর—
 কেমন করে বলব বল সখী,
 নিজের কাছে নিজেই আমি ঠিকি,
 তোমার চোখে অশ্রুধারা,—ওকি ?
 হঠাৎ দেখি বিপদ হল জ্বর !
 কাল কি হবে ভাবছ কেন সে-সব ?
 আজকে তুমি মনিব, আমি নফর ।

সখী, আমার সারা হৃদয় জুড়ে যে
 আজকে তুমি পেতেছ এই আসন,
 জানো সেথায় কত আগুন পুড়েছে ?
 কত দিনের কত স্মৃতি নাশন ?
 আগুন কত জ্বলে এবং নেভে,
 সে সব কথা লাভ কি বল ভেবে,
 অশ্রু মুছে একুণি তো দেবে
 চুষনেতে উচ্ছ্বসিত ভাষণ ।
 ইনসিওরেন্স প্রেমের চলে কি ?
 মানবে কি তা প্রীমিয়ামের শাসন ?

প্রথম মনে লাগল যবে আগুন,
 লকলকিয়ে রক্ত-রাঙা বলকে
 ভুলেই গেছি আশ্বিন কি ফাগুন,
 হিসাব তার এখন রাখে বল কে ।

প্রেম যুগে যুগে

হঠাৎ জলে' হঠাৎ পুনরায়,
দীপ্ত শিখা লুপ্ত হয়ে যায়
তাহার পানে মন কি ফিরে চায়,
তোমায় দেখে গেলাম ভুলে পলকে ;
ভুলেই গেছি আশ্বিন কি ফাগুন
হিসাব রাখে এখন তার বল কে !

পুড়েই যদি যেতাম হ'ত ভালো কি ?
একই প্রেমের আলো এবং ধূমেতে ?
মদির হত তাহলে এই আলো কি,
সুধায় ভরা তোমার মধু-চূমেতে !
ক্ষণিক তরে সকল ভুলে থাকা
অধরখানি অধর 'পরে রাখা,
সরম ভরে সোহাগটিরে আঁকা,
স্বপন দেখে জড়িয়ে ধরা ঘূমেতে !
পুড়েই যদি যেতাম হোতো ভালো কি ?
এক প্রেমের আলো এবং ধূমেতে !

পুষ্পে নানা,—ওগো আমার লগিতে,
একটি পূজা করছি চিরকালই তো,
একই মন্ত্রে একই রকম বলিতে,
প্রতিমাটাই বদল হয় খালি' তো !
একটি সুরে বাজল বাঁশি নানা,
সত্যি সখী নাইকো তব জানা ?
একই আগুন ফিরছে দিয়ে হানা
বারে বারেই নানা প্রদীপ জ্বালি' তো !

প্রেম যুগে যুগে

পুষ্পে নানা, ওগো আমার ললিতে,
একটি পূজা করছি চিরকালই তো !
আজকে সখী আকাশ ভরা জ্যোৎস্না,
হৃদয় মোর চলছে দ্রুত, গোন তো—
কাদছ কেন ? সত্যি কথা বোঝ না ?
বুকের 'পরে কান পাতিয়া শোন তো !
চক্‌মকিয়ে দুলছে দুটি দুল,
মন্দ বায়ে কাঁপছে দুটি চুল,
বলেছি যা ভুল সে-সব ভুল,
উতল প্রাণ তোমার পায়ে প্রণত !



অমিয় চক্রবর্তী

বিয়াত্রিচে

বিয়াত্রিচে,

ধন্য তুমি ।

পেয়েছিলে যার ভালোবাসা

সেই স্বর্গপথ-যাত্রী কবি মর্ত্যলোকে

তোমারই চোখের দীপে আলো দেখে একা

সিঁড়ি দিয়ে যেতে ধাপে ধাপে,

সারা জীবনের উর্ধ্ব দীর্ঘ পথে অনির্বাণ

জেনেছিল তোমাকেই ধ্যানে—

ধন্য বিয়াত্রিচে ॥

সংসারে তুমিই তার বৃকে

কী ধরাতে জালা, যার দাহে

পুড়ে যায় বিরহ বেদনা,

কান্না হয় হীরকান্নিছুতি,

ভেদ করে মোহের মোহন ঘোর

উদ্বারিত উজ্জল হৃদয়ে ।

যে-মন্ত্র দিয়েছিলে তুমি

তোমারই কি ছিল জানা ?

আপন জীবনে

তুমিও কি পেয়ে তারই অধিকার

বাঁচার জটিল কাজে পূর্ণ দানিষের শেষে

দীপ্তি নিজে রেখেছিলে বিশ্বাতীত প্রেমে ?

প্রেম যুগে যুগে

ভোমাতে যে-কবি তার প্রেমের সন্ধানে
নির্বাসিত পেল দান,
তারি তুমি অনন্ত মাধুরী বার্তাবহ,
ধন্য তুমি বিয়াত্রিচে ॥

এখনো কিরেন্দ্রে তীর্থ-সুন্দর সহর চেয়ে আছে
সেই সাঁকো রয়েছে অটুট,
যার কাছে কবে দাস্তে বিয়াত্রিচে
দেখেছিল পরস্পর ।
সেখানে দাঁড়িয়ে ভাবি, আমি দূর আগন্তুক,
দিব্যের ঘটনা সে কি আজো ঘটে ?
নরনারী পার হতে নদী
কী এক অজানা শক্তি বহে অজানিতে,
শুভদৃষ্টি বিনিময় হয় অমরার ।
তারপর শুরু হয় যে আশ্চর্য অন্তরের চলা
সে কি কেউ জানে ।
দাস্তেও কি তাঁর মহামনে
হৃদয়ের শুভতায় কখনো আপনি
জেনেছেন, প্রেম হাতে ধ'রে
কেন নিয়ে চলে উদ্দেশ', কেন সিঁড়ি-ওঠা ;
বেদনায় সাধনায় তাঁর প্রিয়তমা
এল নিয়ে সময়ের অতিক্রান্ত দান
কোন্ দিব্য পথে ;
মূর্ছিত হৃদয়ে কবে এল চিরন্তন
ইতালীর মেয়ে ॥

যত কথা বলবার, সমুদ্র-উতলা সেই ভাষা
টান্দে লাগা প্লোকে জাগে দাস্তের মহাকবিতায়

প্রেম যুগে যুগে

তোমারই মুখের দিকে চেয়ে,

ধনু বিয়াত্রিচে ।

স্বর্গমর্তপাতালের অনন্ত আখ্যান

তুমি তো নিলেনা, তুমি চলে গেলে দূরে ;

তোমারই উদ্দেশে তাই প্রবাসী খেয়ানী

পথচারী দাস্তে, আজীবন,

বাঁহের বারে বলে গেল সর্বমানবের কবিতায়

অলস তেরুজা-রিমা ছন্দে ।

তোমার ব্যথায়-কাঁদা, তোমার-জাগানো

সে-কথা আমরা শুনি কালে কালে ;

দুজনের প্রেম

আমাদেরই সাক্ষ্য মেনে কবি-কণ্ঠে হোলো উচ্চারিত ।

তুমি, বিয়াত্রিচে,

ততক্ষণ জ্যোতির্লোকে সংসাব-বিহীন,

সকলেরই সংসারের হলে আপনার,

বাধা-দ্বন্দ্ব ঈর্ষার অতীত ॥

তুমি অবশেষে

তন্ময় আলোক-ব্রতী একাকী কবিকে

তার চিরন্তন দুঃখ হতে মুক্তি দিয়ে,

নিয়ে গেলে সর্ব-আলো-দাতা তাঁরি আলোর সভায় :

ধনু হলে বিয়াত্রিচে ।

আমাদের প্রত্যেকের পৃথক্ ক্ষুধাও-পেল জয়,

তোমাকেই পেয়ে যেন ।

স্বর্গীয় যুগল, তারি পিছে পিছে মর্ত নরনারী

সংসার পেরিয়ে যাই, দাস্তে আর তোমার নির্দেশে ;

চিরোজ্জ্বল হৃদয়ের পূর্ণসাধ মন্দিরে দাঁড়াই মৃত্যুহীন ।

প্রেম যুগে যুগে

আলোকের শেষ সিঁড়ি উঠে, দেখা যায়

ঐ কাছে

দয়জ্ঞ আলোয় আলো আরো বিভাবিত

প্রেম সূর্যনিকেতনে, আলো সেখা

সর্বদাহমুক্তবহ্নি, যার স্বাদ তুমি

পৃথিবী নারীর প্রেমে দিয়েছ, তুষার তুষাহারা,

শুধু ইতালীতে নয়, দেশে দেশে ।

তোমারই মাধুরী জপি অন্য নামে আজো ঘরে ঘরে,

তোমাকেই পেয়ে বুকে চিনেছি আপন প্রেমসীকে,

ধনু বিয়্যত্রিচে ॥

দিনাভরণ

কাকে চাই তা জানি যখন দেখি তোমার মুখ,

যখন তোমার গলার আওয়াজ শুনি

——তোমাকে চাই ।

ভরে যখন তোমায় ছুঁয়ে সমস্ত বুক,

কানায় কানায় হাওয়ায় লাগে বাসন্তী ফাস্তনী——

তোমাকে পাই ॥

কাকে চাই তা জানি যখন তুমিও চাও

আমাকে এই আলো হাওয়ার দুপুরে পাও——

• দুজনে চাই ।

ময়ূরকুঞ্জে ময়ূর ডাকে

বাতাবি-ফুল সাদা সৌরভ ফুটিয়ে রাখে——

লেক্-এর জলটা বিলি-মিলিয়ে পাগল বাণী ।

কাকে চাই তা দুজন জানি ॥

দুঃখের যুগে যুগে

কাকে চাই তা চাওয়ান্ তিনি সৃষ্টি দিয়ে,
জানান্ হঠাৎ রোদের বেলায় বৃষ্টি দিয়ে ।

বোবা দুজনে ঝাপসা বুকে কান্না-মেশা,
কোথায় খুঁজি আরো চাওয়ার অকূল নেশা——

জন্ম মৃত্যু দূরের দিকে রইল পড়ে,
দুজনকে পাই স্বর্গ বানাই ধুলোর ঘরে ॥



অচিন্ত্য কুমার সেনগুপ্ত

প্রেম

কী করে দেখাবো প্রেম, যদি দেহ রহে নিরুত্তর
শানিত শোণিতে যদি নাহি পায় উষ্ণ উন্মাদনা,
ইন্দ্রিয়ের ইন্দ্রজালে নহে যদি আচ্ছন্ন প্রহর,
তবু প্রেম ? প্রেম নহে কায়াহীন কথার ছলনা ।
আমার এ প্রেম, সখী, কামনা সে নিরবগুণনা,
উদ্বেলিত উদধির ফেনিল রুধির, মোর গান
দেহের দুর্দান্ত দাহ, অস্থিময় অস্তিত্ব-চেতনা
আমার শরীরে সখী, সীমাহীন প্রেমের প্রমাণ ।

প্রেম নহে ভাব পদ্য, প্রেম শুধু আমার শরীর ;
আমি তার চিত্রবহা, মর্ত্যরূপ, আমি তার চিতা ;
আমার শরীরে সখী, মুহুমূর্ছ মন্দির নদীর
ভরঙ্গ সজ্বাততীক্ষ্ণ বেগোময় উলঙ্গ শুচিতা ।
দেহেরে নিরুদ্ধ করি এ-প্রেমের কোথা পাই ভাষা ?
কী করে বোঝাবো তারে ? দেহে তার প্রকাশ-পিপাসা

অষ্টাদশী

ছোট ঘরটিতে বসে' আছি একা মোর ছোট ঘরটিতে,
একদা যেখানে চুপি চুপি এসে ছোট দুটি পা রাখিতে ;

প্রেম যুগে যুগে

—পদের দুটি কুঁড়ি !

দু'টি কালো চোখে আমারি পিপাসা করিয়া আনিতে চুরি
সাগরমেখলা পৃথিবী চাহিনা, চাহিনা প্রিয়ার প্রেম,
এই স্বরটির ঠাণ্ডা হাওয়াটি ভারি মিঠা মোলায়েম ।
মাকড়সাগুলি জাল বিছায়েছে দেয়ালে ও কড়িকাঠে,
ভাবের সূতায় বাসা বেঁধে বেঁধে আরো সময় কাটে ।

নাই কোন অভিলাষ

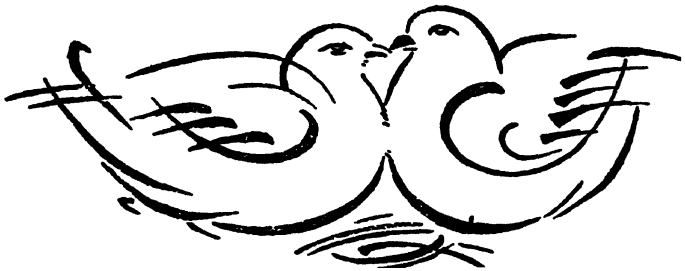
দূরে বসে আজি তোমারি মতন ফেলিতেছি নিঃশ্বাস !
মেঘের আড়ালে রামধনু দেখ,—ধরা দিতে অবনত,
মনে হয় যেন তোমার খোঁপায় লাল কিতাটির মতো !

হে তনু সঞ্চারিণী,

নয়ন তোমারে ভুলেছে যদি-ও, মন বলে : 'চিনি চিনি' ।
বাহিরে মোদের পৃথিবী টলিছে, খসিছে কাহার তারা,
খবর রাখিনা, এই বেশ আছি—অতীতে আশ্রহারা !

এত বড় এ-নিখিলে,

এই মনে আছে, একদিন তুমি খুব কাছে এসেছিলে ॥



অন্নদাশঙ্কর রায়

বন্দনা

বন্দনা করি অপ্সরাকে

প্রেম করে ভয় লভিতে থাকে ।

সহজ মুক্তা চঞ্চলা যে

বনবিহঙ্গ অঞ্চলা যে

বাহুবন্ধনে বন্ধ মাঝে

আপন কৃপায় স্থির যে থাকে ।

বন্দনা করি রঙ্গিনীকে

অযুত ছলনা ভঙ্গিনীকে ।

রম্য গগন রম্য ক্ষিতি

উল্লাস যারে জোগায় নিতি

রূপ ভোগে যার অপরিমিতি

নৃত্য যাহার চরণে ফিরে ।

বন্দি নায়িকা উত্তমারে

তনু সুগন্ধ চিনায়ে যারে ।

স্পর্শ যাহার স্নিগ্ধ কোমল

অঙ্গ যাহার ধৌত অমল

নিঃশ্বাসে যার ধীর পরিমল

আনন্দ যার অভিসারে ।

বন্দনা মোর সঙ্গিনীকে

যার সন্তোষ গৃহের নীড়ে ।

কাজ অফুরান, হাত দু'খানি

মুখে নাই অভিযোগের বাণী

নিজ পালায় আন্তর মানি'

আলস্য যায় হার মানি' রে ।

বন্দি তাহারে যে মোর জায়া
নন্দনে মোর দিয়াছে কায়া ।
যত্ননিরতা বিরতিহীনা
না করে নৃত্য না ধরে বীণা
সেই অপ্সরা এ দেবী কি না
নিত্য আমার লাগান্ন মায়া ।

সমাপন

আমাদের প্রেমে ফুরালো কথার পালা
মন-জানাজানি কিছু না রহিল বাকী ।
বাসনার দীপে নিভিল নিবিড় জ্বালা
বাসর শয়নে নীরবে নমিল আঁখি ।
এবার কেবল আঁখিতে আঁখিতে লাগা
দ্রুটিতে মিলিয়া একটি স্বপনে জাগা ।

এবার প্রেমেরে সহজ করিয়া আনা
অনল হইতে আলোক ছানিয়া তোলা ।
এবার প্রেমেরে মনের আড়ালে মানা
চির চেতনার চির বেদনারে ভোলা ।
আসে ক্রান্তির মৌন গভীর শান্তি
এতক্ষণে হলো উদ্দামতার ক্ষান্তি ।

চুষনতাপ হিম হয়ে আসে ধীরে
চুষন ছাপ জাগিবে যামিনী ভোর ।
ক'টি নিমেষের চকিত সুখ-স্মৃতিরে
জননীর মতো আবরিবে ঘুমঘোর ।
আমাদের প্রেমে এলো মরণের বেলা
তার পরে, প্রিয়ে, বিস্মরণের খেলা ।

প্রেম যুগে যুগে

মিলিত প্রেমের স্বপ্নে পোহাক রাতি
মন ছুঁয়ে ছুঁয়ে রও গো মনের কাছে ।
অচির মরণে চির মিলনের সাথী
এখনো তোমারে চিত্ত আমার যাচে ।
প্রভাতে হেরিব-তোমারি অচেনা মুখ
আমার পাশের উপাদানে জাগরুক ।

আজিকার মতো ফুরালো হিয়ার দ্বন্দ্ব
জানি ভালোবাসো, জানালেম ভালোবাসি ।
মৃদু হয়ে এলো অধীর আবেগ অন্ধ
মুদিত নেত্রে ভাঙিল তৃপ্ত হাসি ।
আমাদের প্রেমে আসিল মধুর ক্ষণ
আজি তাই তার মধুরেই সমাপন ।



প্রমোদ্র মিত্র

কথা

তার পরও কথা থাকে ;
বৃষ্টি হয়ে গেলে পরে,
ভিজ়ে ঠাণ্ডা বাতাসের মাটি-মাখা গন্ধের মতন,
আবছায়া, মেঘ-মেঘ কথা ।
কে জানে তা, কথা কিম্বা,
কেঁপে-ওঠা রঙীন স্তব্ধতা !

সে কথা যায়না বলা তাকে ;
শুধু প্রাণধারণের
প্রতিজ্ঞা ও প্রয়াসের ফাঁকে ফাঁকে,
অবাক হৃদয়
আপনার সাথে একা একা
সেই সব কুয়াসার মত কথা কয় ।

অনেক আশ্চর্য কথা
হয়ত বলেছি তার কানে ;
হৃদয়ের কতটুকু মানে,
তবু সে কথায় ধরে !
তুষারের মত যায় ঝরে
সব কথা আবেগের উত্তুঙ্গ শিখরে ।

প্রেম যুগে যুগে

সব কথা হেরে গেলে
তাই এক দীর্ঘশ্বাস বয় ;
একবার কেঁপে বুঝি
দূলে ওঠে নির্লিপ্ত সময় ।
তারপর জীবনের ফাটলে ফাটলে
কুয়াসা জড়ায় ;
কুয়াসার মত কথা
হৃদয়েব দিগন্তে ছড়ায় ।

ছাদে যেওনা'ক

ছাদে যেওনা'ক, সেখানে আকাশ অনেক বড়
সীমানা-হীন ।
তারাদের চোখে এত জিজ্ঞাসা,—স্বপন সব
হবে বিলীন ।

তার চেয়ে এস, বসি দুজনাতে, জানালা পাশে ;
ওধারের ছোট গলিটিরে দেখি,—গ্যাসের আলো,
পড়েছে কেমন ফুটপাথটির ধারের ঘাসে ;
শুনি নগরের মৃদু গুঞ্জন, লাগিবে ভালো ।

তার পরে চাই তোমার নয়নে, তুমিও চেও ;
—ঘরের বাতিটি জ্বালা হয় নাই, আধো আঁধার ।
যা দেখিব তার বেশী যেন সেথা, কি রয়েছেও
মনে হবে যেন চোখের সাগর, সেও অপার ।

প্রেম যুগে যুগে

যদি খুশি হয়, কাছে সরে এসো ; বাড়িয়ে হাত
হাতটি ধরিও, আর মাথাটিরে হেলায়ে দিও ;
সুবাসিত চুল, তাই হ'বে মোর গহন রাত,
কপালের টিপে পাব প্রিয়তম তারকাটিও ।

নিকট পৃথিবী ঘিরে থাক, আর যা কিছু চেনা
তাই দিয়ে রাখি শূন্য আকাশ আড়াল করি' ।
মুহূর্তগুলি মন্থন করি উঠে যে ফেণা,
তাহারি নেশায় সব সংশয় রব পাশরি' ।

সীমাহীন ধাঁধা ধু ধু করে সখী, উপরে নিচে,
রচ নীরন্ধু গাঢ় চেতনার ক্ষণিক নীড়,
স্বপ্নহরণ মহাকাশ হোথা নিখুসিছে,
এই ক্ষণ-সুখ-প্রত্যয় তাই হোক নিবিড় ।

ছাদে যেওনাক সেখানে আকাশ অনেক বড়
সীমানা-হীন ।
তারাদের চোখে এত জিজ্ঞাসা,—স্বপ্ন সব
হবে বিলীন ।



অজিত দত্ত

ন খলু ন খলু বাণঃ

সংহত করো, সংহত করো অয়ি,
যৌবন-বাণ তীক্ষ্ণ ভয়ঙ্কর,
এ নহে তন্দ্রা-অরণ্য-ছায়াচারী
ব্রহ্ম হরিণ ; সংহরো তব শর,
তীক্ষ্ণ সায়ক দীপ্ত এ-দিবালোকে
ব্রষ্টলক্ষ্য কোনমতে হয় পাছে,
শক্তি তোমার সংহত করো অয়ি,
মৃগয়ারো তরে ভিন্ন সে ঋতু আছে ।

গর্বিতা অয়ি বলয়-শৃঙ্খলিতা,
মুহূর্ত ভোলো বন্ধন কৌশল,
চোখে থাক্ মোহ, হে মোহ-দুর্বিনীতা
বহু ছলময়ি, আঁখি হোক ছল ছল ।
চিত্ত আমার স্তব্ধ সরসী-সম
শুধু ছায়াখানি বক্ষে রাখিব এঁকে,
সুকঠিন মম মর্মের দর্পণে
সায়ক তোমার মিথ্যাই যাবে বেঁকে ।

জানিয়ে কণ্ঠা, আলেখ্য নাহি রয়
সরোবর বুকে নিত্য অনখর,
দর্পণ পরে বহু ছায়া সঞ্চারে—
অভিমান নাই সাজে দর্পণ পর ।

হুগো যুগে যুগে

বিদ্যতে কেবা মুঠিতে ধরিতে পারে ?

বিদ্যৎ-গতি শাসনে বাঁধিবে কে সে ?

দৃষ্টি-মোহন নভোচারী উষ্কারে

কে বাঁধিবে বুকে তপ্ত ভ্রমন শেষে ?

দূরবার্তিনি, তোমার আমার মাঝে

উদাসীনতার ফটিক প্রাচীর গাঁথা,

দর্শন চাহি, স্পর্শন চাহি না যে,

পিপাসু নয়ন, ক্লান্ত চোখের পাতা ।

ওগো গর্বিতা, সংহরো সংহরো,

এ নহেক মৃগ ত্রস্ত ও চঞ্চল,

অস্ত্র তোমার যত্নে রক্ষা করে',

শূণ্য গগনে বাণ হানি কিবা' ফল !

মালতী ঘুমায়

বৈশাখী হাওয়ার বেগে তারাগুলি কাঁপিতেছে ক্ষীণশিখা প্রদীপের মত ;

—এখন বাহিরে রাত কত ?

নিশীথের হাওয়া আজ আফিমের নেশার মতন,

(মালতীর চুলগুলি চোখের পলকে চুমো খায়),

বাতাসে আসিছে ভেসে দূর হতে অস্পষ্ট গুঞ্জন,

(ঘুম এসে নয়নে জড়ায়) ।

পত্রের মর্মর আর শোনা যায় বাতাসের স্বর,

নিঃশ্বাসে কাঁপিয়া ওঠে ক্ষুদ্র তারা ক্ষীণায়ু গ্রহর ।

(ঘুম কি ভাঙ্গিয়া যাবে কপালে রাখিলে হিম হাত ?)

—এখন বাহিরে কত রাত ?

প্রেম যুগে যুগে

একরাশ কালোচুল উত্তরোল এ-বাতাসে একেবারে হ'ল এলোমেলো ;

—এবার বৈশাখী ঝড় এলো !

কাঁপিছে দালান কোঠা সমুদ্রের জাহাজের মত,

(বাতাস সরায়ে দিলো লম্বু হাতে বুকের আঁচল)

এখনি ঝাপটে ছিঁড়ে উড়িয়া পড়িবে তারা যত ।

(শুভ্র বাহু, পাটল কপোল) ।

বাতাসে আসিছে ভেসে জল-কণা ঘরের ভিতরে,

সমস্ত আকাশ এসে জানালার কাছে ভিড় করে ।

(নেমেছে চুমার মত ঘুম ওর পলকের ' পর)

—এলো কাল-বৈশাখীর ঝড় !

ঘুমন্ত দৈত্যের পুরী অকালে জেগেছে আজ, রক্ষা নাই, নাই আর গতি,

(জেগে যেন ওঠে না মালতী ।)

পাতালের যত নাগ আকাশে মেলিছে লক্ষ কণা,

(সাবধানে সবগুলি জানালা দিয়েছি বন্ধ করে)

এ কী হলুহুল কাণ্ড ! আকাশে যে গ্রহ রহিলো না !

(আমি আছি বসিয়া শিয়রে) ।

লক্ষ দৈত্য ব্রহ্মাণ্ডে ছিঁড়িয়া ফেলিছে কুটি কুটি,

তুলিয়া ধরেছে তা'রা বিদ্যুতের মশাল দেউটি ;

আমি জানি, কা'র খোঁজে নাগদৈত্য ছুটিতেছে রাগে ।

(ভয়, পাছে মালতী না জাগে) ।

ওই শোনো দুড়ুড়ু লক্ষকোটি নাগদৈত্য ঊর্ধ্বাঙ্গে পলাইছে ত্রাসে,

—মন্ত ঝড় শান্ত হয়ে আসে ।

শাখার উন্মাদ নৃত্য ধীরে-ধীরে হয়েছে মন্থর,

(বিদ্যুৎ গিয়েছে ছুঁয়ে' মালতীকে কম্পিত চুমায়),

ঝাপটে ঝরিছে পাতা, স্বচ্ছ হ'য়ে আসে দিগন্তর,

(অপরূপ ! মালতী ঘুমায় ।)

হুঁপেয় ঘুণে ঘুণে

শক্তি ডানার নীচে পৃথিবীতে লুকাইয়া কোলে
আশঙ্কায় কাঁপে রাত্রি, দু'টি তারা ভয়ে আঁখি খোলে ।
(স্বপ্নে উঠিয়াছে কেঁপে মালতীর আরক্ত অধর)

—শ্রান্ত হয়ে এলো মত্ত বড় ।

মেঘমুক্ত স্বচ্ছাকাশে তারাগুলি ফুটিতেছে শুভ্রদল শেফালির মত ;

—এখন বাহিরে রাত কত ?

দেবতা নিক্ষেপি বজ্র তাড়ায়েছে অমঙ্গল যত,
(পৃথিবী হয়েছে হিম মালতীর ঘুমের লাগিয়া)

এলায়ে পড়েছে রাত্রি নিদ্রাক্রান্তা মালতীর মত,

(আমি আজ থাকিব জাগিয়া) ।

ঘুমায় দূরের বন, ঘুমে বরে কুসুমের জল,

ঘুমায় পাথার-পুরী, ঘুমাইছে ক্লান্ত দৈত্যদল ।

(জাগিয়া উঠিবে না তো ধরি যদি ওর দু'টি হাত ?)

—এখন বাহিরে কত রাত ?



বুদ্ধদেব বসু

এ-ই সব

একবার চোখাচোখি খোলা জানালায়—

অনেক আনন্দ আর খানিক বিস্ময়,

একটু দুরাশা :

তারপর রোদে পুড়ে দিন ক্ষয়ে যায়,

মনের আকাশে ভ'রে স্বপ্নের কুয়াশা ।।

—আর কিছু নয় ।

অনেক তারার মুখ, খানিকটা চাঁদ,

সকল কাজের শেষে ঘুমের সময়—

শান্তির শিশির :

সুখ, দুঃখ, কিছু কথা, বাসনা, বিষাদ,

তারপর অন্ধকার মৃত্যুর রাত্রির ।

—আর-কিছু নয় ।

সাগর-দোলা

ছোটো ঘরখানি মনে কি পড়ে,

সুরঙ্গমা ?

মনে কি পড়ে ? মনে কি পড়ে ?

জানালায় নীল আকাশ ঝরে

সারাদিনরাত হাওয়ার ঝড়ে

সাগর দোলা,

সারাদিনরাত ঢেউয়ের তোড়ে

নাগরদোলা,

আকাশ-মাতাল জানালা খোলা ।

দিগন্ত থেকে দিগন্তে,

দিগন্ত-জোড়া সাগর ভ'রে

ঢেউয়ের দোলা ।

সারাদিন রাত হাজার ঢেউয়ের উচ্চস্বরে

অন্ধ অবোধ হাওয়ার ঝড়ে

কী যে লুটোপুটি ছুটোছুটি ঐ ছোট্ট ঘরে

মনে কি পড়ে ? মনে কি পড়ে ?

কত কালো রাতে করাতের মতো চিরে

ভাঙাচোর। চাঁদ এসেছে ফিরে

তীক্ষ্ণ তারার নিবিড় ভিড়ে

ভাঙন এনে,

কত ক্লেশ রাতে চুপে-চুপে চাঁদ এসেছে ফিরে

সাগরের বুকে জোয়ার হেনে

তোমারে আমারে অন্ধ অতল জোয়ারে টেনে

মনে কি পড়ে ?

কত উদ্ধত সূর্যের বাণে তুমি আর আমি গিয়েছি ছিঁড়ে

কত যে দিনের চূষন টেনে দিয়েছি মুছে

কত যে আলোর শিশুরে মেরেছি হেসে

সেই ছোটো ঘরে মনে কি পড়ে

স্মরণমা,

মনে কি পড়ে ?

জানালায় নীল আকাশ ঝরে

সারাদিন রাত ঢেউয়ের দোলা,

সমুদ্র-জোড়া দিগন্ত থেকে দিগন্তে

সারাদিনরাত জানালা খোলা ।

দম্ব্য হাওয়ার উচ্চস্বরে

তপ্ত ঢেউয়ের মন্ত জোয়ার-জ্বরে

প্রেম যুগে যুগে

কী যে তোমপাড় দাপাদাপি ঐ ছোট ঘরে মনে কি পড়ে
সুরঙ্গমা ?

মনে কি পড়ে

তোমার আমার রক্তে ঢেউয়ের দোলা,

মনে কি পড়ে

তোমার আমার রক্তে হাজার ঝড়ে

কত সমুদ্র তপ্ত জোয়ার-জ্বরে

মনে কি পড়ে ?

কত মৃত চাঁদে এনেছি ফিরিয়ে রাত্রি শেষে

কত বর্ষর শিশু-সূর্যেরে মেরেছি হেসে

ঘন-চুষন-বহুয় কোন অন্ধ অতলে গিয়েছি ভেসে

মনে কি পড়ে

সুরঙ্গমা,

মনে কি পড়ে ?



মণীশ ঘটক

দেবী ত নহ

দেবী ত নহ, তোমারে তবে কেমনে পূজা করি
তোমার মুখে দিব্য প্রভা বৃথাই খুঁজে মরি ।
তোমার আছে দেহ, আছে নিটোল দুটি স্তন
ললিত বাহু, বিশাল উরু তপ্ত পরশন ;
রক্ত-রাঙা দাড়িষের মতোন দুটি ঠোঁটে
যে সুধা করে তাহারি তরে লুন্ধ অলি জোটে ।

আমার দোষ,—জুড়িয়া কর, যাচিয়া পরসাদ
স্তাবককুল-মূলভ হাসি টানিয়া আঁখিপাশে
আসি' নি আমি । মিথ্যা মোহে হানিয়া পরমাদ
পরুষ করে ছলনাজাল ছিঁড়েছি অনায়াসে ;
দেহের সুরা করেছি পান, খুঁজিয়া বিদেহীয়ে
অলীক ফোভে, অতৃপ্তিতে, যাইনি আমি ফিরে !

তোমার মুখে দিব্য বিভা খুঁজি নি কভু ভুলে,
ভুলিতে নারি পেয়েছি যাহা, রেখেছি বৃকে তুলে ।



হুমায়ুন কবির

সাথী

আজি মোর মনে পড়ে একদিন ভেবেছিছু মনে
রচিব এ ধরনীতে আপনার লাগি সযতনে
নিরালা বিরামকুঞ্জ । সংসারের সংগ্রামে যুঝিয়া
ঘটনার নিত্য ঘাত প্রতিঘাতে পরিশ্রান্ত হিয়া
সেথায় আনিব টানি বিশ্রামের লাগি । সুগোপনে
ঝরিবে অমৃতধারা, দিবানিশি বরষিবে মনে
স্নেহের সাস্থনাবাগী । উৎসবের বাঁশী দিবারাতি
বাজিবে সেথায় মৃদু । সেই সুখগৃহে হবে সাথী
পরিজন-স্নেহশ্রীতি, চিস্তাহীন বাধাহীন হাসি ।
নারিকেল কুঞ্জবনে মন্দানিল মর্মরিবে আসি,
কুসুম উঠিবে ফুটি, তরুশাখে গাহিবে কোকিল,
আনন্দে ভরিবে ধরা । উজলিয়া আমার নিখিল
আসিবে প্রেয়সী মম তন্বীবালা রূপসী কিশোরী
পুষ্পসম সুকুমার । তার পানে আপনা বিসরি
রহিব চাহিয়া মুগ্ধ । স্বপ্নভরা তাহার নয়নে
ঝলিবে প্রেমের আলো । প্রাণে মম কোমল গুঞ্জে
ধ্বনিয়া তুলিবে বাণী । সংসারের রণক্লান্ত হিয়া
যখন বহিয়া আনি তার কাছে দেব লুটাইয়া,
সস্নেহ সাস্থনা-বাণী-প্রলেপ পরশে দেহ মন
নিমেষে জুড়াবে মম । এ জীবনে প্রেমের স্বপন

সকলি নামিবে স্বর্গ-সংসারের বঙ্গা অন্তরালে
 প্রেমের স্বপন দেশে কিরীট বলিবে মম ভালে ।
 আজি আর সেই স্বপ্ন নাহি মম নয়নের আগে ।
 চন্দ্রানিশীথের মায়্যা নিদাঘের দীপ্ত রবিরাগে
 মিলাইল অকস্মাৎ, প্রভাতের পুষ্পের অন্তরে
 নিশির শিশিরবিন্দু দিবসের রুদ্র সূর্যকরে
 শুকায় যেমন করি । আজি যবে দেখি আঁখি মেলি,
 তরঙ্গিত সিন্ধুসম এ জীবন উঠিছে উদ্বেলি
 সংগ্রামের আবাহনে । নাহি সেথা স্নেহ ক্রীতি মায়্যা,
 সকলের নয়নের অন্তরালে নাহি স্নিগ্ধছায়া,—
 সেথা মুক্ত নভোতলে বঙ্গা চলে দিবস রজনী
 অনাবৃত নগ্নপথে চলিয়াছে পুরুষ রমণী
 অন্তরের দীপখানি সযতনে জালি । পথ ভরি
 কণ্টকিত তরুলতা, অন্ধকারে উঠিছে গুমরি
 হিংস্র সর্প ফণা মেলি । ক্ষণে ক্ষণে উঠিছে নিশ্বসি
 দুর্মদ মাতাল বায়ু, মেঘপুঞ্জ তিমির বলসি
 শানিত বিদ্যুৎরেখা । সে পথে যে হবে মোর সাথী
 তাহারে চলিতে হবে কণ্টকিত পথে দিবারাতি ।
 তাহারে দাঁড়াতে হবে এ ভুবনে নগ্ন উচ্চশিরে,
 নিঃশঙ্ক অন্তরে পথ চলিবারে নিবিড় তিমিরে
 বিপদ আঘাত সহি । শঙ্কাকুল পথে হাত ধরি
 চাহি একে অপরের মুখপানে মরণ উত্তরি
 দিবস রজনী হবে স্থির-আঁখি চলিতে সম্মুখে ।
 পথের বিপদে সাথী, সহযোগী সব দুঃখসুখে,
 বেদনা-দিনের বন্ধু, অন্তরের মহীয়সী রাণী
 দুর্বল নিরাশা মাঝে জাগাইবে আশ্বাসের বাণী ।

তৃপ্তি

আমার এ প্রেম সখি শুধু নিবেদন ।

নাই বা জানিলে তুমি আজি মোর মন

রচিছে তোমাতে ঘেরি সোনার স্বপন ।

তোমাতে হেরিতে শুধু চাহি দূর হতে,

চালিতে প্রাণের শ্রীতি আনন্দের স্রোতে

অশ্রু-হাসি মুখরিত তোমার জগতে ।

আমার হৃদয়ে যদি ব্যথা কভু বাজে

সে দুঃখ গোপনতম রবে চিত্তমাঝে,

আসিব তোমার কাছে উৎসবের সাজে ।

আসিবে ঘনায় যবে বিদায়ের বেলা

লুকায়ে হাসির তলে বেদনার খেলা

সঙ্ক্যার আঁধার পথে ফিরিব একেলা ।

তোমার আনন্দমাঝে মোর অশ্রুমালা

ঝলিবে মুকুতাসম ভব কণ্ঠে বালা ।



শিবরাম চক্রবর্তী

বায়না

সময় চলেছে ছুটে ঘূর্ণাবেগে শ্রোতের মতন—
চলো না বেড়াই ততক্ষণ !

কোথায় বেধেছে যুদ্ধ রাজায় রাজায়
ভূগোল ও ইতিহাস পালটিয়ে যায় ।
সময়ের রক্ত ঝরে ক্ষতের মতন ।
দূরের তারার ইসারায়
তাদের এড়াই ততক্ষণ ।
তোমার শীতল হাতে সৃময় নিখর,
ইতিহাস ভূগোলের থেমে গেছে ঝড়,
জীবন স্থবির ।
পৃথিবী এখানে এসে হলো বুঝি শেষ ।
তোমার নয়ন দুটি অতল গভীর—
সময় সেখানে রহে স্থির :
পৃথিবী এখানে নিরুদ্দেশ ।
কালো সে গহন তলে করি না গাহন—
নিজেরে হারাই ততক্ষণ ॥

ভূমি

কোনু আকাশে কত লক্ষ আলোকবর্ষ আগে
ফুটেছিল একটি যে নীল তারা,
ছুটেছিল তাহার আলো নিজের অমুরাগে
কোথায় আশ্রহারা !

প্রেম যুগে যুগে

সেই আলো কি শেষে
হারিয়ে গেল তোমার চোখে এসে ?

সেই হারানো আলোর খোঁজে—সেই নীলিমার দ্যুতি
ধরতে কোনো কালে
আলোর পাথার সাঁতার দিয়ে আমার স্বর্গচ্যুতি
মাটির মায়াজালে—
সেই-আলো হয় নাই যদি হয় সাথী,
নেই-আলো হয় হাজার তারার বাতি ।

একই সাথে যাত্রা শুরু করেছিলাম কবে
সূর্য এবং আমি ;
ধূলার পথে আমার চলা, তাহার চলা নভে—
ছড়িয়ে দিবস-যামী ;
যাহার তরে চলেছিলাম আমরা একা একা,
আজকে পেলাম দেখা ।

এই ক্ষণটিই অনন্তক্ষণ, এইখানটিই শেষ,
এই তুমি সেই তুমি ;
তোমার খোঁজে সারা আকাশ আমায় নিরুদ্দেশ—
ভূমা হলেন ভূমি !
তোমার ধরার লাগি,
ভুবনেশ্বর, সূর্য কাঁদে আমার অধর মাগি' ॥



জসীম উদ্‌দীন

কাল সে আসিবে

কালকে সে নাকি আসিবে মোদের ওপারের বালুচরে,
এপারের ঢেউ ওপারে লাগিছে বুঝি তাই মনে করে ।

বুঝি তাই মনে করে,

বাউল বাতাস টানাটানি করে বালুর আঁচল ধরে ।
কাল সে আসিবে, মুখখানি তার নতুন চরের মত,
চখা আর চখী নরম ডানায় মুছায় দিয়েছে কত ।
চরের চাষীর ধানের ক্ষেতের মতই তাহার গা,
কোথা বা হলুদ, আবছা হলুদ, কোথা বা হলুদ না ।

কাল সে আসিবে হাসিরা হাসিয়া রাঙা মুখখানি ভরি,
এপারে আমার পাতার কুটিরে আমি কিবা আজ করি ।
কাল সে আসিবে, ওই বালুচরে, এপারে আমার ঘর,
তার পরে নদী—ঘাটের ডিঙাটি কাঁপে নদীটির 'পর ।
কাল সে আসিবে, নোঙর ছিঁড়িল, ছলিছে নায়ের পাল,
কারে হারিয়েছি, কারে যেন আমি দেখি নাই কত কাল ।
ওপারেতে চর বালু লয়ে খেলে, উড়ায় বালুর রথ,
—ওখানে সে কাল দুটি রাঙা পায়ে ভাঙিয়া যাইবে পথ ।

কাল সে আসিবে ওই বালুচরে, আমি কি আবার হায়,
আসমান-তারার শাড়ীখানি আজ উড়াব সারাটি গায় ?
রাম-লক্ষ্মণ শব্দ দু'গাছি পরিব আবার হাতে,
খোঁপায় জড়াব কিংক-কলি কাজল চোখের পাতে ;

প্রথম যুগে যুগে

গলায় কি আজ পরিতে হইবে পদ্মরাগের মালা,
কানাড়া ছান্দে বাঁধিব কি বেণী কপালে সিঁদুর-জালা ?
কাল সে আসিবে, মিছাই ছিঁড়েছি আঁধারের কালো কেশ,
আজকের রাত পথ ভুলে বুঝি হারান উষার দেশ ।

ওই বালুচরে আসিবে সে কাল, তার রাঙা মুখে ভরি,
অফুট উষার সোনার কমল আসিবে সোহাগে ধরি ।
যে আসিবে কাল, গলায় পরিয়া কুসুম ফুলের হার,
দুখানি নুপুর মুখর হইবে চরণে জড়ায় তার ।
মাথায় বাঁধিবে দুখালীর লতা কচি সীম পাতা কানে,
বেণুর অধর চুমিয়া চুমিয়া মুখর করিবে গানে ।
কাল সে আসিবে, রাই-সরিষার হলুদী কোটার শাড়ী,
মর্টার বোনেরে সাথে করে যেন খুলে দেখে নাড়ি' নাড়ি' ।

কাল সে আসিবে ওই বালুচরে, ধারে তার এই নদী,
তারি কূলে মোর ভাঙা কুঁড়ে ঘর বহুদূরে নয় যদি ।
তবু কি তাহার সময় হইবে হেথায় চরণ ধরি,
মোর কুঁড়ে ঘর দিয়ে যাবে হায় মণিমাণিকেতে ভরি ।
সে কি ওই চরে দাঁড়ায়ে দেখিবে বরষার তরুগুলি ?
শীতের তাপসী পারে বা স্মরিছে আভরণ গা'র খুলি ?
হয় তো দেখিবে, হয় দেখিবে না, কাল সে আসিবে চরে,
এপারে আমার ভাঙা ঘরখানি, আমি থাকি সেই ঘরে ।

যারে আঘাত হানিলরে

ও তুই যারে আঘাত হান্‌লি রে মনে সে জন কি তোর পর,
সে তো তোরি তরে কেন্দে কেন্দে বেড়ায় দেশান্তর ;
রে বন্ধু !

তোরি তরে সাজাইলাম বন-ফুলের ঘর,
রে বন্ধু মনফুলের ঘর,

প্রেম যুগে যুগে

ও তুই ভোমর হ'য়। হানলি কাঁটা সেই না ফুলের 'পর ;
রে বন্ধু !

এক ঘরেতে লাগলে আগুন পোড়ে অনেক ঘর,
মনের আগুন মনই পোড়ায় নাই কোন দোসর ;
রে বন্ধু !

আগে যদি জানতাম রে তোর রূপে আগুন জলে,
আমি রূপ খুইয়া আগুনের মালা পরতাম নিজ গলে ;
রে বন্ধু !

চিতার অনলে কাঁপ দেয় যেই জন,
ও তার দেহও পোড়ে মনও পোড়ে, পোড়ে তার ক্রন্দন ;
রে বন্ধু !

রূপের আগুন মনেই লাগে, লাগে না কার গায়,
ও সে মনে মনেই মন জালায় কেউ নাহি টের পায় ;
রে বন্ধু !

তীর যদি ঝেড়ে গায় তাও তো তোলন যায়,
ও তোর কথার আঘাত কোথায় লাগে কেউ নাহি টের পায়,
রে বন্ধু !



গোলাম মোস্তফা

‘তোমাতে যে আমি করেছি রূপসী

—কবির দৃষ্টি দিয়া !’

হে মোর মানসী প্রিয়া !

তোমাতে যে আমি করেছি রূপসী

কবির দৃষ্টি দিয়া !

এত সুন্দর ছিলে নাকো তুমি আমার দেখার আগে,

ছিলে বনফুল পাতায় ঢাকা—সে জানি,

সহসা যেদিন হেরিছু তোমাতে নবপ্রেম-অনুরাগে

সেই দিন হ’তে হ’লে তুমি ফুলরাণী ।

আমি করিলাম তোমার নয়নে নূতন আলোক-পাত

ধরিলাম তুলে সকলের সন্মুখে,

আমি কহিলাম : ‘তুমি সুন্দর !’—তাইত অকস্মাৎ

হেরিল জগৎ নবরূপ তব মুখে ।

তুমি সুগন্ধ হেনার গন্ধ অন্ধ কুঁড়ির মাঝে

বন্ধ হইয়া ছিলে মুক বেদনায়,

ছন্দ দোহল আমি সমীরণ—আমি না আসিলে সাঁঝে

ছড়াত কে তব সৌরভ-সুধমায় !

কাঁচের সঙ্গে মনিসম তুমি বিকসিত একদরে

জহুরী আমিই দিয়াছি তোমাতে মান,

তোমার রূপের রঙীন শরাব শুকাইত অনাদরে,

না যদি থাকিত তৃষিত আমার প্রাণ !

হ'লেই বা তুমি স্রষ্টার গড়া সৃষ্টি সে অনুপম,
আমি যে দ্রষ্টা—দৃষ্টি আমার দান,
স্রষ্টা ও তার সৃষ্টির চেয়ে দ্রষ্টা সে নহে কম,
দৃষ্টি অভাবে সৃষ্টি যে হয় ম্লান !

তোমারেও আমি তেমনি করিয়া প্রেমের পরশ দিয়া
ফুটায়ে তুলেছি অপরূপ সুসমায়,
তোমার রূপ যে ধন্য হ'য়েছে, ওগো মোর দিল-পিয়া,
কবির গভীর রূপসুধা-পিয়াসায় ।
রূপ আসিয়াছে শুধু কবিদের প্রাণের খোরাক লাগি'
আসে নাই সে ত দুনিয়ার প্রয়োজনে
কবি তাই যে গো রূপ-মাধুরীর চিরদিন অনুরাগী—
রূপও ফিরে তাই কবির অশেষণে ।
রূপসৃষ্টির আদর ছিল না কবির আসার আগে
সৃজন করিল বিধাতা তাই যে কবি,
কবি এসে দিল সন্ধান কোথা রূপের মাধুরী জাগে,
মিশিল বিখে কবি যে রূপের নবী !

তুমি ভাবিতেছ—মিথ্যা এ-কথা, মিথ্যা এ-গৌরব
রূপের পূজারী কবি শুধু একা নয়,
ফুল দিতে পারে সবার প্রাণেই আনন্দ-সৌরভ
রূপের পূজারী ভরা যে ভুবনময় ।
নয়, তাহা নয়, সবাই রূপেরে বাসে নাকো সখি ভালো,
মাটির দরেও রূপ যে বিকিয়ে যায়,
ফুল কিনে নিয়ে করে সবে দেখি উৎসব জমকালো
ফুল দিয়ে আজো চলে যে গো ব্যবসায় ।

প্রেম যুগে যুগে

যেমন করিয়া বুল্‌বুল্‌ দেখে গোলাবের রাঙা মুখ
তেমন করিয়া দেখে কিগো কেহ আর ?
যে-আবেশ মাখা স্বপন-মুখেতে ভ'রে যায় তার বুক,
এই দুনিয়ায় তুলনা কোথায় তার !

আমিও যে সখি তেমনি করিয়া গভীর চাহনি দিয়া
দেখি প্রাণ ভরি' তোমার ও-রূপরাশি,
আমার সৈ-চাওয়া নিঃশেষ হয়ে যায় নাকো মিলাইয়া
তোমার দেহের মাধুরীর তটে আসি' ।
সে চাহনি যোগো চ'লে যায় দূরে সীমারেখা ভেদ করি'
উড়ে যায় কোন্‌ অনন্তে আঁখি-পাখী,
সসীমের মাঝে অসীমের যেন ছায়া পড়ে সুন্দরী,
যত দেখি, তবু দেখার রয় যে বাকী !

যেন দুই চোখে কুলায় না মোর, আরো চোখ চাহে প্রাণ,
হেরিতে তোমার ধরা-নাহি-দেওয়া রূপ,
ব্যাপ্ত হইয়া ছেপে যায় যেন তোমার মুরতিখান—
বাতাসে যেমন মিলায় গন্ধ-ধূপ ।

তুমি যেন এই ধরার ধুলার নহ নর-নন্দিনী
তুমি যেন কোন্‌ অজানা দেশের মেয়ে,
পথ ভুলে এই ধরণীর তলে হ'য়ে আছ বন্দিনী
চির রহস্য আছে তব মুখ ছেয়ে ।
তোমার ও-মুখ অসীমের যেন একখানি বাতায়ন,
এপারে দাঁড়ায়ে ওপারে দৃষ্টি চলে,
তোমার মুখেতে ছায়া ফেলে যেন নন্দন-কুলবন
মূর্ত্ত স্বপন তুমি যেন ধরাতলে !

হৃদয়ে যুগে যুগে

তোমার রূপেই এমনি করিয়া দেখেছি আমি যে প্রিয়া,
মিলিবে না কভু তুলনা সেই দেখাব,
যে-ভালো তোমারে আমি বাসিয়াছি—সেই ভালোবাসা দিয়া
তোমারে কেহই চাহিবে না কভু আর !



প্রভাতমোহন বন্দ্যোপাধ্যায়

ফাগুনে বাদল

কিছু করিব না কাজ, .

তোমায় আমার মুখোমুখি হ'য়ে শুধু ব'সে র'ব আজ ।

কহিব না কথা, গাহিব না গান, মেঘল্লান দিবালোকে

শুধু চেয়ে র'ব তব মন প্রাণ ভরিয়া দু'জোড়া চোখে ।

আকাশ আজিকে ঘনায় এসেছে ধরার বুকের কাছে,

বহু দিবসের সঞ্চিত কথা কানে কানে কহিয়াছে ।

চৌদিকে তাই শুভদৃষ্টির লজ্জা-বসন-সম

নিতল শীতল ছায়া নামিয়াছে—আজি সখি,—গাঢ়তম ।

নিখিলে লেগেছে দিবসে দুপুরে রূপার কাঠির ছোঁয়া,

সজল সচল শুভ্র তিমিরে ধরণী হয়েছে ধোঁয়া ।

ভুলোকে দুলোকে ব্যথায় পুলকে হ'য়ে গেছে একাকার ।

দিবসে নিশীথে দিশিতে দিশিতে কোনো ভেদ নাহি আর ।

ভুবন ভরিয়া তুলিছে কেবল একখানি যবনিকা :

এ আঁধারে প্রিয়া, তুমি এস নিয়া তোমার রূপের শিখা ।

শুধু হাসিমুখে চেয়ে থাকো তুমি, আমি শুধু চেয়ে দেখি ।

দেবতা আজিকে কাজ তুলিয়াছে, তুমি কাজ করিবে কি ?

না, না, কাজ নয়, কোনো কাজ নয়, কোনো কথা শুনিব না ;

শুধু তব কাজ ব'সে থ'সে আজ স্বপনের জাল বোনা ।

বাহিরে ঝরিছে ঝরঝর ধারা, বাতাস ফিরিছে গাহি' ;

কাজ করিবার অবসর আর নিখিলে কোথাও নাহি ।

আজি কমলার কল্যাণে বাজে বাগ্‌বাদিনীর বীণা :

ভীরা আলো কাঁপে মুদিত নয়নে আঁধার-কণ্ঠলীনা :

প্রেম যুগে যুগে

হেন দিনে আর তুলোনা তোমার কঠোর কাজের বুলি ;
ওগো, দয়া ক'রে ক্ষণেকের তরে সব কিছু যাও ভুলি ।
ঘর সংসার, আহাৰ বিহার, আচার বিচার যত
ঘন বর্ষায় যাক্ ভেসে যায় যদি বারেকের মতো ।
জড়জীবনের যত জটিলতা,—যত বাধা ছোটো বড়ো—
জন্মের মতো হোক অপগত,—ওগো, তুমি দয়া করো !
ঐ বাতায়নে বোসো আনমনে আলুলিত কুন্তলে,
কুসুম সুরভি ভাসিয়া আশুক বর্ষাশীকর জলে ।
বীণাখানি তব বুকে বাজিবে কি গুঞ্জর তানে বালা ?
নিশীথ-নিবিড় আকুল অলকে দুলাবে বকুল মালা ?
নীল নিচোলের আছে প্রয়োজন ? ময়ূরীর কেকারবে ?
কালো নয়নে কি কাজল না দিলে গুরুতর ত্রুটি হবে ?
হয় যদি হোক, আমার এ চোখ কোনো দোষ গুণ ধরি'
বিবাদ বিচার করিবেনা আর কারো সাথে সুন্দরী ।
নীপশাখে আজ নাই বা বুলিল গিলনের ফুলডোর ?
নাই হ'ল গাওয়া কাজরীর গান অঙ্গনতলে মোর ?
আজি অভিসার দিবসে নিশার ভুলিয়া চন্দ্রতারা,
ঐ দেখ তারে ডুবা লক্ষ্মায় আকাশের আঁখিধারা !
আজি ত্রিভুবনে কোনো কিছু নাই ক্ষমা না পাবার মতো :
মোরা পারিবনা ক্ষমা ক'রে নিতে মোদের দীনতা যত ?
প্রকৃতি আজি যে সুরীতি ভুলেছে,—সমালোচনার আঁখি
যেথা যত ছিল—নিজেরে বাঁচাতে সে তাই দিয়েছে ঢাকি' ।
নিখিলে কোথাও কোনো কেহ নাই, শুধু তুমি আমি আজ ।
যা করিবে তাই মধুর মানিব, যা পরিবে তাই সাজ ।
আহা আহা ওকি ! কোথা যাও সখি ? ঘরে বুঝি ডাকে কারা ?
বাহিরে কে ডাকে শুনিতে পাওনা ? তাহারে দিবে না সাড়া ?
ভুবনে ভুবনে ধনিছে যে ডাক জলদমলে আজি,—

প্ৰেম যুগে যুগে

যে ডাকে উঠিছে শিৰায় শোণিত বীণার মতন বাজি,—
যে ডাকে সহসা উষর ধূসর পুরানো জীবনখানা
নিমেষে ভরিল পুষ্পপ্রবালে গন্ধে বরণে নানা,—
সেই ডাক তুমি স্বীকার করিতে কেন ভয় পাও অগ্নি ?
ক্রকুটিতে তব ক্রটি র'য়ে গেল, জানোতা ছলনাময়ি ?
রাশি রাশি কাজ থাকে থাক আজ, যা বলে বলুক যেনা ।
অনেক হয়েছে মানুষেরে বধি' বিধিবিধানের সেবা ।
চিরদিবসের যে নারী পুরুষ স্বজনে সমাজে ঢাকা
সংসার-রথচক্রে-পেষণে লুটা'ল রক্তমাখা,—
দেবতা মানব সবারে তুমিয়া,—মিটায়ে সবার দাবি
যাহারা কাটা'ল শিষ্টজীবন কা'রা কি ভাবিবে ভাবি,—
যৌবনে জরা বরি' নিল গুরু-পরিজন মেঘে ঢাকি,—
আজি ফাল্গুনে পূর্বপবন তাদের ফিরিছে ডাকি' ।
আজিকে তাদের ছুটি দিতে হবে,—অবাধ অগাধ ছুটি,
আজ বাধা দিলে সহিবেনা আর, সব বাধা যাবে টুটি' ।
কাজের সময় অনেক মিলিবে, জীবন কাটিল কাজে ;
হেন বর্ষণ-বিধুর ফাগুন বাবে বারে আসে না যে ।
দয়া করো,—কথা রাখো !
দেবতা আজিকে সদয় হয়েছে, প্রিয়ে, তুমি হবে নাকো ?



বান্দে আলী

তোমার মনের ভেঙেছে ঘুম

মোর জীবনের বিজন গহনে

কে তুমি বাজালে বীণা

‘মনে পড়ে মোর কবে শুনেছিলুম

শুর যেন তার চিনা ;

ছিলুম আনমনে বসি বাতায়নে

তোমাবে হেবিনু পথে

গুঞ্জবি গীতি তরুণী পথিক

চলেছো অকণ রথে ।

ভাবি আর চেয়ে দেখি বার বার

কবে যেন তুমি ছিলে আপনার

তোমাতে আমাতে আজিকে হে প্রিয়া

নহে কভু পবিচয়,

কালে আর কালে জনমে জনমে

ছিলুম আমি তোমাময় ।

তোমার মনের ভাঙিয়াছে ঘুম

মোর মৃদু পরশনে

তাই বুঝি তব বেপথু পরাণ

শিহরায় ক্ষণে ক্ষণে,

তুমি বাজায়েছ বীণাখানি তব

আমি গাহিয়াছি গান

একদা দু’জনে ছিনু পাশাপাশি

আজি মরু ব্যবধান ।

হৃদয়প্রেম যুগে যুগে

তুমি ভুলে গেছ সে দিনের কথা
মোর মনে তাহা আনে আকুলতা
নিরঞ্জে আজ সপ্ত সাগর
বুকে মোর উথলায়,
জীবনের স্রোতে যারা এলো ভাসি
তারা আজি নাহি হয় !

বাতাসে বাতাসে অশেষ হরষ
বঙ লাগিয়াছে নভে
কুসুমের পাতায় জেগেছে কামনা
আজি মধু উৎসবে,
বন-বীথিকার আঙিনা আজিকে
সবুজে গিয়াছে ভরি
আজ তুমি এসো হে প্রিয় বন্ধু
সুব তোমো গুঞ্জবি ।
সেদিন তোমাবে যে কথা বলিনি
সেই সুরে তব বাজে কিঙ্কিনী
হেথা দুই জনে বসি মুখোমুখি
চোখে চোখে রবো চেয়ে—
তুমি কাছে এসো আমার মনের
আঙিনার পথ বেয়ে ।



মহীউদ্দীন

পৃথিবীর গান

অশ্বিন এসেছে প্রিয়া...

ছুমিতো তো আসনি !

শিশিরের হিম-গন্ধ

আকাশের নীলা !—

প্রভাতের প্রাণভরা কাঁচা রোদ—

হরিতে-লোহিতে-নীলে রোমাঙ্কিত দিন—

কাক-কৃষ্ণ বনচ্ছায়া,

শান্ত তকশ্রেণী—

তৃণ-ছাওয়া বনতলে শালিখের নাচ !

দূর নভে দীর্ঘচঞ্চু হোয়াকের ঝাঁক—

রক্ত মেঘ,

অস্ত সূর্য,

হলুদে ফুল

পীত পৃথ্বী...

নামে শান্তি সঙ্ক্যার সাস্বনা !...

ঘন-বন-বৃক্ষ চূড়ে বাঁকা চাঁদ

কম্পমান তারার ঝিলিক !

এলো তারা—সবি ফিরে এলো...

কৈশোরের স্বপ্ন এলো,

ফুল এলো

প্রেম যুগে যুগে

পাখী এলো,
সবি এলো...
এলে নাক তুমি !

তুমি শুধু এলেনা' জীবনে !
শত শত আয়োজন আনন্দের মাঝে—
গোপনে
দুঃসহ এক জ্বালাময়ী আগুনের মত—
বিরহের দাবানল
জ্বলে মোর মনে ।

তুমি তো আসনি প্রিয়া !
এত দুঃখ,
এত ব্যথা
এত যে তপস্বী মোর—
এতো ভালোবাসা ।
এত করে দিন রাত্রি
সমস্ত হৃদয় দিয়ে চাওয়া...
খুচালন। তোমার বিচ্ছেদ !

জীবনে, কর্মের পথে ..
সংগ্রামের উচু নিচু দুর্গম পাহাড়ে প্রাপ্তে,
কঙ্করে
কাদায় পাঁকে—
খররোড়ে,
অন্ধকারে,

হুগে হুগে হুগে

শিলাবৃষ্টি,

ঝড় ঝঞ্ঝা

দুর্যোগ প্লাবনে

আর

সংঘাত আঘাতে অপমানে,

অবহেলা

লাঞ্ছনায়

অনাদরে অবজ্ঞায়,

বিদ্বেষে হিংসার তাপে—

পুড়ে গেছে মুখখানি... !

আগুনে গিয়েছে ঝলে—

ছিল মোর যা কিছু জৌলুস !

তবু ভাসে শাদা মেঘ, ..

জ্যোছনার রাত

দূর নদী,

স্তব্ধ দিক,

সিঙ্হুর আহ্বান... !

কোথা যেন আকাশের তটে—

ভেঙে পড়ে পৃথিবীর গান !



সুধীন্দ্রনাথ দত্ত

. মহানিশা

মরণ, তো তুমি আসিবেই একদিন,
এসো তবে আজ বেগে ।
দশমীর চাঁদ আকাশে তন্দ্রাহীন
ভর করে আছে বীতবর্ষণ মেঘে ;
সুদূরের হাওয়া কোথা নারিকেল বনে
কার আহ্বান নিবিদ ভাষায় ভণে,
রজনীগন্ধা রয়েছে কী প্রয়োজনে,
প্রচুর পরাগে জেগে ;
শুধেছে বিধাতা চির জীবনের ঋণ ;
এসো, হে মরণ, এসো আজ দ্রুত বেগে ॥

আজি প্রেয়সীর স্মরভিনিবিড় কেশে
দেখেছি তোমার ছায়া ;
চিনেছি যে তার অযাচিত আশ্লেষে
কত বিমোহন তব বিরতির মায়্যা ।
এখনো শ্রবণে ধ্বনিতেছে অবিকার
গাঢ় কণ্ঠের নিরুপাধি বঙ্কার ;
স্মৃতিসঞ্চিত ঘন চুষনে তার
এখনো শিহরে কায়্যা ;
এখনো জগৎ লুটে মোর পাদদেশে ;
ঘনাও, মরণ, এই বেলা তব ছায়া ॥

দুঃখের মুখে মুখে

কি জানি, হয়তো কেবলই স্বপন দেখি,
করাবে সকলই প্রাতে ।

প্রগল্ভ পণ অনাহত রহিবে কি
প্রতি দিবসের প্রচণ্ড সংঘাতে ?
দেবদুহিতার ধূল্যমাখা খেলাঘরে
ভাঙা পুতুলি পড়ে রবো অনাদরে,
তমু লোভী কাল দৈব কোপের ডরে
সবে না আমারে হাতে ।
মদির নেশায় ভিক্ষুরে অভিষেকি,
অনুশোচনায় জলিবে না সে কি প্রাতে ?

তার চেয়ে ভালো আজি তব রসায়নে
আদি ভূতে ফিরে যাওয়া,
গুরু শরীর শাস্তত বিকীরণে
খোলা বাতায়নে গুপ্ত সে-মুখে চাওয়া,
মৃদুল মলয়ে বর তনুখানি ঘিরে
কত্ন কামোদে কামনা জানানো ধীরে,
ধূলিরেণু হয়ে ঢেকে সারা পৃথিবীরে,
তারণ চরণ পাওয়া,
ঈর্ষা জাগায় পুরুষবাদের মনে
এ মহানিশায় সনাতনে মিশে যাওয়া ॥

দুঃসময়

মোদের সাক্ষাৎ হলো অশ্লেষার রাক্ষসী বেলায়,
সমুদ্রত দৈবদুর্বিপাকে ।—
আধোজাগা অগ্নিগিরি আমাদের উদ্ধত হেলায়
সাল্ল স্বরে কী অনিষ্ট হাঁকে ;

প্রেম যুগে যুগে

বিচ্ছেদের খর খড়গ কোথা যেন শানায় অনুরে,
তারই প্রতিবিম্ব হেরি মুহুমূহ আকাশ মুকুরে,
বজ্রধ্বজ প্রভঞ্জন রথ রাখি অলক্ষ্যে, অদূরে
ফুৎকারিছে দিগ্বিজয়ী শাঁথে ;
আসে নাই সন্ধিলগ্ন, অমা তবু কবরী এলায়
বৈধব্যের অকাল বিপাকে ॥

জানো না কি, নিঃশঙ্কিনী, যদিও বা সত্য হয় আজ
আমাদের অবোধ স্বপন,
যদিও মার্জনা করে ঈর্ষাপর ক্রীবের সমাজ
যুগলের অমর্ত্য মিলন,
তথাপি নিষ্ফল সবই ।—আমাদেরই দুর্মর অতীত
অতর্কিত ভূকম্পনে বিনাশিবে বিশ্বাসের ভিত ;
প্রেতাকুল ব্যবধানে সঞ্জীবনী বাহুর নিবীত
ছিন্ন, ভিন্ন হবে অনুক্ষণ,
অহেতুক অপব্যয়, অন্তর্চিত অর্চনার লাজ
আক্ষান্নিবে স্তব্ধ দুঃস্বপন ॥

তবুও ফেরার পথ বন্ধ হয়ে গেছে একেবারে,
কান্ন-মনে তোমারেই চাই ।
জানি স্বর্গ মিথ্যা কথা, তথাপি অলীক বিধাতারে
রাত্রি-দিন মিনতি জানাই ।
উন্মথিত হৃদয় সিঙ্ঘ সৃজনের প্রথম প্রভাতে
অভূজিত সুধাভাণ্ড অপিলাম মোহিনীর হাতে ;
মৃত্যুর মাধুরী কিন্তু বাকী আছে, এসো আজ তাতে
আমাদের অমরা সাজাই ।

হৃদয়ে যুগে যুগে

অসাধ্যসিদ্ধির যুগ কিরিবেনা, জানি, এ-সংসারে ;
তবু রুদ্ধ ভবিষ্যতে চাই ॥

আঁধার ঘনায় চোখে, তুমি ছাড়া কেউ নেই পাশে,
অন্তরীক্ষে জমে বিভীষিকা ।

লুদ্ধ ভবিতব্যতারে রুদ্ধ করো দৃপ্ত পরিহাসে,
হাতে হাত রাখো, সাহসিকা ।

তোমার মাঠে শুনে হয়তো বা লজ্জিত নিয়তি
ফিরাবে, অভ্যাস ভুলে, ঐকান্তিক সময়ের গতি,
মৃত্যুর বিক্ষিপ্ত জাল দিবে বুঝি মোরে অব্যাহতি,
শাপমুক্ত হবে অহমিকা ;

নবজাত ভগবান বিরচিবে কৃতজ্ঞ উল্লাসে
আমাদের নব নীহারিকা ॥



বিষ্ণু দে

প্রেমের কবিতা

মধ্যবয়সী, তবুও তনু তোমার
আগ্নিনআলো ছড়ায় আমার মনে ।
ফেলে দিই ভয় ফেরার পীত বোমার,
জীবন ঘনায় তোমার আলিঙ্গনে ।
তোমার বাহুতে আমার জীবনস্মৃতি
দ্বৈত রচনা, গত-অনাগত প্রীতি ।

উপমা তোমার খুঁজি নিকে। আকিতেনে
এলেওনোরে তো সহজিয়া ক্রবাতুর,
হেলেন-কে চাওয়া উদ্বায়ু ফাঁকি জেনে
দেহ-মনে মন-জীবনে ভেদ-আতুর
রোমাঞ্চগান করিনি, প্রেম তোমার
অলকনন্দা, অনন্তগতি তার ।

একাগ্র তাই সন্তা, জীবনতটে
বয়ে' যায় দেখি তোমারই সে মহানদী,
আমার প্রাণের অশ্বখে বা বটে
অচেনা পাখির গান শোনা যায় যদি,
গঙ্গোত্রীতে জেনো তার নীল বাসা—
কিন্তু হয়তো আনে সাগরেরই ভাষা ।

নয় খেয়াল

কে জানে এল হঠাৎ প্রেম বুঝি
আজকে যবে চরম প্রাণে যুঝি,
দেশ বিদেশে মিতালি আজ খুঁজি
ভারতে দৌছে বিশ্বজনতায় ।

হয়তো প্রেমে, হয়তো পথচলায়,
চেনাশোনায়, প্রাণের কথা বলায়
শ্রাবণমেঘস্বপ্ন আনো গলায়,
হৃদয় ভরো পথিক মমতায় ।

তোমার ঘরে আমার নেই চাবি,
তোমার মনে জানি নেইকো দাবি,
অতীত যেথা বর্তমানে ভারী
সেখানে শুধু ক্ষণিক আনাগোনা ।

নানানু কাজে তোমার কাটে দিন,
প্রাত্যহিকে আমার তৃষাহীন
জীবন চলে, অবকাশের ক্ষীণ
গলিতে ছড়াও তুমি সোনা ।

সোনালী হাসি, সোনালী গানে ভরি
তাই বিরল সন্ধ্যা, সহচরী,
কাজে অকাজে তোমাকে আজ স্মরি
মরণজয়ী প্রাণের মমতায় ।

ঐ প্রেম যুগে যুগে

হয়তো এই আছতি শেষ হ'লে,
নবসমাজ গড়ার রলরোলে,
শান্তি যেথা সমান সুখ খোলে
হারিয়ে যাব সেখানে জনতায় ।

সেখানে নেই বোমাতাড়ানো দেয়াল,
পথিক প্রেম মৈত্রী, নয় খেয়াল ॥



সুকুমার সরকার

সে শুধু চাহিয়াছিল

কথা কহে নাই, সে শুধু চাহিয়াছিল

আমার পানে,

তবু সে চাহনি কি গীতি গাহিয়াছিল

‘কেই বা জানে !

মোর পরশন প্রবাহের হিল্লোল

তম্বর তীরে

বরণ করেনি, ফিরে এল কল্লোল

নয়ন-নীরে ;

একি অভিমান একি অনুরাগ নব

মরমে তার

হ’লো না কি তবে হৃদয়ের বৈভব

সরম-পার !

আধাবিকশিত যুথী কি তাহার হিয়া

গোপনে বুঝি

ফুটি ফুটি ক’রে ওঠে না প্রফুটিয়া

মোরেই খুঁজি !

সে কি সোহাগিনী আমার সঙ্ক্যারাগী,

প্রাতের আলো,

লুকিয়ে রেখেছে আঁধার আঁচল টানি

ফুটাবে না লো !

সে কি গো ফল্গু মান-বালুকার নিচে

বহিছে মূক,

আপন সোহাগে আপনি উচ্ছ্বসিছে

উথল সুখ !

প্রেম যুগে যুগে

সে কি দখিনের সৌখিন মদ্রবাস
কিছু না দেবে,
আধেক ছোঁয়ার বেদনার মহিমায়
কেবলি নেবে !
সে কি গো কৃষ্ণতিথি পঞ্চমী-চাঁদ
মদ্রির হেসে
আমারে ধরিতে পাতি বন্ধিম ফাঁদ
পালাবে শেষে ?



অজয়কুমার ভট্টাচার্য

এই তো আমার জয়

এই তো আমার জয়

তোমার হাসির অন্তরালে

অশ্রু-ফুটে রয় ।

দাওনি তুলে হাতে কিছু

যাবার পথে চাওনি পিছু

আজকে তোমার গানের বীণা

আমার কথা কয় ।

শুক্রাতিথির প্রহরগুলি

টাদের তরী বেয়ে

নীরবতায় মিলিয়ে তোল

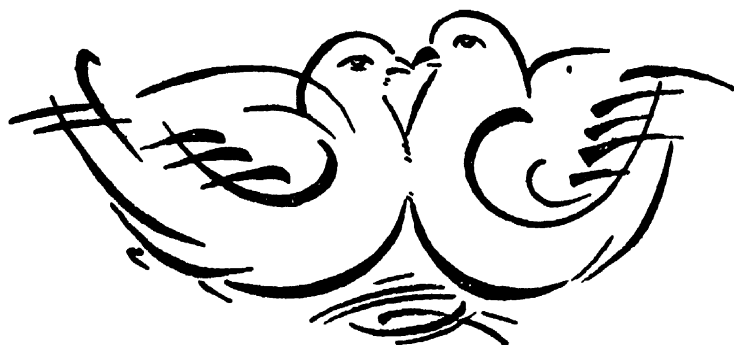
দেখনি হায় চেয়ে ।

আনমনা গো খোলনি দ্বার

তাই যে আমি স্বপ্নে তোমার

আজ বিরহের অন্ধকারে

নূতন পরিচয় ।



সঞ্জয় ভট্টাচার্য

প্রতীক্ষা

তোমাকে পেয়েছি, জানে পূর্ণিমার অনেক আকাশ
অনেক ফুলের গন্ধ । তবু যেন ছিল অবকাশ
তবু থেকে গেছে দূরে কতো কথা, পৃথিবী কঠিন,
তোমাতে আমাতে যারা নিবিড় হয়নি কোনদিন ।

তোমাকে পাইনি কাছে মধ্যাহ্নের সূর্যের আকাশে—
প্রখর মাটির রুদ্ধ আদিগন্ত দীর্ঘ দীর্ঘশ্বাসে—
যে মাটিরে দিতে হবে সবুজের অগাধ আশ্বাস
ফসলের কিশলয়ে জীবনের স্বচ্ছ প্রতিভাস ।

স্বৈদজল আছে জানি, স্বৈদসিক্ত নয় ত ললাট,
মাটির অন্ধরে দেহ করে নাই সৃষ্টিমগ্ন পাঠ
দিবারাত্র উন্মিত প্রাস্তরে । আনত নয়ন আছে,
আসে নাই সে-নয়ন পৃথিবীর হৃদয়ের কাছে ।

চেয়ে থাকি কবে কোন্ মুহূর্তের মানচিত্রে আঁকা
আমাদের সেই দিন, মন হতে যুগল বলাকা
উড়ে যাবে অফুরন্ত আকাশ-আশায়, পাবে নীড়
সীমান্ত বিহীন মাটি—দুই দেহ যেখানে নিবিড় ॥

মেষ

মেঘ

মেঘে ছান্নাঘন হ'ল আকাশের দিন,
পৃথিবীতে আজ অমাল হয়েছে কালো :
তোমাদের দেহ-যমুনায় বলো, রাখা,
কাদেনা উর্মিমালা ?

বন বুঝি মেঘে গহন হয়েছে আরো,
কার নীল চোখ হারিয়েছে নীল বনে !
তোমাদের কতো উর্মিমালা জাগে রাত
রাজপালঙ্কে বসে !

একা আরো কতো জেগেছ মেঘের রাত
কোন্ তপোবনে তোমরা, শকুন্তলা,
মালিনীর জলে সেখানে ভাসেনি কেয়া
আসেনি বিজয়ী রাজা !

হিমগিরি হতে মেঘের ধ্বনি কি শোনো ?-
উমা, তোমাদের দেবতা মেলেনি আঁখি !
কতো যুগ গেল যাবে আরো কতো যুগ
কতো মেঘ, কতো ব্যথা !



বীবেকানন্দ মুখোপাধ্যায়

বরষা কাটিয়া গেল

এক

বরষা কাটিয়া গেল, তবু তুমি এলেনাতো আঁর
মেঘগুলি ঝরে গেল পাহাড়ের চূড়ায় চূড়ায় ।
জোয়ার নামিয়া গেল বহুদূর নদী মোহানার
ভাটিয়ালি থেমে গেল উদাসীন পূবালিব বায় ।

তোমার সোনার ক্ষেতে ফসল কি ফলে নাই কিছু ?
তোমার ধানের শীষে বুলবুলি দেয় নাই শিস্ ?
আমার ফুলের ক্ষেত পড়িয়া রয়েছে সব পিছু
মধুর বদলে বুঝি মোমাছি আনিয়াছে বিষ !

দেখ না গাঙের চরে উড়িয়াছে পাখীদের ঝাক,
আবার নিবার-কণা কুড়াবার এলো বুঝি দিন ?
চলো না গোখুলি বেলা ঘুরে আসি সেই নদীবাঁক
যেখানে ঝাউয়ের ছায়া বিরহীর মত উদাসীন !

বরষা কাটিয়া গেল, তবু তুমি এলেনাতো আর
শ্রাবণের মেঘগুলি মিছামিছি ঝরিল এবার !

দুই

বরষা কাটিয়া গেল,—মনে আছে দিনগুলি সেই ?
তোমার মাঠের ধারে নেমেছিল নীল মেঘ ভার ?

হৃদয়প্রেম যুগে যুগে

আবণের ধারা বহি আকাশের কিনারা যে নেই
শুকনো যে নদীগুলি ভরি গেল এপার ওপার !

আঙুরের মত তুমি ফলেছিলে দেহের লতায়
বেদনায় ফেটে পড়া রসভ্যারে অলস বিধুর ।
আকাশের ফোটাগুলি ঝরেছিল পাতায় পাতায়
ফুলের শিশির যেন তনু দেহে মধুর মধুর !

আমার গানের পাখী উড়ে গেল কোন্ বরষায়
তোমার সুরের সাথী ছিল নাকি সেই রাত ভোর ?
বাদলের ভরা দিনে ছিলে তুমি কোন্ ভরসায়
তোমার সকল আশা ছিল যেন নেশায় বিভোর !

বরষা কাটিয়া গেল, মনে আছে আরেক আধার
মেঘময় রজনীতে জীবনের নয়না অভিসার ?



নন্দাগোপাল সেনগুপ্ত

মেয়েটি

কালকের আবছায়া রাত্রে অঁধারে জানলার ঠিক নিচে দেখলাম,
ঝোপে ঝাড়ে যেখানটা বেলফুল ফুটেছে মেটে মেটে জ্যোৎস্নার আলোতে—
চলচলে লতা-পাতা লুটোপুটি খাচ্ছে, এলোমেলো হাওয়া এসে লাগাতে,
আলো আর কালোতে কি কানাকানি চলছে, সেইখানে মেয়ে এক অপক্লপ !
চোখে তার চমকায় তারাদের ইসারা, মেঘ ডুরে শাড়ী তার পরনে,
দুই হাতে পরা তার রবারের লাল কলি, চুলে তার বুনো ফুল জড়ানো,
চৈতালী ফসলের পাকা শীষ এক গোছা—তার মাঝে মুখ ঢেকে কাঁদছে,
আবছায়া নিশীথের তারাভরা বিজনে, দেখলাম মেয়ে সেই অপক্লপ !

কালকের আবছায়া রাত্রে অঁধারে, গুনলাম মেয়ে সেই অচেনা
আমাকেই ডেকে যেন কেঁদে কেঁদে বলছে, চললাম চললাম ঢের দূর ;
ঐ নীল পাহাড়ের কোলে ঘেঁষে বর্ণার ঠিকরিয়ে পড়া জলে ছোট নদী ছুটছে—
যার তীরে পরীরা জাফরানী চুল খুলে আনমনে বাজাচ্ছে এসরাজ,
হালকা পায়ের তলে খেলা করে নীল জল, কালো চোখে তারাফুল ফুটেছে,
দিন নেই, রাত নেই, চির হাসি চির আলো—সেই দেশে এতদিন থাকতাম ।
কেন তুমি ভালবেসে নিয়ে এলে এখানে, শেষকালে অবহেলা হানতে ?
আবছায়া নিশীথের তারাভরা বিজনে, গুনলাম কথা সেই অদ্ভুত ।

ভরা এই দিবালোকে বসে বসে ভাবছি, কালকের ব্যাপার কি সব তবে স্বপ্ন ?
কাল মেয়ে কোথেকে এলো এই বাগানে ? বললে যা কিছু তার মানে হয় ?
ঘুমে ভরা চোখে যাকে দেখলাম কাঁদতে, সত্যিই সে কি তবে কাঁদে নি ?
জল জল মুখ তার এখনো যে মনে পড়ে—এখনো যে মনে পড়ে কথা তার !



বিমলাপ্রসাদ মুখোপাধ্যায়

সত্য

দৈবানুগমে আপন খেলালে এসেছিলে এই জীবনে ।
বনানীদাহের শেষ সমারোহ
মেঘেতে ললাটে ঘনায় বিমোহ
মাটির কালোয় আকাশের নীলে সাজালে নয়ন অঞ্জে ।

কি ক'রে ভুলিব সেই কথা ?
নৈর্ব্যক্তিক জীবন কাব্য সে তো কৃত্রিম বিমুখতা ।

মানুষের প্রেম শরীর ঘিরিয়া বাড়ে ।
তাই মৌখর হৃদয়তন্ত্র
খোঁজে দেহমন-শিল্পমন্ত্র
পরহত মুখে আঙ্গারে নিয়ে বিশ্বের মাঝে ছাড়ে ।

তোমার বহি মোর প্রচ্ছাদে জলে ওঠে নিষ্ঠুর
জানো না কি হাস্য কোথা ঝরে যায় কবিতার অঙ্কুর !
সেই বীজে যদি নাহি ফোটে শত

তত্ত্বকথার ফুল

রহে শুধু প্রাণ ইতিহাস-গত

হবে কি বিরাট ভুল ?

ভপোবনে কড়ু থাকি নাই তাই জানি না তাহার দান
শুধু শুনিয়াছি সেখানেও ছোটো পঞ্চশরের বাণ ।

ইপ্সোম যুগে যুগে

প্রকাশ-বিপাকে দ্বন্দ্ব জাগেনি মনে ।
আকৃতি-সীমার অতিকৃত রূপ নিরূপিত বন্ধনে
আকুল করেনি । প্রসঙ্গ-চেয়ে পদ্ধতি নয় দামী ।
তাই মিলনের ও প্রতিষেধের
ঘন অরণ্যে স্মৃতি-স্বপ্নের
ঝরা পল্লব খুঁজিয়া-খুঁজিয়া কুড়িয়ে রেখেছি আমি ।

মৃত্তিকারোহী লতাপ্রতানের মৃত্যুঞ্জয় প্রাণ
স্পর্শধন্য দঙ্কতকর সূচিকণ অভিমান ।



আশোকবিজয় রাহা

বিস্মরণ

সারা বিকাল আমি কেবল দেখছি চেয়ে
ছবির মতো দাঁড়িয়ে আছ জানুলা ধ'রে,
পিঠে তোমার ঝরছে কালো চুলের ধারা,
চোখে তোমার সাঁঝের আলোব ঝবনা নামে

কোথায় তুমি হারিয়ে গেছ অনেক দূরে,
অনেক দূরে হারিয়ে গেছ আকাশ হ'য়ে,
তোমার মুখে হঠাৎ যেন দেখছি চেয়ে
দূর-প্রবাসের চিহ্না-হৃদয়ের সন্ধ্যাখানি ।

আকাশ-পাবে হাঁসের পাঁতির উড়াল্ ডানা
হঠাৎ-হেঁড়া মালার মতো শুক্ক আঁকা,
তা'রি তলায় সিঁদুর-মাখা সন্ধ্যা নামে,
চিহ্না-হৃদেব নীল জলে লাল আবির ঝবে ।



জগদীশ ভট্টাচার্য

তুমি ভালবাসো নীল

তুমি ভালবাসো নীল, ভালবাসো প্রিয়র মতন ;
গোলাপী-কোমল তনু ঘেরি' তুমি পর নীল শাড়ি,
অপরাজিতার মত স্নমস্নগ সুনীলিমা তারি,—
সে নীলের স্নিগ্ধকান্তি কলাপীর কামনার ধন ।

কাজল কালির মত নীল রাত্রি ভালবাসো তুমি,
ভালবাসো আকাশের সীমাহীন প্রশান্ত নীলিমা,
ভালবাসো সমুদ্রের সুবিশাল ঘন-শ্যামলিমা,
ভালবাসো অরণ্যের ছায়াঘন নীল বনভূমি ।

আমিও তোমারি মত সব চেয়ে নীল ভালবাসি,
যে নীল তোমার তনু জড়ায়েছে স্নেহ-আলিঙ্গনে,
যে নীল নয়ন-কোণে কাঁপিতেছে প্রণয়-অঞ্জনে,
যে নীল কিশোরী-মনে লক্ষ রূপে উঠিছে উদ্ভাসি' ।

আমি কেন পাই নাই আকাশে নীলিমার কণা ?
সুনীল সাগরে কেন হই নাই সলিল-কুমার ?
বনরাজি কেন হয় হ'ল না কো নিলয় আমার ?
রজনীর কাজলিমা কেন মোরে ঘিরে রহিল না ?

তুমি যদি ভালবাসো আকাশের সাগরের নীল
কেন তার এক কণা মোর মাঝে দিল না নিখিল ?

জ্যোতিষ'য়ী রায় চৌধুরী

আহত গোলাপ

বৃন্তহীন গোলাপের শুনেছ ক্রন্দন ?

নিঃশব্দ ক্রন্দন !

সে রোদনে প্রভাতের আয়ু টুটে যায়

দ্বিপ্রহর ঢলে পড়ে বহ্নিল সন্ধ্যায় ।

তারাগুলি নিশাচর

কী অদ্ভুত বাত্রির সাগর !

মৃত্যুর স্পন্দনে

নির্ঘাতিত কুসুমের আত্মাব নির্গাস

আসে ভেসে... ..

কোথা যেন রাখি' দীর্ঘশ্বাস

গোলাপের দিন

শুধিলো দিনেব ঋণ,

হায় বৃন্তহীন ।

শুনেছ ক্রন্দন তার ?

মস্থিত অমৃত সেই নিঃশব্দ ব্যথার ।



দিনেশ দাস

সে

আমার চেতনা হ'তে সে কবে মুছিয়া গেছে স্বপ্নের মতন
বিস্মৃতির মোহানাতে সমুদ্র-মাছের মত
নেমে গেছি যেন কোন শব্দের গুহায় :
এখানে আমার ডানা
জড়িয়ে যায় না আর রঙিন স্মৃত্যয়
এখানে আমার দেহে
হোঁবে নাকো কোন দিন পৃথিবীর গন্ধ আর রঙ
সে-পৃথিবী কবে যেন শেষ হ'য়ে গেছে !

অনেক বছর
অনেক অনেক রাতে বাতাসেতে বুলায় আঙুল
কতবার কার নাম লিখিলাম আমি,
কোন দিন জানিবে কি কেউ ?
কত না কান্নার ফোঁটা
রাতের শিশির-ভেজা তারার মতন
একে একে ঝ'রে গেল কবে—
কোন দিন জানিবে কি কেউ ?

আমার কবিতাগুলি দোলে নাকো কেন আর
ঝড়ের মতই কালো কার এলো চুলের হাওয়ায় ?

সুপ্ৰেম যুগে যুগে

আমার কবিতাগুলি জ্বলে নাকো কেন আর
কুমারী-ঠোঁটের সেই গোলাপী আঙুনে ?
তোমরা তো বুঝবে না—জানিবে না কেউ
আমার জীবন হ'তে সে আজ মুছিয়া গেছে
যার দেহে রাখিলাম টুকে
আমার অলেখা যত কবিতার কুচো—
এ কথা তৌ জানিবে না—জানিবে না কেউ

সবুজ দ্বীপ

দূরের ওই সবুজ দ্বীপটি
যেন ফিকে কাঁচপোকাকার টিপ্-
কার মসৃণ ললাটে ।
যেন ঝলমলিয়ে ওঠে
রাতের তারার মত সবুজ দূরস্তপনার
কী সুন্দর ওই ছোট সবুজ দ্বীপটি !

সাবানের ফেনার মত ছোটবড় ঢেউগুলি
হাজার হাজার ভঙ্গীতে
ভেঙে পড়ে ওর নিটোল দেহে
কী মধুর ওই ফেনার পালক-মোড়া সবুজ দ্বীপটি !

আমি যদি ওই ঢেউয়ের মতই
চুপে চুপে ভেঙে যেতাম অফুট গুঞ্জে
সারাদিন—সারারাত
আর তুমি যদি ওই নির্জন সবুজ দ্বীপ হ'তে !



সুভো ঠাকুর

নারী

নারী তো মানবী নয়,
বিষের আঙুর—
তারি মদ হতে উহারা জন্ম লয় ,
নয়নে চাহিলে ব্যথার বেহাগ
বুকেতে বাজিয়া ওঠে,
হোক না সে ব্যথা, সে কি নয় বিষ
হুল হয়ে যাহা ফোটে ।
দেহ তার মিছে,
দেহের পেয়ালা মবণের মদ ভরা,
যৌবন তলে জীবন জ্বালানো আগুন বরণা বরা ।
তবু সেই মধু আকণ্ঠ ভ'রে
চুমুর চুমুক দিই,
চির জীবনের বাহুবন্ধনে
নিবিড় নিংড়ে নিই ।



আশু চট্টোপাধ্যায়

রাত্রি খুব ছোট মনে হয়

রাত্রি খুব ছোট মনে হয়,

মনে হয়

মুঠোর ধরিতে পারি আকাশের সব তারাগুলো,

সমস্ত আঁধার যেন তোমার সুগন্ধ ওই এলো খোঁপাখানি

আমার আঙুল যেন খেলা করে তার মাঝে মুহূর্তের কাঁটাগুলো নিয়ে ।

রাত্রি খুব ছোট মনে হয়,

মনে হয়

চোখের তারার তব তার চেয়ে অনেক বিস্মৃতি ;

তোমার এ চেয়ে-থাকা সময়ের সীমান্ত উত্তরি

কাঁপবে আমার চক্ষে শত জন্ম-জন্মান্তর দ্যুতিমান অসহ পুলকে ।

তোমার চকিত স্পর্শ ওই দেখ কাঁপিছে আকাশে

শত শত নক্ষত্রের আলোয় আলোয় আলিঙ্গনে

নিভৃত ইঙ্গিতময় ।

যদি নিচু হয়ে

দ্বিই ভব দুটি ঠোঁটে আগুনের রোমাঞ্চ বুলায়ে

অমনি চঞ্চল হবে তরুশিরে'রাত্রির বাতাস,

তপ্ত স্বাদে শিহরিবে ঘুমন্ত প্রিয়ের পার্শ্বে নিদ্রাহারা সহস্র রমণী

সঞ্চারিত মিলন-রঙসে ।

প্রেম যুগে যুগে

রাত্রি খুব ছোট মনে হয়,

মনে হয়

তোমার দেহের মাঝে তার চেয়ে রহস্য অনেক !

অচূষিত ক্ষণগুলি তুষাতুর চাহে ওষ্ঠ পানে,

আলিঙ্গন-ওৎসুক্যের প্রেতমূর্তি ঘূরে মরে কুঠাদীন না-বলা কথায়

রাত্রি খুব ছোট মনে হয়।



জ্যোতিরিন্দ্র মৈত্র

রথযাত্রা

তুমি যেন কোন রথের মেলার মুখ
এলোমেলা ঘোরো নাগর দোলার সাথে,
কাঠের পুতুল—ওঠাপড়াহীন বুক,
মেদুসা-কঠিন দৃষ্টির শাপ হাতে ।
ঘুরে ফিরে তাই ভুলে যাই কেন খুঁজি,
অভিধান খুঁড়ি, খনি বুঝি আছে নিচে ।
এতো শালীনতা, এতো বয়সের পুঁজি,
শুধু পাড়া ঘোরা—সব হল বুঝি মিছে ।
মুখোস ছাড়ি না, তবু মুখে বলি আহা,
রসবোধ আছে তাই মানুষেরা বাঁচে ।
নইলেত শুধু আত্মশাসনে ঠাসা
মন থাকে ঘেরা ক্ষণ ভঙ্গুর কাঁচে ।
কোন দিন, জানি, আত্মপ্রসাদ ভেঙে
চুরমার হবে মানুষের গান্নে লেগে ।
ধ্বংস-ধূসর অবশেষ যাবে রেঙে
লেন্ন-এভেনিউ-পার্ক মন্ডন বেগে ।
তবু সেই মুখ, ক্লান্ত দিনের পারে
পিছু পিছু কালো রাত্রির গত আসে,
প্রলাপ-প্রখর শাণিত মনের ধারে
এলোমেলা ভিড় মেলা ভাঙবার পাশে ।

হুঁপ্ৰোম যুগে যুগে

তাই মনে বলি, হায় ঝরে যাওয়া পাতা
আমিও তোমারই দলে আছি, জান না তা !
জনারণ্যের সহর বালুকাপাতা
তার নিচে দেখি শিকড় গিয়েছে মবে ।
অর্কিড-হাতে নীল ফুল মাথা নাড়ে,
জানালায় ফুল মাটির অভাবে বাড়ে,
স্নিগ্ধ হাতের সৌখিন স্নেহ কাড়ে ;
হাওয়ার পৃথিবী হাওয়াতেই যায় ঝবে



হরপ্রসাদ মিত্র

প্রেম

দেখিলাম বহুদূর পাহাড়ের নিচে

কি নিখর বনছায়া কাঁপে !

দুপুর তো যায়...

কে ঘুমায় ?

—মণিমালা রায় ।

কে বা জানে এলো কোথা স্মরণীয় ঝড়,

দেহ কার কামনায় কাঁপে থরোথর ।

দিন হলো। রমণীয়, আকাশ কী নীল ।

হাতে হাতে ছোঁয়া লাগে, মনে মনে মিল ।

দেখিলাম কাঁপে ছায়া পাহাড়ের নিচে

*

*

*

তিব্বক নামে রোদ রাজপথে—পিচে ।



সমর সেন

স্মৃতি

আমার রক্তে খালি তোমার স্মর বাজে ।
রুদ্ধশ্বাস, কত পথ পার হ'য়ে এলাম,
পার হ'য়ে এলাম
মহুর কত মুহূর্তের দীর্ঘ অবসর ;
স্মৃতির দিগন্তে নেমে এলো গভীর অন্ধকার,
আর এলোমেলো,
ভুলে যাওয়ার হাওয়া এলো ধূসর পথ বেয়ে ;
রুদ্ধশ্বাস, কত পথ পার হ'য়ে এলাম, কত মুহূর্ত,
শ্রান্ত হ'য়ে এলো অগণিত কত প্রহরের ক্রন্দন,
তবু আমার রক্তে খালি তোমার স্মর বাজে ।

মদন ভাস্কর প্রার্থনা

মাস্তুলের দীর্ঘ রেখা দিগন্তে,
জাহাজের অদ্ভুত শব্দ,
দূর সমুদ্র থেকে ভেসে আসে
বিষম নাবিকের গান ।
সমস্ত দিন কাটে দুঃস্বপ্নের মত ;
রাত্রে ধূসর প্রেম ; কুসুমের কারাগার ।
কত দিন, কত মহুর, দীর্ঘ দিন,
কত গোধূলি-মদির অন্ধকার,
কত মধুরাতি রভসে গোড়ায়ছ,
আজ মৃত্যুলোকে দাও প্রাণ
দূর সমুদ্র থেকে ভেসে আসে
বিষম নাবিকের গান ।

বিমলচন্দ্র ঘোষ

মহাশ্বেতা

তোমায় দেখিনি আমি স্বয়ম্বর্য সূর্যসভাতলে
অথবা কিংশুক হাসি দ্বাপরের মর্ম-তপোবন
আত্মায় জ্বালেনি দীপ সলজ্জ শিখায়
ঋজু-দেহ কাঁপেনি পুলকে
রোমাঞ্চিত ঐক্যতানে জাগেনিকো পৌরাণিক প্রেম
কাল্পনিক কবিতায় অতু্যক্তির মতো ।

তবু তুমি অপকূপ আশ্চর্য সুন্দরী
সম্রমে অপরাজিতা নির্ভিক উজ্জ্বল,
তবু তুমি বিরহিণী ক্ষণদীপ্ত প্রথম দর্শনে
নিমেষে সমস্ত প্রাণে আধিপত্য করেছ আমার ।
অথচ তুমি তো প্রিয়া নও
নও তুমি প্রিয়তমা সর্বস্বান্ত কবোনি নিজেরে
গতানুগতিক ত্যাগে আত্ম-সমর্পণে
তুমি তাই সার্থক-স্মরণ !

মনে পড়ে একদিন মানসিক ঝড়ের রাত্রিতে
তুমি এলে মেঘকণ্ঠা হে বিদ্যুৎপ্লতা,
চিরায়ু মরীচিকা মায়াবিনী সোণালী বলকে ;
সেদিন এ বাসনার গভীর পাতালে
কৈপে কৈপে উঠেছিল প্রেমপদ্মে অদৃশ্য মৃণাল
শীর্ষে তার সপ্তপর্ণ রামধনু বহু বর্ণালোকে
আত্মার বীণায় যেন তুলেছিল অতনু ঝঙ্কার !

প্রেমের যুগে যুগে

নিমিষে লুকালে তুমি রিক্ত বাহু আঁধারে দুর্বল
প্রচণ্ড আঘাতে স্তব্ধ বাসনার রোমাঞ্চ-বিলাস
মুহিত আঁধারে কাঁপে বিদ্যুৎ বিকাশ
তুমি নেই, কোথা তুমি ? কোথা তব স্মৃতি নিঃশ্বাস ?
যুম ভেঙে চেয়ে দেখি বিজয়িনী তব আবির্ভাব
সংযত মর্মর মূর্তি, কী নির্মম অজ্ঞেয় প্রভাব
অপার কবিত্বলোকে অগ্নি মহাশ্বেতা !
জীবন-শর্বরী জুড়ে বিকাশ তোমার
অলক প্রেমের বাষ্পে বিরহের মেঘে ।

তুমি নও জনতার জনগণ-মনের নায়িকা
নও তুমি সম্রাট নন্দিনী
অহঙ্কারে রূপে গর্বে জীবন্ত লালসা ।
বুদ্ধিদীপ্ত রূপে তুমি চির-অনিন্দিতা
সাবলীল লীলালাস্বে চঞ্চল বিহ্বল
শ্রামল যৌবনশিখা তব,
তারুণ্যে শ্রামায়মান হে মোর শ্রামলী ।
তাই তুমি তৃপ্ত তবু সর্বস্বান্ত করোনি নিজেরে
হে কবিতা বিদ্যুৎরূপিণী ।

এ জীবন-অরণ্যের ঘন পল্লবিত শাখে শাখে
অন্ধকারে অনাদৃতা কুসুমিতা বল্লরী-বিতানে
হে আমার ক্ষণস্থিত্র ঔগ-পদ্যে স্মৃতি-সঞ্চার
তুমি মোর মহাশ্বেতা স্বর্ণ-পদ্মাসনা
নিভৃত বাসরকক্ষে হে বরবর্ণিনী ।
সমস্ত চিন্তার বোঝা শূন্য ক'রে দিয়ে
লঘু মন ভেসে যায় দুঃখের ঝড়ে

প্রেমের যুগে যুগে

বেদনার মেঘে মেঘে অতৃপ্তির দুঃসহ আঘাতে
বার বার জলে ওঠে বিদ্যুৎকপিণী
বার বার জলে ওঠে এ যৌবন জলদ-পঙ্করে
অলঙ্ক প্রেমের ক্রিপ্রশিখা
অকস্মাৎ এ জীবনে আধিপত্য করেছ যেমন ।

তাইতো তোমার দেওয়া শাস্তি স্করণ
অগ্নিগর্ভ মেঘে মেঘে ভারাক্রান্ত করেছে আমার !
তুমি নও প্রিয়তমা
গতানুগতিক ত্যাগে আত্ম-সমর্পণে
সর্বস্বান্ত করোনি নিজেই ।
তুমি মোর স্বর্ণদীপ্তি জীবনের মেঘে
হে কবিতা, সার্থক-স্মরণ !

শাস্ত্রতী

এসেছে অনেক ঝড়, বহু যুদ্ধ, প্রলয় প্লাবন,
উন্নত বরাহদন্তে ভীমকায় নৃসিংহ নখরে
বিজয়ীর অশ্বক্ষুরে যান্ত্রিক আঘাতে
শতদীর্ঘ হয়েছে পৃথিবী
বিক্ষস্ত বিকৃত অসহায় !

মিশে গেছে রোমাঙ্কিত নিরালস্য মহাকাশ পথে
দীর্ঘ নিঃশ্বাসিত হাহাকার
প্রাচীন পুরাণ প্রাজ্ঞে অজোহিত্য শাস্ত্র-আত্মার ;
আজো তবু মরেনি পৃথিবী
তুমি আমি সমুজ্জ্ব আকাশ
বেঁচে আছি শত কোটি অব্দ বৎসর ।

হৃদয় হৃদয় হৃদয়

বহুবর্ষে কুল কোটে সবুজ পাতার কঁাকে কঁাকে
অরণ্যে বিহঙ্গগীতি, জনারণ্যে মানবিক ভাষা
ভেসে উঠে স্বপ্নময় প্রাণের দ্বীপ
প্রেমের হিরণ্যদ্যুতিময়
ধৌবন-সমুদ্র বুক ।
পৃথিবী স্বপন দেখে সংখ্যাহীন তুমি আর আমি
পান করি অধরে অধরে
তৃপ্তিহীন কামতপ্ত সোমনুধারস
উদ্বাদ রোমাঞ্চকর মদস্রাবী গাঢ় আলিঙ্গনে ।
ভেসে যায় অযুত সভ্যতা
ভেসে যায় মুক্তিদাতা পৌরানিক লক্ষ অবতার ;
যতক্ষণ মৃত্যু নাহি আসে
নাহি আসে জন্মদিন অনাগত অপুষ্টি আশ্রয়
অসুস্থহীন অভিসারে আমরাও ভেসে চলে যাই
তুমি আমি,—মানব মানবী,
ক্ষুধা-খাওয়া, বহি-বায়ু, শ্বাস-সংসার ।

এসেছে অনেকবার ঝঙ্কারী বিপ্লব-রজনী
অভিকার সন্ন্যাস বৃদ্ধ খ্রীষ্ট তৈমুর চেঙ্গিস
বলিষ্ঠের দুর্বলের ক্ষণিকের স্থায়িত্বের মোহ
দিয়ে গেছে তোমায় আমার
কালের ষটিকাষ্ট্রে উৎসবের অনন্ত প্রহর ।

মনোমত্ত মিথুনের খাপদ-নিখাস
স্তম্ভিত করেছে বিধাতারে,
নিষ্ঠা তাই অর্থহীন

ইন্ডিয়ান ফুল ফুল

অবহীন মহানৃপো আত্ম-সমর্পন
শিলীভূত সনাতন অজ্ঞতার অজৈব বিধাতা ।
একমাত্র সত্য শুধু তুমি আর আমি,
তুমি প্রিয়ে বহির্ভূত জলন্ত ক্ষুধার,
আমি মৃত্যু, ক্রান্তগতি ভীমপক্ষ বিহঙ্গ দুর্বার ।
তিন কেন্দ্রে—তুমি, আমি, সচলা পৃথিবী,
অবাধ্য কালের পায়ে পরায়েছি অচ্ছেদ্য শৃঙ্খল,
তাই ফোটে ফুলদল তাই ওঠে তারা,
নামে ঘুম আদিত্যের চোখে,
ধন্য হয় বনুন্ধরা ঐশ্বর্যশালিনী
ধন্য হয় বহুজনসুখায় জীবন ।
হে প্রিয়ে তোমার—
প্রাণশক্তি উদ্বোধক অনাদি প্রেমের সিংহদ্বারে
আমাদের কামনার সূর্য দেখা দেয়
জীবন্ত বহির পিণ্ড ভবিষ্যের নিয়ন্তা দুর্জয়,
উপেক্ষিয়া ঝড় বৃষ্টি প্রলয়ের ক্রকুটি বিলাস ।



অরুণ মিত্র

উত্তর মেঘ

ছোট ঘর ঘিরে মেঘাডম্বর নিরন্তর ।
রূপকথা হবে জীবন্ত, এই আশা তোমার ।
ভাঙা পালাংকে সোনার কাঠির মূর্ছ পরশ
অঝোর শ্রাবণে লাগে যদি আহা লাগেই আজ !

দুয়ার দিলাম সন্তুর্পণে : চতুর্দিক
কাছাকাছি আসে, গাঢ় হ'তে চায় বিনা কথায় ;
আর দেখি হায় তোমার নয়নে দিবাস্বপন ।
মুখ গুঁজে থেকে প্রতীক্ষা করে কক্ষকোণ ।

মেঘ-পর্বত বাহিরে তুলেছে শ্রাম শিখর ।
জাম্বুগায় চেয়ে ছাখো অলকার গৃহ অলীক ;
মৌসুমী বায়ু কখনো পাগল, দুরাগতের
হাহাকার বেঁধে ভিতরের ছাদে বারংবার ।

ঘোর ক্র-ভঙ্গ তোমার, বিষ দুঃসহণ ;
ছোট্ট একটি বাতায়ন আনে শত বেতাল ।
ভুজ-বল্লরী বাড়ালে, বন্ধ কর কি তাও ?
তবে নিশ্বাস নেবার কি হবে, কোন্ উপায় ?



বীরেন্দ্র মল্লিক

পরী

আমার ঘরের পাশে আনাগোনা শুরু করিয়াছে
মুক্তার-ঝালর-পরী চাঁদের-কুম্ভুম-মাথা কোনো এক পরী ।
সমুদ্র-তরংগ-ভাঙা ডানা তার ;
ডানা তার মেঘের দিনের মতো সফেন সুনীল ;
রক্ত-পলাশের চেয়ে আরো গাঢ় লাল, আরো রক্তাতুর ;
ডানার পালকগুলো খাঁজে খাঁজে জোড়া আছে তার
মাছের আঁশের মতো ।
চোখে তার ওড়না আঁকা অতীত যুগের যতো বিনিম্ব আখর ;
জ্বপের দেহের ফাঁকে কিংবা কোনো মিনারের গানে তার
আঁকা হয়ে ছিলো ;
অথবা কোন সে নদী গোদাবরী অথবা নর্মদা
শুকিয়ে শুকিয়ে গিয়ে আজ যারা মানুষের হাড় হয়ে আছে
তাদের ভীরের কোলে বালিয়ারি পাড়ে
মুহুর্তের তরে তারা লেখা হয়ে ছিলো
হুয়ে-পড়া কোনো এক প্রেরসীর আঙুলের নখের ডগায় ।
সমস্ত শরীরে তার মাথানো আঠার মতো চট্টটে অজস্র কামনা
অজস্র রেখার বাঁকে বাঁকে—যেনো এক শিকারীর
পাখী ধরা জালে
আটক পড়েছে এরা ;—এই সব ছোটো ছোটো
উজ্জল অলস যতো পাখী

কৃষ্ণেন্দ্র যুগে যুগে

কামনার ; যারা আজ চার ছাড়া পেতে :

যারা আজ উড়ে যেতে চায়
বক্স। এই বন্ধনেরে ছিঁড়ে খুঁড়ে

দীপ্ত এক সূর্য-হোয়া দিগন্তের পারে ।
ঘুমন্ত মাথার কাছে শুনি আমি শুয়ে শুয়ে

তাদের ডানার ঝটাপটি ;
দেখি আমি শুয়ে শুয়ে চোখে তার অতীতের বিনিজ্র আখর ;
দেখি আমি সমুদ্র-তরংগ-ভাঙা ডানা তার ; দেখি সব ।
কিন্তু হাত মেলি নাকো কভু । তবুও সে আনাগোনা করে
উড়ে উড়ে খুব কাছে কাছে ;

আমারি হাতের কাছে ধরা দেবে বলে ;
ধরা দিয়ে ছেড়ে দেবে বন্দী যতো কামনার পাখীর ডানার,
সমস্ত সন্ধ্যার তীর ভেঙে দিয়ে মুছে দিয়ে
দিখলর ঢেকে দেবে যারা ।



অমল দত্ত

তুমি

কোনোদিন হৃদয়ের মৌশুমী বায়ু
বর্ষে বর্ষে মেঘে মেঘে বড় সৃষ্টি করে—
তোমারে চিনিতে শুধু চিনিলাম বড়ে ।

তারপর শ স্তব্ধে কোথা পরিচয়—
তোমার উর্বরা ভূমি পরিপূর্ণ রয়
সোনালী সবুজ শস্য স্তরে !

ভবু যদি আরবার কিরে আসি,
একান্ত প্রত্যাশী,
প্রবল বজ্রার মতো আবেগের কেনি উল্লাসে—
তোমারে খুঁজেছি খালি আমার উচ্ছ্বাসে ।
প্লাবনের কলস্রোতে ভাঙিয়াছি নিজে,
তুমি যা সয়েছো সে তো ধরিয়াছো বীজে,
প্রাণের স্কলিঙ্গ নিয়ে বেঁধেছো সহজে
দূরতম ব্যবধান ক্রীণ কটিবাসে ।

অসহ বিরহ লাগে তাঁটির নিঃসাড়ে—এই সাড়া, এই বোধ
মৃত্যুর মতন :
তোমারে বাসিতে ভালো—কুমেছি মরণ ।

হৃদয় যুগে যুগে

চেয়েছি তোমার চোখে অরোরার আলো,
তোমার চুলের রাশি ঈগলের ছায়া লগ্নে আসে,
তোমার ঠোঁটের কোণে রহস্য ঘনালো—
আমার জীবন তাই ভয়ে মরে আসে,
কোন সত্য লুকানো গোপন ।

সত্যের আড়ালে থেকে অটুট আসনে,
সময়, পরিধি আর স্থিতির সীমানা হয়ে পার—
ধরা দিয়ে আছে কোন মুহূর্তের মনে ?

হায় প্রিয়া,
জেনো এই মৃত্যু-অহংকার :
আমার জীবন দিয়ে তোমার সজ্জার ।



গোবিন্দ চক্রবর্তী

জ্বর

এ মুহূর্তে কাছে এসো—হৃদয়ের পাশে বসো—নিস্তরক নিখর :

ছোটো ঘরে বন্দী করো অসীম প্রান্তর ;

বড় জ্বর—

ক্লান্ত দেহ, ক্লান্ত প্রাণ, ত্রিযমান অফুরান, রুগ্ন ম্লান পড়ে আছি একা বিহানায়-
দীর্ঘ রাত্রি, দীর্ঘ দিন অশান্ত বিরামহীন

ঝরঝর ঝরঝর অঝোর ধারায়

সে কোন কান্নার তীর্থে চলেছে নিঃসংগ মৌন আকাশ-ভূবন ;

পড়ে আছি—বড় শূণ্য মন ।

বড় শূণ্য এ জীবন—

আজিকার এ লগন

শূণ্যে শূণ্যে মহাশূণ্যে ব্যথা দিয়ে বাঁধে সেতু দূর-দূরান্তর :

এখন নিকটতম মরু-মেরু দক্ষিণ ও উত্তর ;

যেখানে যেটুকু শূণ্য সব এসে ভীড় করে চোখের পাতায়—

আজ শুধু তুমি এসো—হৃদয় নিকটে বসো—

দরা করো, দরা করো জ্বরের সঙ্কায় ।

জ্বরের সঙ্কায় আজ, জলের সঙ্কায় আজ বড় অন্ধকার ।

রাত্রি-দিন নীল নির্বিকার,

বাতাসের অন্তহীন রোল—

হুগোয় যুগে যুগে

সবস্ব আঙুলে ধরে মৃত্যুর মন্ডল করে একে দাও যুগের কাজল,
একটি চুখন দাও নিবিড়, নিটোল
জরতপ্ত এ ললাটে ।

জীবনের ভাঙা হাটে—

ঘাটে-ঘাটে, মাঠে-মাঠে, বাটে-বাটে আর

তুকান তুমুল হোক অশ্রুশ্লোক রাত্রিলোক : এ ভরা আঘাত ।

অনাদি রাত্রির আগে ভুলে-যাওয়া কোন এক কোটিবর্ষ যুগে

কোনোদিন মেঘ-লীন এমনি বর্ষায় :

দেখা হয়েছিলো বুঝি তোমায়-আমায় !

তোমার চুলের স্রোতে তারপরে বয়ে গেছে কত দীর্ঘকাল—

দেখেছি কালের রূপ বীভৎস, ভয়ানক :

ধরিজীর বুক ফুঁড়ে ক্লান্ত দীর্ঘশ্বাস :

শাস্তির সনদ নিয়ে স্বাক্ষর-বিলাস :

বোমা-চষা ধানক্ষেত, মৃত্যুকরা নীলাকাশ—ঈগল, শোনের ডানা—চক্রবাহজাল :

বারবার অবরোধ, প্রতিরোধ, প্রতিশোধ : পথে পথে স্তূপীকৃত করোটি-কংকাল

শুধু কজি, রোজ আর প্রাণধারণের

করেছি লড়াই—

ভেবেছি, ভেবেছি মনে—এ জীবনে কোনো ক্ষণে আর কিছু নাই ।

‘কিছু নাই’—দু’টি কথা—কৈপে কৈপে ওঠে আজ অশ্রু দোলায় :

‘কিছু নাই’—মিছে কথা—বুঝি আজ কৈপে উঠে তীব্র শূন্যতায় :

আছে প্রাণ, আছে প্রেম, আশ্চর্য দিগন্ত এক

বর্ণজটাময়—

হুঁপে হুপে হুপে

কেবল বিরোধ আর কেবল বিপ্লব আর লড়াইয়ের মৃত্যুশিখা
—নয়, সব নয় !

বিপ্লবের জয় হোক, বিপ্লব সুদীর্ঘ হোক—

তবুও ছায়ালোক

তুমি ছাড়া অন্ধকার, বড় অর্থহীন ।

শুধু এ আঘাত নয়—আঘাতের দীর্ঘ রাত্রি বিকীর্ণ মলিন

এ নিখিল বসুন্ধরাভোর :

তুমি এসো, তুমি এসো—নদী হয়ে বুকে গেশো—এক। আমি উষর সাগর



করুণাময় বসু

সেই মুখ হ'লনা বদল

আবার দেখিছ তারে আজিকার করুণ প্রদোষে
মুদে আসা দিবসের ঝিলিমিলি সূর্যাস্ত ছায়ায়
সে দিঘীর প্রান্ততটে ; মুখখানি কিশোর কোমল
মধুর লাবণ্য ভরা, মুখে যেন লেগে আছে আজো
করুণ বর্ষণ ফোটা ছোট ছোট যুঁই ফুল গুলি,
সজল ম'টির দাগ । মনে পড়ে সেই নীল মেঘ,
সোনালী চাঁপার স্ফুট ; পথে ওড়ে জীবনের ধুলি,
কখন মুছিয়া যায় আবহের স্নান গোবুলিতে
চোখের অঞ্জন ছায়া । সব গেছে, স্মৃতি গেছে মুছে,
তবু ভাবি কাঁচ কাঁচা মুখখানি আজো আছে বেঁচে ;
ভাবি, যদি সব গেল, ওই মুখ হ'লনা বদল !
ওই মুখ লেগে আছে কৈশোরের সেই দিনগুলি,
মদির বসন্ত সন্ধ্যা, আকাশের বৃহৎ বিস্তার ;
অপার নিঃশব্দ স্রোতে ছায়া পড়ে তারা-পরীদের,
তুমি আমি ভেসে যাই সঙ্গীহীন প্রদীপের মতো ।
মনে পড়ে রূপকথা, দিদিমার করুণ গুঞ্জন,
তুমি আমি পাশাপাশি, উঠানেতে আলোছায়া খেলা ;
পারুল মালকতলে গন্ধভরা বায়ুর উচ্ছ্বাস ।

ওই চোখে যেন মিশে আছে

তারা ভরা গোবুলি-আকাশ, নির্জন নদীর চর ;
ওই ঠোঁটে লেগে আছে স্মৃতির সমুদ্রগামী ভাষা,
টেটে লাগা অরণ্যের মর্মরিত তরঙ্গ গুঞ্জন ।

কতো কথা মনে আসে, মনে আসে কাঁচা সোনা রোদ,
 দুপুয়ের আমবনে ছায়াপূর্ণ আশ্চর্য স্তব্ধতা ;
 সোনালী শস্যের ক্ষেত, জেগে ওঠা সবুজ কুমুম
 মাঠের ঘাসের শীষে ; মুছ-বাওয়া সেই ছবিগুলি
 আবার উজ্জল হ'ল আকাশের করুণ আলোয়
 ওই মেয়েটির মুখে ।

এখনি আসিবে নীলছায়া,
 মেয়েটি হ'ল তো যাবে গ্রামান্তের সর পথ ধরে
 সজল চরণ চিহ্ন এঁকে এঁকে পথের ধুলার
 দূর বনান্তের বাঁকে ; আবার আসিতে পারে কিরে,
 কহিবে করুণ স্নিগ্ধ স্বরে : ভালো ছিলে এতদিন,
 মনে মনে কতো কথা গুছিয়ে রেখেছি এতকাল,
 হেসে হেসে বলিব উহারে, চাঁদের জোয়ার বেয়ে
 দুজনে এসেছি ভেসে, আবার ভাঁটায় গেছি কিরে
 জীবনের দুই পারে । সে কথা হ'লনা বুঝি বলা,
 মেয়েটি কিরিয়। যার ধূসরিত অরণ্য ছায়ার
 অদৃশ্য পথের প্রান্তে ; শুধু ভাবি যদি সব গেল,
 নির্মম গভীর স্রোতে ভেঙে গেল মর্যাস্ত-জীবন,
 কৈশোরের স্মৃতি আর সেই মুখ হ'লনা বদল ।



কামাক্ষীপ্রসাদ চাট্টোপাধ্যায়

বাজার

ফুটপাথে থেমে আমি একমনে-খুঁজি কঁাকা ট্রাম
হকারের হাঁক শুনি : তাজা খবর, অসংখ্য গ্রাম
পুড়ে পুড়ে ছাই হোলো। এক আনা দাম!—তারপর
হেমন্তের সন্ধ্যা দেখি, আকাশের প্রশান্ত প্রহর।
এ-সৌন্দর্য সত্যি নাকি? কেনই বা সত্যি এটা নয়?
পকেটের পোড়া বিড়ি, নীল সন্ধ্যা : অপূর্ব বিস্ময়।
আপেলগেতে মাছি বসে, চুলের জরির সাদা ক্রিতে
মারাঠী মেয়েটি থামে, নিচু হয় সেটা তুলে নিতে।
উঁচু বাড়িটার পানে কপিকের এই নীল মায়া।
বোঁরাটে আমের পাশে মরা মুখ আর আবছায়া।

পা যে চায়না চলতে, কাকে খুঁজি, পাই কি না পাই।
বাজারের জনতায় আবার হারিয়ে বুঝ যাই।
দেহের নীড়ের সন, মনের নীড়ের অন্ধকারে
এলোমেলো বহু শব্দ ভেসে-ভেসে আসে বারে বারে।
ভারা ছিল একদিন ভারা ছিল এক দিন পাশে
তাদের চোখের দৃষ্টি ধরা পড়ে সন্ধ্যার আকাশে।
এই নীল মৌন গানে তাদের স্পন্দন শোনা যায়
কেউ মাটি কেউ ছাই আলো হয়ে কেউ বা হারান্ন।
ভারা ছিলো একদিন। স্মৃতি খানি ক্ষীণতর হয়ে
উড়ে যায় ভেসে যায় মেঘের মিমার দিগ্ধে দিগ্ধে।
তবু তো যায় না ফাটায়, আনাদেহি-পানে বেগে থাকে

কিংবা থাকে না কেউ-ই, সময়ের শিল্পী শুধু আঁকে
শিশুর গভীর মায়া, সায়াক্বেব নীল ছায়াক্সানি
কখনো রঙীন পটে ছবি হয় মুছে যায় জানি।

আমি ক্লান্ত অভাজন ধীরে ধীরে চলি ঘরে ফিরে
মনের দেয়ালে আঁকি অসংখ্য মুখের ছবি চোখ দিয়ে চিরে।
স্মৃতির ভাঙারে শুধু পুরু হয়ে ধুলো জন্ম থাকে
সেখানে হারাই পথ, চলেছে হাজার রথ, খুঁজি তবু কাকে ?

প্রথম পৃথিবীর পর

আমাদের প্রথম-পৃথিবী-পথে চল যাই ফিরে।
চূর্ণ চাঁদে গড়া পথ হেমন্তের হলুদের তীরে
মাঝে মাঝে পদশব্দ স্মৃতির গুহায়।
ফিরে চলো অসহায়
সময়কে মুখোমুখি রেখে
দিনান্তের ক্লান্ত পথে বিকেলের সূর্যালোক মেখে
যাযাবর স্মৃতি নিয়ে। কত কাল পরে হয় গেলো

গানের সুরের মতো হৃদয়ের কলোচ্ছ্বাসে। আবার হারালো
তস্মান্নান বিকেলের শেষ চিহ্ন। অন্ধকারে একা—
চূর্ণ চাঁদে গড়া পথ। শস্য ক্ষেত, হলুদের রেখা।

তির্থক বর্ষার মতো তারি কথা ফিরে-ফিরে আসে
রক্তের সোনালী আশ্বাসে।
পাহাড়ের সারি বুঝি তরঙ্গের উচ্ছ্বাসের মতো
খুলে দেবে পথ এক দুনিবার ইচ্ছাকে অন্তত।

হুঁপ্ৰেম যুগে যুগে

জনতার মাঝে মিশে তারি কথা মনে-মনে বলি
ছেঁড়া জামা, রক্ত মুখ, হতাশায় ক্ষণেক চঞ্চলি
নীলাভ অতল এক পাতালের স্নিগ্ধ অন্ধকারে
মৃত্যুর গভীর স্বাদে খুঁজে নেবে শেষবার তোমারে-আমারে ।

আজ যদি গান শুনি বিদায়ের মতন করণ,
যদি জাগে হৃদয়ের সুগভীর প্রদেশে তরুণ
সূর্যের চরণধ্বনি ;
থাকি যদি ঘনঘোর স্তব্ধ অন্ধকারে—
মহ্মাবীথির তীরে জেনো আমি বারবার চেয়েছি উদ্ধারে ।

আমার তির্যক পথে সময়কে মুখোমুখি রেখে
শিশিরের স্নিগ্ধতায় স্মৃতিচিহ্ন সঙ্গোপনে এঁকে
জেনো কিরে যাবো ।
মুহূর্তের এ-দেখার গান
তোমার আলোর বান হঠাৎ নিস্প্রাণ
অভ্রের মতন শুধু উঠে জ্বলজ্বলে
বেদনায় মৌনতায় যাবে মিশে কোন এক গভীর অতলে ।

তির্যক বর্ষার মতো তারি কথা মনে-মনে শুনি
কিরে আসে শীতের আত্মা-ভরা সমুদ্রের স্বেত পদধ্বনি ।



দেবীপ্রসাদ চট্টোপাধ্যায়

প্রেমিক

'The skull had a tongue in it
And it could sing once—

কোনো এক যুবকের চোখে একদিন দেখেছি
প্রমিথিয়ুসের আগুন নতুন পৃথিবী গড়বার
সে যখন তর্ক তুলেছে সমান জীবনের দাবিতে ।

তারপর গুনতে পাই
বিহারের কোনো এক নির্জন নগরে
সে এখন স্ত্রী-তনুর তারিকে মগ্ন ।
স্টোভ ধরায়
বাহবা দেয় ।
জীবনতরী বহে যেন মন্দাকিনী তালে ।

তাই বলি, চলো আমরাও যাই,
তুমি আর আমি,
বর্বর নগর পেছনে ফেলে
প্রেমনগরের খোলার ঘরে :
প্রেমেরি জোয়ারে ডাসাব দৌহারে ।

ইপ্সোম যুগে যুগে

অর্থের প্রসঙ্গ অবাস্তব
ভিজে গামছায় কাটাব উষ্ণ সন্ধ্যা ।
আর মহাকাল থমকে দেখবে
উদ্দাম মিলন আমাদের ।

বাঁধন খুলে দাও
দাও দাও দাও ॥



আহ্‌সান হাবিব

প্রেমের কবিতা

সুকণ্ঠা তোমার নাম ।

শুনেছো এ নাম কোনোদিন ?

কোথায় হৃদয় থেকে হৃদয়ের দিগন্তে বিলীন এই নাম ।

একথা কি শুনেছো বিস্মিত হয়ে কভু ?

এ নাম তোমার নয় তুমি এ নামের মেয়ে তবু ।

কোথাও সুকণ্ঠা নামে কোনো মেয়ে আছে কি না আছে জানা নেই

তবু নিত্য হৃদয়ের একেবারে কাছে

সুকণ্ঠা নামের মেয়ে দেখা দেয় ।

আর দেখা যায়

সে মেয়ে তোমার মত কথা কয় অপূর্ব ভাষায় !

এ নাম তোমার নয় ।

তবু তো এ নাম ধরে ডাকা

পরম আশ্চর্য সুখ ।

যেন কোনো নামের বলাকা

অন্ধকার বাতায়নে হানে স্নিগ্ধ পাথর আওয়াজ

আড়ালে হৃদয়-পদ্ম খোলে তার মগ্নতার ভাঁজ ।

হোক মিথ্যে এই নাম তবুতো মনের মত নাম ।

এ নামে তোমায় ডেকে পাওয়া যায় অশেষ বিশ্রাম ।

এ নামে তোমার চিন্তা সাড়া দেয় বাসনার মত ।

এ নামে তোমাকে দেখি বসন্তের কবিতার মত ।

প্রেম ঘুণে ঘুণে

সুকঠার এলোচুলে আরণ্যতা তোমার চুলের ।
বিষন্ন নয়নে তার তোমার নিমীল নয়নের
ঘুমের মতন প্রেম ।

হৃদয়ের সুগহনে তার
কথা কয় মৌন মৃক হৃদয়ের স্তব্ধতা তোমার ।

একথা কি জানো তুমি, সুকঠা শুনেছো কোনদিন ;
এ নাম হৃদয়ে কারো দ্যুতি হ'য়ে জ্বলে রাত্রিদিন ?
জানো কি কোথায় আনে এই নাম বহুতার আবেগ ?
শ্রান্ত অপরাহ্নে কোথা এই নাম শ্রাবণের মেঘ ?

এ নামে কান্নার শেষ অবসন্ন স্নায়ুতে আনার ।
এ নাম স্নেহের মত সকালের শান্ত নীলিমার
অশেষ বিস্তার যেন ।

এই নাম নতুন কিংগুক ।

এ নাম উন্মুক্ত করে তোমার পাখিব মত বুক ।



মনীন্দ্র রায়

কোনো-এক বিশেষ দিনের প্রার্থনা

এখানে ক্ষণেক

থামাও তোমার রথ, মহাকাল ! জীবনে অনেক

বেদনার বিস্ফোরণে ছত্রভঙ্গ হবে জানি পথ ;

পদাতিক মুহূর্তেরা পাবে না দুর্গের ছায়া নিশ্চিন্ত, বৃহৎ ;

ভগ্নমনোরথ, বহুবার হব পরাজিত

তোমার কুটিল চক্রে ; হব আবর্তিত

তোমার জটিল ছন্দে, উত্থানে পতনে কতবার !

বেদনার সেই ইতিহাস, সে তো আছে চিরকাল, চিরমুক্ত তোমার দ্বার ।

ক্ষণেক বিস্মৃত হও, ধীরে বও, হে কাল থামাও

তোমার ঝটিতিগতি তুরঙ্গের বেগ । যাও, হেথা দিয়ে যাও

মুহূর্তের উদ্ভাসিত পূর্ণ পরিচয় ।

হোক বিচ্ছুরিত ঘনাক্ষর রাত্রির ভালে প্রভাতের প্রসন্ন বিশ্বয়

ক্ষণতরে । জানি তার পর

ভৈঙে যাবে এ বিলাস, তারুণ্যের স্বপ্নাহত এই খেলাঘর

বৃহৎ সংসারে হবে লয় ; দিনগত ক্ষয় ।

তার আগে, যৌবনের এই অনুরাগে, এই ভয়-

ধরোথরো সংশয়ের সন্দেহের আগে

তোমার আবর্তঝঙ্কা যেন থামে ; জাগে

ক্ষণেক শ্রামলমনে বনছায়াপ্রেম ;

ধরণীর ধূলি যেন জলে ওঠে রাগরক্ত হেম

উদয়সমুদ্রতীরে, বালুকার শিরে শিরে, এই শুষ্ক হৃদয়ের কণায় কণায় ।

নামে যেন আশীর্বাদ পরিপূর্ণ হাত ।...

বারেক এখানে থামো । হে কাল, হে কৃপাহীন বেদনাপ্রপাত !

ভাঙো ভাঙো ঘন অবসাদ, মধুময় করো তনুমন ।

মধুগর্ভ এ মুহূর্তে প্রাণপদে ফোটে যেন জ্যোতির্ময় আমার ভুবন ॥



কিরণশঙ্কর সেনগুপ্ত

অনন্ত জিজ্ঞাসা

ছাদের উপরে রাত্রি জেগেছে কি তুমি কোনোদিন ?
ঠাণ্ডা শীতের রাত্রি—কনকনে, হিম,
অধরাতে একা-একা জেগেছে কি কোনো একদিন ?
প্রিয়া যদি না-ই থাকে পাশে,
সাময়িক বিচ্ছেদের লঘু অবকাশে
নিজেরে ঢালিয়া দিয়া মেঘেদের হাতে,
অপলকে কাটায়েছে তারাদের সাথে
কখনো কি কোনো একদিন ?...
নিঃসাড় পউষ রাত্রি—শীতল, তুহিন !

একরাশ অন্ধকারে আকাশের ঘরে
মেঘেরা জটলা করে,
জলজলে তারাদের বাঁক হাওয়ায় চেউয়ের মতো নড়ে !
আমার বুকের উপর কুয়াশা গলিয়া পড়ে ।
পউষের ঝরঝরে শীতের কুয়াশা,
হাওয়ায় কিসের হতাশা !.....

আমার প্রিয়ার বুকে এই মুখ রাখিয়াছি
কতোরাতে আমি কতো দিন ;
ফুলের ভিতরে বুঝ লুকায়েছে দুই মৌমাছি,
মৌমাছি ফুলেতে বিলীন !
কিন্তু ওই মেঘগুলি—
মাথার উপরে যারা চেউয়ের মতো নড়ে,

প্রেম ঘুণে ঘুণে

একবার বার হয় আরবার ফিরে যায় আকাশের ঘরে,
উহাদের তুলতুলে দেহ
কোনোদিন হাত দিয়ে ধরেছে কি কেহ ?
তুলতুলে তাহাদের দেহ
প্রিয়তার বুকের চেয়ে মনোরম :
হাঁসের পালকে গড়া ধবধবে যদি থাকে দেহ,
তার মতো মনোরম ।

আর ওই তারাগুলি ? উহাদের কথা,
উহাদের আলোড়ন, উহাদের ব্যথা
সে-কথা তো শুনিলে না আর ।
কী-ইবা আছে বলিবার !
ওই সব জ্বলজ্বলে তারাদের ঝাক
হাওয়ায় ঢেউয়ের মতো নড়ে ;
আমার দেহের উপর অযথা গলিয়া পড়ে !
নীতের শিশির বুঝি উহাদের লালসার রস,
জ্বলজ্বলে তারাগুলি একঝাঁক বিষণ্ণ সারস !

মাঝে মাঝে দেখ নাকি তুমি ?
ওইসব তারাদের কেহ কোনোদিন
কক্ষ ত্যজি তীব্রবেগে ছুটে চলে যান্ন,
কোথা যান্ন ? পলকেতে আকাশে বিলীন !
বন্ধে যদি জেগে থাকে অধর্ম্মত আশা,
অধর্ম্মাতে এই মোর অনন্ত জিজ্ঞাসা ।
নিয়্যে এসে তাহার উত্তর :
পৃথিবীতে প্রশ্ন এতো—কে দিবে উত্তর ।

আবুল হোসেন

শেহদীর জন্ম কবিতা

তোমাকে চাই তোমাকে চাই ওগো দুর্লভ বল্লভ আমার ।
রূপে নয় সাজে নয়, সায়্যাহুর অন্ধকারে অস্পষ্ট আধো আধো
পরিচয় স্বপ্নের মতো, রহস্যনিবিড় বসন্তের লাবণ্য বিলাসে
তৃপ্ত দেহ আকাশে মেলে পাখা, সে প্রণয় আমার তো নয় ।
তোমাকে জড়ানো বুকে নিবীড় আলি গনে, রোমাঞ্চিত
উত্তপ্ত জ্বনে জ্যোৎস্নাজ্বলা বোরখাহীন স্তব্ধ রাতে
গলে যাবে গলে যাবে থরথর কপোতী শরীর নিঃশ্বাসে নিঃশ্বাসে

প্রতি মুহূর্তে দেখেছি তোমাকে, দেইনি তাকে রূপক ; বলেছি
শেষ হ'ক শেষ হ'ক আভরণ, রঙিন কুহক আর বিচিত্রিত
তনিমা লেপন । জড় ক জড়াক পাকে পাকে, হে সুমধ্যমা,
গুরুভার নিত্যস্বর উদ্ধত নর্ম তোমাকে সমস্ত শরীর বেয়ে ।
রাত্রির দু'কূল ছাপিয়ে ছলছল লাল রক্তের বিহ্বল কল্লোল
তোমাকে ভাসিয়ে নিক দূরস্ত ঝড় দিক হতে দিগন্তরে ।
আমাকে ডুবিয়ে দিক ব্যাপ্তিহীন কালহীন তৃপ্তির অভল সাগরে ।
ঝরে যায় মরে যায় আঙুর দোলানো হাওয়ায় জড়ানো যৌবনের
প্রস্ফুটিত দিন দুঃসহ একাকীত্বে, নিদ্রাহীন দীর্ঘ রাত
বেদনায় বাসনায় বিহ্বল, আর সময়ের প্রাচীন পাহাড়
পিষে মারে সূক্ষ্মার প্রাণের সবুজ, স্মরণের সোজা পথে
নিঃসংগ দেউদার জেগী, শূণ্য বর্ণাঙ্কাল তাপ্তহীন বালু
তপ্ত হাওয়ায় ওড়ে আকাশমনে, জ্বলে যাই পুড়ে যাই
অসহ্য তাপে, ওগো দুর্লভ বল্লভ আমার তোমাকে চাই ।

জ্যোৎস্না যুগে যুগে

জীবনে তোমার টান জ্যোৎস্নার নিশ্চিত নির্মা জোয়ারে,
দিগন্ত প্রাবিত বানে দিশাহারা ছনয়তরঙ্গী আমার,
তৃষ্ণার্ত নিশায় শুনি অরণ্যকম্পিত ডাক শিরায় শিরায় ।
শিহরিত আমি কম্পিত আমি, বদ্বন্দ্বীন বিহ্বল যৌবন
ঘন অমুরাগে ফেটে পড়ে পড়ে পরম পরাগে তোমাকে ঘিরে ।
রাত্রির তিমির ছিঁড়ে, হে জ্যোৎস্না, এসো আমার শরীরে,
ওগো দুর্লভা বলভা আমার তোমাকে চাই তোমাকে চাই ।



গোলাম কুদ্দুস

অস্থি-মাংস-সংবাদ

অস্থি। বাতায়ন হ'তে আজ কেন হাতছানি ?
এখন অনেক কাজ আছে মহারাণী
অশ্রু কোনো দিন যদি দেখা হয় হবে।
রাক্ষাস প্রচণ্ড রোজ বোঝা অনুভবে ?
আমাদের শক্ত হাড়ে সূর্য ঝলক স্ন।
তোমার ননীর দেহ, রোজে গলে যায় !

মধ্যাহ্ন ফুটপাতে দাঁড়িয়ে দাঁড়িয়ে
অকস্মাৎ কাব্য এলো, শোনো মন দিয়ে।
হে অঞ্চল ঢাকা মাংস, হে ছায়াবাসিনি,
কেন জান তোমাদের সান্নিধ্য আসিনি
বহুদিন ? হাড়ে মাংসে বিকট বেহাগ
যেই বাজে আলিঙ্গনে, তপ্ত অনুরাগ
লুপ্ত হয়। প্রেমিক নথর ননৌ চোর !
'প্রতি অঙ্গ লাগি কান্দে প্রতি অঙ্গ মোর' !

মাংস। তুমি স্বপ্ন সমাচ্ছ দৃষ্টির আড়ালে
কত কণ্টকিত পথে চরণ বাড়ালে
কত ক্লান্ত অপরাহ্নে কত অন্ধকারে।
আমি একা একা ঘরে জানালার ধারে
আহারান্তে এসে শুনি কপোত কুজন।
আহা রে এমন ঘরে আমরা দু'জন
বুকে বুক চোখে চোখ হাতে রেখে হাত
কাটিয়ে দিতাম চিন্তাহীন দিনরাত !

হুঁপ্ৰোম হুণে হুণে

বল তুমি, এত কি সহজ পথ চলা ?
পথে যে গড়ায় যাবে এ-মাংসের দলা !
দক্ষিণ পঙ্কর হ'তে আদমের কালে
একখণ্ড অস্থি মাত্র কী এক খেলালে
আমার মেদের স্তূপে ফেলে দিলে ছুঁড়ে
সেই থেকে স্থির আছি মাথা খুঁড়ে খুঁড়ে ।

অস্থি । মেদভাঃশূন্য তব্বি হে স্তণ্যময়ী ।
অতনুর অন্ধ নৃত্য তুমি চিরঙ্করী,
নূর জড়ায়ে কাঁদে বহু ক্লান্ত হাত !
বহু জীবনের রিক্ত মৃত্যুর প্রপাত
পরভোজী তনুতটে যেন কল্লোলিত ।
প্রবাল দ্বীপের পুষ্প অস্থি সুরভিত ।
নিষ্পেষিত অস্থি বজ্র পল্লবিনী লতে ।
বিশীর্ণ ছায়ারা লুপ্ত নিরুদিষ্ট পথে ।

সচেতন অস্থিদল স্নিগ্ধ স্বর্গধামে
তোমাক বিচূর্ণ ক'রে সন্মুখ সংগ্রামে
উড়িয় গুঁড়িয় যাবে, ঝিল খণ্ড হ'তে
দীর্ঘ জীর্ণ অগ্নি মাহ ফুটবে আলোতে
অস্থি মাংসে এক হ'য়ে । আদমের দেনা
আমরা ব্যতিত আর কেউ গুধবে না ।



গোপাল ভৌমিক

মুহূর্ত-বিলাস

আবেগের মাটির প্রলোপ
মন থেকে খসে যদি
খসে যাক—
করি না আক্ষেপ :
বুদ্ধির ইম্পাত যদি
বাক্যমক্ করে সারাক্ষণ
ক্ষতি নাই—
যাক্ পুড়ে ঘুণ-ধরা বিবর্ণ এ মন

অনুভবে আবেগে উচ্ছ্রিত সময়
মুঠো মুঠো হল অপচয়
অপাত্রে অকালে :
তবু কই জয়টিকা তোমার কপালে !
একান্তে ঘরের কোনে
তুমি ছিলে বসে—
আনমনে সন্মোহ-রভসে :
সহসা আমার মনে আবেগের ঢেউ
কানায় কানায় হল জড়ো,
মুগ্ধ স্মৃথে জানালাম—

সুপ্ৰেম যুগে যুগে

‘এ বিশ্বে তোমার চেয়ে বড়
আর নেই কেউ—
এই কথা সত্য জেনো তুমি’—
দজনের স্পর্শসিক্ত আবেগের ভূমি ।

একটি মুহূর্ত শুধু—
উদ্দাম আবেগে স্তম্ভুর :
তারপর তুমি আমি
দুইজনে বহু বহু দূর ।
মাঝখানে জনতার উচ্চ ব্যবধান
মাথা তোলে ধীরে অতি ধীরে :
বুদ্ধির প্রথর সূর্য দেখি তেজীয়ান
আবেগ-ফেনায় কাঁপা সমুদ্রের শিরে ।



উমা দেবী

মুখরা

দরোজা তোমার খোলা রেখে। অ'জ রাত্রির শেষয'মে
পূবের আকাশে ভীকর মতন কাঁপলে ভোরের তারা
আবেশে যখন চোখের পাত'য় ঘন হ'য়ে ঘুম নামে
একটি প্রহর জেগে থেকে। তুমি না হয় নিদ্র'হারা !
আলো ও আঁধার জড়'জড়ি ক'রে এলে দক্ষিণে বামে
আমার জন্ত নামিও না হয় ক্ষণিক অশ্রুধারা ।
জানি জানি আমি দিনের জগতে এর উন্টোই ঘটে
হাসি খুশি ভরা ঢেউ লেগে ওঠে চিরকন্দন তটে ।

আর আমারও কন্দন জানি সে সময় হবে শেষ—
শেষ-রাত্রির শীতল বাতাসে আসবে দুচো'গ ব'ঁজে
জাগ্রতে যাকে পাইনে তাকেই টানবে স্বপ্ন বেশ
না ব'লতে নীল পদ্মের মালা আনবে তুমিই খুঁজে ।
ক্ষণিকের ছলে মিলবে হঠাৎ চিরন্তনের দেশ
চির-মিলনের রাখি-বন্ধন চির-চঞ্চল ভুজে ।

দেখেছ আজিকে কেমন আঁধার, নিবিড় আঁধার রাত—
লাল নীল আর সাদা তারাগুলি নেভে জলে বারে বারে,-
নরম ছোঁয়ার আবেশ বুলাক তোমার কঠিন হাত—
নিভানো থাকুক রাত্রির আলো দেয়ালের এক ধারে ।
দু-চোখে তোমার জড়াবে আঁধার পড়িতে পাবোনা ভাষা
এলো-মেলো কখু চুলগুলি শুধু কপালে লাগাবে ছোঁয়া

প্রেম যুগে যুগে

চটুল কুজন শুনিবনা আজ শুনিবার নাই আশা
আশুনের আলো নাই যদি আনো—এনোনা কথার ধোঁয়া।

শোনো প্রিয়তম কলহ আমার প্রেম-বন্দনের নহে—
অশ্রু করেও ভালোবাসো যদি সে নহেক অপরাধ,—
ভালোবাসো কম শুধু এইটুকু অন্তরমূল দহে
সকল বেদনা ভুলানো তাইতো আঁধারে ডোবার সাধ।
বুকের দুয়ারে মরিব আজিকে নির্মম বাহুপাশে
আরো ঘন হয়ে নামুক আঁধার অকুল নিশীথাকাশে।

এপারের শেষে বল প্রিয়তম ওপার আছে কি কোনো
ওপারেও নামে কান্নায় ভরা জমাট জ্যোৎস্না রাত ?—
এমনি ক'রেই চলে চিরদিন মেঘে মনে মন্থনও
চেয়ে চেয়ে শুধু জ্বালা করে শেষে বিনিদ্র আঁখিপাত !
ওপারের কথা থাক প্রিয়তম, এপারের কথা শোনো
এই আজকের শীতল-বাতাস-ঝিমানো বিজন ছাতে
শুধু আমাদের দুজনার কথা শুনতে চাও কি কোনো
জল ধরে-যাওয়া মেঘের ছোঁয়ায় বিকল জ্যোৎস্নারাত ?
এপারের কথা থাক প্রিয়তম, এপারের কথা থাক
এপারের কথা আজো কি ভাষায় হয়েছে কোথাও বলা ?
আকাশের থই পায়না মেঘেরা ভেসে যায় নির্বাক
আবুছা আলোর ইজিতে হায় চিরদিন শুধু চলা।
চেয়ে চেয়ে তাই জ্বালা করে শেষে বিনিদ্র আঁখিপাত
ঘন কান্নার মত লাগে যেন জমাট জ্যোৎস্নারাত।

আমার মনের অনেক কাহিনী যায়না জীবনে লেখা
জীবনের কথা পায়না মনের আশ্বাস স্বাক্ষর !—
দেহের তুষা ও মনের তুষায় বিরোধ-বক্র রেখা—
কুটিলপ্রসঙ্গ ইজিতে আজো মেলেনা সন্তুস্তর।

তাইতো যখন জানাও সহজে দেহের স্পষ্ট দাবী -
মনের তন্ত্রে কারা হানে যেন আঘাত পরস্পর,—
চোখের আড়ালে পাই নির্জনে যখন তোমায় ভাবি—
খুলায় জড়ানো কামনা-মণির বেদনা নিরন্তর ।...

...এযুগে মোদের দেখা যে হ'য়েছে এইতো ভাগ্য ঢের—
বিষবন্ধনে পেতাম যদিবা আরোও অনেক কাছে—
তাহ'লেও জানি এ অন্বেষণের মিটতো না আজো জের—
সৃষ্টির খার কোন দিকে হায় কে জানে সত্য আছে !
চোখ বুঁজে কারা নাগাল পেয়েছে জীবনের তথ্যের ?
আলো এ যুগের অঁধারের মত আমাদের ঘেরিয়াছে ।

দুঃস্বপ্নের অঙ্গুরীর কথা জানো নিশ্চয়—
সেই যার ফলে হ'ল অবশেষে মিলন সংঘটন ?
আমাদেরো যেন ঐ জাতীয়ই ছিল কিছু মনে হয়—
হারিয়ে যা আজ ভোগ করি শুধু নিত্যই অনটন ।
তাইতো এখনো সহিতে পারি না স্বপ্ন পতন ক্রটি—
বারে বারে ভাবি 'একি সেই নয় ? তবে কি করেছি ভুল ?'
সময় যাহার কেটে যায় শুধু যোগাতে দিনের রুটি—
ভাগ্যের ফেরে তারো চাই বুঝি সুরা ও গোলাপ-ফুল ।

অনেক সময় কেটে গেছে, আর মিথ্যা কাটানো কাল
আজ হ'তে শুরু হোক আমাদের অঙ্গুরী-সন্ধান,
পাই যদি ভালো, না পেলেও আর বহিবনা জঞ্জাল
এইখানে এই মাটির উপরে রচিব বাসস্থান ।

কালের চক্র ঘুরে চ'লে যায় আমরা পিছনে থাকি
যা পাইনা সেতো পাইনা কখনো যা পাই তাতেও ফাঁকি ।

একদা যখন আমরা দুজন হিলাম স্বাধীনচেতা—
আমাদের মাঝে ছিলনা তখন এতটুকু ব্যবধান

হুগো যুগে যুগে

মন্দ ছিল জীবনপন্থা, কাজেই হারা ও জেতা—
প্রলুব্ধ কভু করেনি মোদের অনন্ত অভিযান।
তারপরে সেকি ক্লাস্তিই এলো ? অথবা লীলাচ্ছলে
এখানে ওখানে রচিলাম মোরা একটি কি দুটি বাধা,
স্বপ্নেও কভু ভাবিনি তখন একদা অশ্রুজলে
এমন তিক্ত সমাপ্তি পাবে মধুর সাধের কাঁদা।

গর্ভ-শয়নে ভ্রূণ হয়েছিল একান্ত অসহায়—
তারি যৌবনে আপন মৃত্যু গণিছে মায়ের বুক,
আমরা যাদের জন্ম দিলাম সেই অবশেষে হয়—
স্বত-বিবর্ধ-কায় আমাদেরি পেষনেও উন্মুখ।
আবার ফিরিয়া যাবো কি আমরা সেই পুরাতন পথে
ক্ষেপার পরশ-পাথর খুঁজিয়া মিলিবে কি মনোরথে ?

নেমেছে প্রভাত নয়নে আমার ভোরের সোনালী রোদে—
রাত্রি এখন বিবশ...তুমিও জেগেছ কি প্রিয়তম ?
উন্মুখুন্মু চুল—শিথিল পিরাম,—স্বপ্নের সম্পদে
চোখের পাতায় ঘুমায় কি আজো কামনার উদগম ?
বহুকাল আগে কবে যে আঁধার লেগেছিল মনোরম—
অন্ধকারের নিবিড়-রন্ধ্রে সাবধানে পথ চ'লে,—
জীবনের সাথে ছিল হৃদয়ের নিষ্ঠুর উত্তম
সংসার থেকে কেড়েছি তোমায় শুধু আপনার ব'লে।

নেমেছে প্রভাত—কত পথ ঘুরে এসেছে প্রভাত আজ
তোমার চোখের তারায় নরম হ'য়েছে প্রথর আলো,
ভীড়ের মধ্যে এবার সহজে ধরেছি কঠিন হাত—
সবার সঙ্গে ভালবেসে আরো লেগেছে তোমায় ভালো।
একমুঠি আলো ভোরের ক'রেছে—আকাশকে মনোরম,
—রাত্রি এখন বিবশ তুমি কি জেগে আছ প্রিয়তম ?

হৃদয়ে যুগে যুগে

আরো কিছু কথা বাকি র'য়ে গেছে—শুনে কি প্রিয়তম ?

আরো কিছু কথা বলার প্রয়াস ক'রেছি অনেক দিন...

শোনার নেশায় নিশীথ আকাশ হয়েছিল মনোরম

বিফল আশায় চাঁদের জোছনা ক্রমশ হ'য়েছে ক্ষীণ ।

আরো কিছু কথা আরো কিছু সুর, কিছু রঙ অল্পপম—

এত ভঙ্গুর কথা...ছবি গান...তুমি এত উদাসীন !—

সমুদ্র-তলে কত অজস্র মণি মাণিক্য আছে

তীরে-তীরে খুঁজে শঙ্খ-শামুক মেলে শুধু দূরে কাছে ।

আরো কিছু কথা বাকি র'য়ে গেছে শুনে কি প্রিয়তম ?

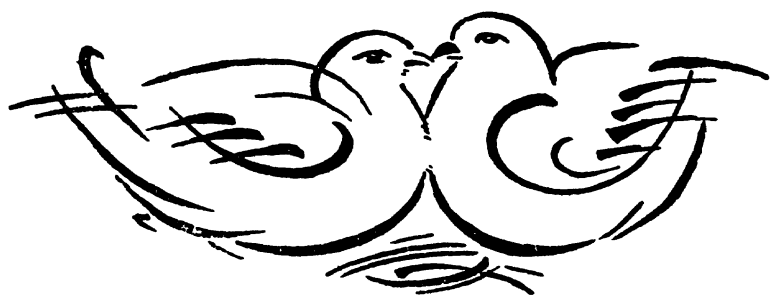
শুনে কি চাও বুকের তলায় কারা আছে জাগ্রত ?

অস্তর-তল দগ্ধ করেছে অদৃষ্ট নির্মম—

গহন গুহায় কামনা-মণির ব'হু-শিখার ক্ষত ।

যত আনি কথা গীতি ও ছবির বিচিত্র উত্তম

অবসানে শুধু ভাসে জীবনের মরু-মরীচিকা তত !—



ফরুখ আহমদ

প্রতীক্ষমানা

ভোর হ'য়ে এল পাণ্ডুর বিভা
রাতের তারায়'
বনাস্তরের গোলাবের বাস
হাওয়ার মিলায়,
ঘুম ভেঙে গেল নতুন কুঁড়ির
দূর গুলবাগে,
জুলেখার চোখে কোমল ঘুমের
কম্পন জাগে ;
অতন্দ্র তার রাত কেটে গেছে
স্মরি প্রিয়মুখ
এখনো আবেশ-কম্পিত বুক
আঁখি উৎসুক ॥
এখনো রাতের তারায় তারায়
জ্বালা অধীরতা,
মুখর বাতাস কানে কানে তার
বলে কোটি কথা,
ব্যর্থ বিরহ রাত হ'ল তার
কণ্টক বন
কামনার বিষে নীল হ'য়ে এল
স্নান যৌবন ॥
কোদ্ জিলদানখানায় একাকী
প্রিয়তম তার

প্রেম যুগে যুগে

পাথরের মাঝে কাটার সে নিরে
শৃঙ্খলভার
জুলেখার মনে সেই শিকলের
ঝড় এস লাগে
জুলেখার মনে সেই পাথরের
ঘন দাগ জাগে ॥
যে দাহনে জ্বলি লোবান ছড়ায়
শুগন্ধভার
যে দাহনে জ্বলি কামনা ছড়ায়
রোশ্‌নি হীরার,
সে দাহনে হ'ল জুলেখার প্রেম
সুরভি অনল,—
সংশয়াকুল আকাশে 'জোহ'রা'
তার অচপল
স্থির ছাতি ফেলে; ক্লান্ত তবুও
তমু জুলেখার
গোলাবের মত প্রতীক্ষা করে
আগমন কার !
কোন সূর্যের আশাপথ চেয়ে
কুঁড়ি উন্মুখ
ভোরের আলোক-বার্ণাভে চায়
ভরে নিতে বুক,
শিশিরের গত উপাধানে ঝরে
শোকাশ্র তার
নৈশ বাতাস কেঁদে ওঠে শোকে
স্বয়ম্বরার ॥
দূর মাজারের প্রশান্তি ভাঙে
তীব্র ব্যথায় ।

প্রেম যুগে যুগে

রুদ্ধ আবেগে ফুলে ওঠে পানি

নীল দরিয়ায়,

শিহরে ধরনী তার বেদনায়

ক্রন্দনে তার

রাত্রি শেষের উতলা হাওয়ায়

ভাসে হাহাকার ॥

নিশাবসানের মিনারে কখন

আরক্ত আজ

মুয়াজ্জিনের কণ্ঠ চিরিয়া

ওঠে আওয়াজ ॥

এমনি করিয়া কাটে জুলেখার প্রতিটি রাত

এমনি করিয়া রাত শেষ হয় জোলায়খার,

দিনের দুরাশা রাত্রির ক্ষীণ চেরাগে তার,

দুলে দুলে উঠে কম্পিত বৃকে বেদনাভার,

প্রভাতের শিখা করে সে তিমিরে রশ্মিপাত,

শিকারী সূর্য রাঙায়ে যায় সে বিরহ রাত

ক্লান্ত-শীর্ণ জুলেখা তখন ঘুমায়ে পড়ে

স্বপ্ন দেখে সে রক্ত উষার রাঙা আশায় :

স্বর্গের মত আসিবে এবার দায়িত তার ॥



বীরেন্দ্র চট্টোপাধ্যায়

অমর আশা

ক্ষমা করো অনুপমা ! তোমারে বুছিয়াছি ন্ত ভুল ;
অলস মস্তিষ্কে ছিলো বুদ্ধিদীপ্ত বাক্যেরা নির্বাক !
অভাবে মরিচা পড়ে হৃদয়ের তীক্ষ্ণ ছুরিকায় ।...
অতীতের কথা মোর অতীতেই তাই ফিরে যাক ।
আজ তুমি ফিরে এসো, মুখোমুখী বসি আরবার,
ভালো করে ও নয়নে এ ক্ষুধার্ত নয়ন মেলাই ।
পুরাতন সব দ্বন্দ্ব, মানসিক মিথ্যা আভরণ
পরিত্যক্ত পড়ে থাক । চলো মোরা ঘরে ফিরে যাই ।

যে প্রেম ঘুমায়েছিলো ঈর্ষা-অন্ধ-মৌনবক্রতায়
তাহারে পৌরুষ দানো,—মৃত্যুত্তীর্ণ মুক্তির কসল !
চিত্ত তার মরুচারী অগ্নিগর্ভ তপ্ত লাভাশ্রোত,
তোমার পরশে হোক উজ্জীবন-সিক্ত সুনির্মল !

অশান্ত এ নগরীর ছিন্নপথে আমরা অমর
চিরদিন রহিব না জীর্ণদেহ, ভিন্ন যাযাবর ।



সানাউল হক

অনাগত

পায়রার পুচ্ছের মতো বাম চোখ নাচে :

অনাগত যেই জন,

যে অতিথি প্রতিক্রিয়া আছে

শতাব্দীর নিমেষের

শুভক্ষণ মাগি’

সে আসিবে, তাই ।

যে বাণী লিখিত হয় সোনার আখরে

মানুষের সভ্যতার গুচি ইতিহাসে,

সেই বাণী কণ্ঠে যার—

যার জন্ম মাগি’

মহাকাল-বক্ষ ক্ষীণমান

সে আসিবে কবে, তাই

মনে মোর জাগে কথাঙ্কুর ।

পৃথিবীর কবিদের স্বপ্ন-ছোয়া সাগরের

নীল নীরে স্নাত,

প্রেমের চুষন-পুষ্টি

প্রথম আশ্বাদে আবুস্মান,

বুভুক্ষার নগ্ন আবেদনে,

শতলক্ষ মানুষের বেদনার, সাধনার মূর্ত হাহারবে

মহাকাল-বক্ষ থেকে উৎসারিত হবে, বহু,

প্রেম যুগে যুগে

যে শাশত সাকী,
ভঙ্গুর এ পৃথিবীতে যে ঢালিবে
অমৃতের সুরা,
নতুন সূর্যের সাথে
প্রকাশিবে যেই মুখচ্ছবি—জীবন-সুন্দর :
তার শুভ্র আননের বাসনা অপার
তার দীপ্ত ললাটের রহস্যের উদ্ঘাটন লাগি
আজ মোর নয়ন আকুল ॥



শুদ্ধসত্ত্ব বসু

একটি রোমান্টিক কবিতা

চলো মোরা উড়ে চলি শুভ্রপাখা বকের মতন,
সমুদ্রের আধোভাঙা ঢেউয়ের উপর ;
রৌদ্রের আরক্ত দীপ্তি,—তারি দাহে অবসন্ন মোরা,—
বাস্তবের রূঢ় ঘাতে নিয়ত জর্জর ।
সোনালী গোধূলি আসে, রৌদ্রদগ্ধ তারার ইশারা :
আমরা হেথায় নাই, তুমি আমি সাদা পাখী দুটি,
বহু উর্ধ্বে উড়ে চলি—অনন্ত আকাশ !

হাসনুহেনারা হেথা মরে গেছে বোবা বেদনায়,
কলাপীর সুর আজ হলো অবসান,
আকাশের নীল তারা আমাদের হাতছানি দেয়,
সমুদ্রের আধোভাঙা তরঙ্গের গান !
ক্লৈদান্ত ধূলি বাষ্প—আমাদের রুদ্ধশ্বাস হলো
বন্দীবায়ু অহরহ করে আর্তনাদ ;
আশায় আবেশ নাই,—যন্ত্রবদ্ধ মানুষের প্রাণ ;
বাঁচার আনন্দ হেথা বিকৃত বিশ্বাদ !

আমরা চলিলা যাই, চলো যাই নূতন জগতে,
তুমি আমি সচঞ্চল দুটি সাদা পাখী,
যেখানে দীনতা নাই, নাই কোনো বেদনার মায়া,
যেথা শুধু চিরন্তন সুরা আর সাকী !
অনন্ত আকাশ তলে, স্বর্ণোজ্জ্বল তারকার দেশে
সময়ের গতি যেথা হয়েছে নিখর,
চলো সেথা উড়ে যাই প্রসারিয়া স্বর্ণবর্ণ ডানা
সমুদ্রের আধোভাঙা ঢেউয়ের উপর ।



শান্তিরঞ্জন বন্দ্যোপাধ্যায়

চোখ

তোমার চোখেতে আজ নীলিমার কই সেই মায়ার
যার মাঝে ধরা দিত নীল সমুদ্র ও আকাশের
উদার বিস্তৃতি ক্রণাস্র বিস্ময় কতো সম্ভাবনা
সুপ্ত ছিলো, উন্মুখ আগ্রহে কোনো নব পৃথিবীর
প্রতীক্ষাজাগর চোখ - স্বপ্নদর্শী বিপ্লবী কবির
অনুচ্চার কবিতার মতো ? কত উধাও কল্পনা
বন্দী ছিলো তোমার ও-দুটি চোখে, ও-দুটি চোখের
ছোঁয়ায় জাগরিত হ'তো কতো প্রেতান্বিত ছায়া !

আজ দেখি দুটি চোখ শুধু স্থূল দুটি অবস্থিতি :
ঘুমন্ত গোধূলি এক প্রতিক্রিত অনন্ত রাত্রির,
মৃত পীত দুটি চোখে জাগে শুধু বিষণ্ণ বিস্মৃতি
স্বপ্নময় একদার, দুঃস্বপ্ন আজ করে ভীড়
তির্থক ভুরুর মাঝে স্নান দুটি মণির ছায়ায়,
তোমার চোখেতে আজ মিশরের মমোরা ঘুমায় ।

তোমাকে জাগাতে পারি, যদি বলো, হে মাটির মেয়ে !
আমার চোখেতে আছে জাগৃতির সেই স্পর্শমণি,
যদি তার ছোঁয়া লাগে একবার, স্তম্ভিত বিস্ময়ে
বৈদ্যুতির অনুভূতি পাবে তব মুমূর্ষু ধমনী ।

তুমি কি জাগতে চাও ? হাতে তবে রাখো দুটি হাত,
চোখে চোখ মেলে দাও ; বিদ্যুতের জাগ্রক সংঘাত !



রামেন্দ্র দেশমুখ্য

হৃদয়

হৃদয়ের জলে-মগ্ন এক মেয়ে রক্তে চিঠি লেখে,
এক বাঁক ছোট মাছ মানসিক কথাগুলো নড়ে,
প্রেমের কোমল সূর্য মেয়েটির সব মেধা ঢেকে
একস্থানে স্থির হয়ে থরোথরো রামধনু গড়ে।
সেই ক'টি ছোট মাছ আর আঁশ এবং সন্নিল।

এমনি তো কত চিঠি আর কত শপথ-দলিল
পৃথিবীতে লেখা হলো আমাদের বয়সের আগে।
আমাদের মাতামহী কত প্রেমিকার পুরোভাগে
শুধু লিপিমালা শিখে হয়ত' বা এসে দাঁড়ালেন।

বাঁকা পথে সন্ধ্যা হলে কাছাকাছি কোথাও ছিলেন।
বন্ধ্য জমি। অন্ধকার। জোনাকির পরিচিত পথ।
সেইখানে শুষ্ক ঘাসে আলো জ্বলে অনেক শপথ—
আমাদের মাতামহ প্রেমের তরুণ মহাজন।

আখর জন্মের আগে শুধু ছিল মুখে আলাপন।
আমরা যাদের গোত্র পূর্বতন তাদের অনেক,
কোন কেউ আর্য-বংশী মুখ কোন অনার্য্য এক—
অক্ষুট কাকলি দিয়ে রচা হল মিলন মল্লার।

হুঁপ্ৰেম ঘুণে ঘুণে

ভারো আগে একদিন পৃথিবীতে পাতার বাহার ।
মাত্র-স্নাতা বসুন্ধরা আর কোন পাহাড়ের ভাজ,
পীত সূর্য, শ্বেত চাঁদ, মাহুঘের সন্তর্পণে চলা,
অরণ্যের গন্ধ মেখে অনাবৃত শান্ত রমণীকে
পুরুষের কাছে এসে শুধু চোখে হৃদয়ে বলা ।

দেহদণ্ডে হে হৃদয়, প্রস্ফুটিত যৌবন-শিশিরে :
তোমার আদর হলো কামনার বিহংগীর ঘরে ।
একদিন শেষ রাত্রে শিরীষের শিবির চূড়ায়
বিহংগী বহন করে শূণ্যে যদি তোমাতে ওড়ায়,
ভোর বেলা ভুলে যাবে প্রথমার পূর্বাপর-শ্রীতি,
দ্বিতীয় নতুন গন্ধে মুগ্ধ হবে লুক্ক প্রজাপতি ।



মৃণালকান্তি দাস

প্রেমিকের প্রার্থনা

একখানি চাঁদ জানালায় জ্বলে ।
ছোট দু'টি তারা আকাশ তলে,
সারারাত ধরে কী কথা বলে ।
চোখে ঘুম নেই আমরা দু'জন :
নিশার পৃথিবী নিথর এখন ।

ঢাখো, ভরে গেছে বন জ্যোৎস্নায়
স্নিগ্ধ বাতাস সুরভি ছড়ায়,
মৃদু মালতীর পরশ বুলায় ।
হে ভীৰু আমার, হৃদয় দাও,
হৃদয় দাও, হৃদয় নাও ।
একখানি চাঁদ জানালায় জ্বলে,
ঐ দু'টি তারা কি কথা বলে !
আমরাও চল জীবন জুড়াই,
সারারাত ধরে স্বপন কুড়াই ।



কল্যাণী মুখোপাধ্যায়

পরাজিতা

সুন্দরী আমি, সে-কথা ত প্রিয়, শুনেছি অনেকবার
আমার কোমল করপল্লবে নিহিত পুষ্পসার ।
জীবনের শিখা নয়নে আমার, মরণ ঠোঁটের কোণে
ঘন কালো চুল জড়ায় তোমারে নিবিড় সম্মোহনে ।
আমার পরশে মাটি ফুটে ওঠে ফুল হয়ে রাশি রাশি,
আমার স্তব্ধ কথাটি তোমার হৃদয়ে বাজায় বাঁশি ।
সব জানি, প্রিয়, তবু এও জানি এ মোহের শেষ আছে,
স্বপ্ন ভাঙবে, খেলা শেষ হবে, তখনো কি র'বে কাছে ?
আমারে তো তুমি ভালবাস নাই, এ-দেহে বেসেছ ভালো
দেহের তৃষ্ণা মিটিবে যখনি, সব আলো হবে কালো ।
তবে তাই হোক ! ক্ষণিকের খেলা, সে-ও তো মিথ্যা নয়,
রঙিন ক্ষণিকে দেখি বসে-বসে অসীমের অভিনয় ।
চিহ্ন না থাক তোমার প্রেমের শূন্য রাত্রিশেষে,
তবু বলো আজ ভালবাসিয়াছ, বলো, বলো কাছে এসে ।
আমারে অন্ধ করে দাও তব বহ্যার মত প্রেমে,
এ-দেহ ছাড়িয়ে অকূল আকাশ জীবনে আশ্রুক নেমে ।
দূর হোক যত দ্বিধা ভয় আর ঘুচে যাক সংশয়
তোমার প্রাণের পূর্ণ পরশে হোক মম পরাজয় ।

